अपने-अपने रास्ते

प्रेम सिन्हा

© लेखक

प्रकाशक : आदर्श प्रकाशन मन्दिर
दाऊजी रोड, बीकानेर (राज०)

संस्करण : 1986

मूल्य : पचास रुपये मात्र

मुद्रक : एस० एन० प्रिंटर्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

APNE-APNE RASTE (Novel) by Prem Sinha Rs. 50.00

प्रकाशक की ओर से

आदर्श प्रकाशन मन्दिर को इस बात का गर्व है कि उसने अब तक जितने भी प्रकाशन दिए है, वे सभी स्वस्थ परम्परा में गिने गए है। हमें प्रसन्नता है कि आज सेक्स सम्बन्धी अधिकांश प्रकाशन होने के बावजूद भी एक ऐसा पाठक वर्ग है जो स्तर की पुस्तकों को ही पढना पसन्द करते हैं। ऐसे ही पाठकों द्वारा हमारे प्रकाशन की जो सराहना की गई है व सहयोग दिया गया है उसके लिए हम उनके आभारी हैं।

आदर्श प्रकाशन मन्दिर की स्थापना एक उद्देश्य को लेकर की गई थी और लक्ष्य का स्वस्थ साहित्य का प्रकाशन जिससे राष्ट्रीय जागृति हो और शिक्षा के माध्यम से नए समाज निर्माण में सहयोग मिले।

प्रकाशन मन्दिर ने जहां एक ओर शैक्षणिक पुस्तकों का प्रकाशन किया है वही दूसरी ओर प्रदेश की प्रतिभाओं को भी प्रकाश में लाने का प्रयास किया है।

'अपने अपने रास्ते' के लेखक श्री प्रेम सिन्हा है जो एक अच्छे पत्रकार, वर्तमान में शिक्षाविद एवं प्रशासक भी है।

प्रस्तुत उपन्यास में आज की विषय परिस्थितियों में संघर्षों से जूझता हुआ व्यक्ति ईमानदारी के साथ किस प्रकार आगे बढ़ सकता है व स्वाभिमान के साथ अपने व्यक्तित्व को बनाए रख

सकता है इसका समस्या मूलक के रूप में नहीं समाधानात्मक दृष्टिकोण से चित्रित किया गया है।

आशा है पाठकों को अपने-अपने रास्ते उपन्यास भी रुचिकर लगेगा इसी विश्वास के साथ यह नया प्रकाशन प्रस्तुत है।

— प्रकाशक

मेरी ओर से

मेरा यह उपन्यास "अपने-अपने रास्ते" आपके हाथ में है। इस उपन्यास को सामाजिक, मनोवैज्ञानिक अथवा रोमान्टिक कहूं। इसका निर्णय मैं स्वयं भी नहीं कर सकता। यह उपन्यास मैंने किसी वाद-विवाद को लेकर नहीं लिखा है। पात्र मेरे चारों तरफ दिल्ली प्रवास के दौरान सन् 1950 से 1954 के बीच में रहे। मैंने जैसा उन्हें देखा, समझा व अनुभव किया वैसा ही उनको आपके सम्मुख प्रस्तुत कर रहा हूं। मेरे पात्र आदर्शवादी नहीं हैं, वे एक साधारण स्तर के प्राणी हैं जिनमें बुराइयां भी हैं व अच्छाइयां भी हैं। उनके जीवन में उतार है तो चढ़ाव भी है। वे कभी उचित कर्म करते हैं तो कभी अनुचित कर्म भी करते हैं। मैंने उन्हें कभी तराशने का प्रयास नहीं किया है। मैं कोई मूर्तिकार या चित्रकार नहीं, मैं तो एक कलम का सिपाही हूं, जो देखा वह लिखा—शेष निर्णय आपके हाथ में है।

हेम सिन्हा

एक

—रम्मू, यह क्या !

—विवश हूं, बड़े बाबू !

—रम्मू, तुम तो विद्यालय के भविष्य हो, तुम्हारे ऊपर कितने अध्यापकों की आशायें हैं कि इस बार फिर तुम प्रांत में प्रथम आकर विद्यालय का यश चरम सीमा तक पहुंचाओगे।— बड़े बाबू ने अपनी ऐनक को तनिक नीचे करते हुए कहा।

—पर बड़े बाबू ! इस संसार में प्रत्येक मनुष्य नियति का दास है। मेरे हृदय में इच्छा नहीं कि मैं आगे पढ़ूं? मेरी क्या आकांक्षा नहीं कि उच्च शिक्षा प्राप्त करके उच्च पद प्राप्त करूं? पर नियति पर कौन विजय प्राप्त कर सका है? आज बाबू जी होते तो क्या ये दिन भी देखने को मिलते? रम्मू की आंखें डबडबा गईं।

—क्या हुआ तुम्हारे बाबूजी को, अभी सप्ताह पूर्व तो मैंने देखा था।

—दैवात् हृदय गति रुक गई। उनको चिन्ता रूपी नागिन ने डस लिया। सदा बहन की शादी के विषय में विचारते रहते थे। इधर कई दिनों से तो उन्होंने बोलना और खाना-पीना भी कम कर दिया था—रम्मू ने अपने करों से अपनी आंखों के आंसू पोंछते हुए कहा।

—बेटा, साहस रखो, धीरज धरो। इस प्रकार अधीर होने से काम नहीं चलेगा। मैं सुमेन्द्र बाबू को अच्छी तरह जानता हूं। वे पेशकार रहे, पर उन्होंने एक पैसा ऊपर का न लिया। जितना वेतन मिला उसी पर सन्तोष किया। लोग न जाने ऊपरी कितना कमाते हैं। सत्य के पुजारी थे ! वे देवता थे, देवता।—बड़े बाबू गम्भीर स्वर में बोले।

—रमेन्द्र, अब क्या करने का विचार है ?—बराबर बैठे एक बाबू ने पूछा ।

—छोटे बाबू, कर ही क्या सकता हूं । मुझ पर दो भाई और एक बहन का बोझा है । नौकरी के अतिरिक्त कर ही क्या सकता हूं । कहीं स्थान मिल जायेगा, डिप्टी साहब अत्यन्त दयालु हैं ।

—इतनी छोटी आयु में नौकरी !—छोटे बाबू ने कहा । रमेन्द्र फफक कर रो पड़ा । वेदना द्रवित हो सरिता बन वह उठी । बड़े बाबू अपनी कुर्सी छोड़कर उठ खड़े हुए और रमेन्द्र को अपने सीने से लगाकर बोले—तुम अपने कुटुम्ब के बड़े होकर इस प्रकार रोओगे तो छोटे-छोटे भाई, मां और बहन को कौन धीरज बधायेगा । बेटा, ऐसे अवसर पर दो-तीन बातें काम की बताना चाहता हूं जो आज इतनी आयु के पश्चात् मैं ज्ञात कर पाया हूं ।

—क्या बड़े बाबू ?—रमेन्द्र को ऐसा लगा जैसे डूबते को कोई अवलम्ब मिल गया ।

—पहली यह कि ईश्वर में दृढ़ विश्वास रखना । दूसरी, सत्य के पथ से विचलित न होना । तीसरी यह है बेटा, कि निर्धनता से विचलित न होना, उसका सामना साहस से करना, यही मनुष्य की सफलता की कुंजी है ।

—बड़े बाबू ! आपकी यह तीनों बातें सदा मेरे मानस में रहेंगी ।—रमेन्द्र पांव छूने झुका ।

—अरे ! यह क्या करते हो । बड़े बाबू ने उसे सीने से लगाकर कहा—मैं तुम्हारा चरित्र-प्रमाणपत्र कल घर तैयार करवाकर भिजवा दूंगा ।

रमेन्द्र ने उत्तर न दिया केवल उसने अपने दोनों कर जोड़ दिये ।

रमेन्द्र के मुख पर जो दीनता के भाव थे उन्होंने बड़े बाबू के हृदय पर गहरा आघात किया । आज के दिन ने उनके सामने कुछ ही मास पुराना घाव ताजा कर दिया । आज उनके सामने अपने पुत्र का दृश्य आ गया जबकि उन्हें अपनी आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण अपने पुत्र की पढ़ाई दसवें [illegible] परीक्षा [illegible] बन्द करवानी पड़ी । यद्यपि उनका पुत्र

रमेन्द्र के समान प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ था, परन्तु पारिवारिक परिस्थिति अध्ययन के प्रतिकूल थी। उनका पुत्र यद्यपि एक भोला बालक था, फिर भी समझदार था। उन्हे रमेन्द्र के मुख पर अपनी आकांक्षा दबाने के भाव दिखे जिसने उनके हृदय-पटल पर के उस विकृत चित्र को पुनः सजीव कर उनकी उद्भावनाओं को उद्दीप्त कर दिया। जिसको वह भूल जाना चाहते थे आज फिर वह वेदना पुनः जाग्रत हो उठी।

उनकी कितनी इच्छा थी कि उनका पुत्र जो होनहार बिरवा के लहराते पात के समान सदा कक्षा में सर्वोच्च ही रहा, उसको आगे पढ़ायें, उसको उच्च पद दिलवायें। उनको उन दिनों का स्मरण है जबकि उनका पुत्र छोटी कक्षा में प्रथम उत्तीर्ण होकर आता तब वह उसे प्रफुल्लित होकर हृदय से लगा लेते, उनको जीवन के अन्धकार में एक प्रज्वलित दीपक-सा दिखाई देता। वह उससे पूछते कि बेटा, तू आगे जाकर क्या बनेगा? तब वह कहता—डॉक्टर। वह क्षण भर के लिए भविष्य के स्वप्न में डूब जाते, जबकि उनका पुत्र डॉक्टर बनेगा। उस समय वह अपनी नौकरी को जिसमें दिन भर के परिश्रम के पश्चात् माह के अन्त में 90 रुपये मिलते हैं, उसे छोड़ देंगे। फिर उनका पुत्र ही इस योग्य हो जायेगा कि उनको यह परिश्रम न करने देगा। क्षण भर इन स्वप्नों में उनको कितना सुख और कितना आनन्द मिलता।

भविष्य का किसे पता था कि उनकी परिस्थिति सुधरने के स्थान पर बिगड़ती ही जायेगी, इसकी तो स्वप्न में भी आशा न थी। उनको वह दिन स्मरण है जब उन्होंने अपने हृदय पर वज्र रखकर कहा था कि बेटा नौकरी करो। उनको पता था कि उनका यह वाक्य कितना पैना था। और उनके अबोध बालक के लिए कितना आश्चर्यपूर्ण था। उनके सामने आज भी उनकी फटी-फटी आंखों वाला दृश्य सजीव था। पर वह भी क्या करते घर की परिस्थिति और आर्थिक दशा पर कैसे पार पाते। उनको अपने उस भोले बालक को अपने पास से हटाकर नौकरी के लिए बाहर भेजना पड़ा।

बड़े बाबू के हाथ की कलम स्थिर थी। जिस प्रकार उनके भाव सघन स्थिर थे। उनकी आंखें भी डबडबा गईं। कार्यालय की निस्तब्धता को भंग करते हुए छोटे बाबू बोले—

—कितनी कठिन परिस्थितियां हैं बेचारे पर ? आजकल के समय में शिक्षा प्राप्त करना भी तो दुर्लभ हो गया है।

—छोटे बाबू, रमेन्द्र जैसे कितने ही विद्यार्थियों को शिक्षा अपनी परिस्थितियों के कारण छोड़नी पड़ती है चाहे उनकी इच्छा कितनी ही इसके प्रतिकूल क्यों न हो।—बड़े बाबू ने कहा।

उनके कथन में उनकी हृदय की इस दबी भावना की आह थी। आज न जाने क्यों इनका हृदय काम करने को न चाह रहा था। उनका मन चाहता था कि घण्टों इसी प्रकार बैठे-बैठे विचारते रहें। इतने में चपरासी ने प्रवेश किया और बोला—

—साहब ने वह कागज मंगवाये हैं, जिनके लिए आपको उन्होंने अभी बुलाया था।

—अच्छा-अच्छा अभी लाता हूं।

बड़े बाबू के सामने फाइलों का ढेर लगा था उन्हें विचारों के ढेर से अधिक इन्हें महत्व देना था, वही तो उनकी रोजी-रोटी थी। क्षण भर में उन्होंने अपनी भावनाओं के उफनते सागर पर विजय प्राप्त कर उसे संतुप्ति के अधीन किया और कार्य में संलग्न हो गये। छत पर लगे बिजली के पंखे के समान उनके मस्तिष्क में रमेन्द्र और उनके पुत्र की सम परिस्थितियों के विचार चक्कर खा रहे थे, पर वह दृढ़ता से लिखे जा रहे थे, उनकी लेखनी तीव्रता से गतिशील थी।

दो

—[illegible] नाम है ?

—राजेन्द्र किशोर श्रीवास्तव !

—नये ही आये हो ?

—जी !

—कहां से ?

—आगरे से।

—आगरे से कहकर वह हंसा।

—क्यों, आप हंसे क्यों ?

—अरे यों ही, स्थान ही ऐसा है, भई मुझे अमृत लाल दीवान कहते हैं। मैं सर्विस एक में सब-इंसपेक्टर हूं।

दीवान का रंग गोरा, कद लम्बा, आंखें तनिक छोटी, गालों की ऊपर की हड्डी कुछ निकली हुई थी। आधुनिक फैशन के अनुसार न मूछ और न दाढ़ी तथा आंखों पर धूप का चश्मा। समर की पेन्ट, रेशमी कमीज और पांव में सफेद सुन्दर चप्पल। देखकर साधारणतया यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वे किसी धनवान के पुत्र हैं। दीवान ने सिगरेट का डिब्बा जेब से निकालकर कहा—लो भई, पियो।

—जी, मैं नहीं पीता।

—पान-वान मंगवाऊं।

—जी, मैं पान नहीं खाता हूं।

—अजीब मनुष्य हो, न सिगरेट पीते हो और न पान खाते हो। दिन भर काम कैसे कर लेते हो ?

—बस काम चल जाता है।

राजेन्द्र की आयु लगभग 18 वर्ष की थी। शरीर उसका पुष्ट था। रंग सांवला परन्तु मुख की बनावट और बड़ी-बड़ी आंखों में एक आकर्षण था। उसकी मुखाकृति व आचार-विचार से स्पष्ट हो रहा था कि वह अत्यन्त साधारण स्वभाव का है। दीवान ने राजेन्द्र के इस उत्तर पर कहा—तब तो पता लगता है कि भाई तुमने अभी दुनिया देखी ही नहीं।

—हूं।—यह कहकर राजेन्द्र फाइल खोलकर एक कागज पर कुछ लिखने लगा।

—अरे भई, काम तो दिन भर करते रहोगे। चलो, तुमको तुम्हारे नगर के एक व्यक्ति से मिलवा दें।—दीवान ने राजेन्द्र के कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा।

—साहब आने वाले हैं।

—अरे, तुम किनकी चिन्ता करते हो। पता है, यह खाने का समय है। साहब इस समय अपने बंगले पर गर्म भोजन खा रहे होंगे। वह दो बजे से पहले कभी नहीं आयेंगे।

—अच्छा, चलो।

दीवान राजेन्द्र को लेकर कार्यालय के टेलीफोन एक्सचेंज कमरे में पहुंचा। वहां पर दो लड़कियां इसी मूड में बैठी थीं। उनमें से एक ने कहा—

—नमस्ते, दीवान जी।

—देखिये मिस सरीना, मैंने कितनी बार कहा है कि तुम मुझे दीवान जी मत कहा करो, कहना है तो मिस्टर दीवान कहो, दीवान साहब या अमृत कहो, लेकिन दीवानजी मत कहा करो। दीवानजी तो सड़क के सिपाही को सत्कार के भाव से कहा जाता है।

—अच्छा मिस्टर दीवान !—उस बालिका ने कहा। वह साटन की सलवार और बैंजनी रंग के छींट का कुर्ता पहने थी। देखकर किसी को कहने से संकोच न होता कि वह पंजाबी है।

—हमें तो आपसे काम नहीं, आगरा वासी से काम है। कहिये आप किस कार्य में संलग्न है ?

—लंच है न।—उत्तर छोटा-सा था।

—देखिये मैं आपके आगरे के एक सज्जन को लाया हूं।

यह स्वाभाविक होता है कि जब हम विदेश होते हैं और यदि कोई अपने देश अथवा अपने नगर का व्यक्ति मिल जाता है तो क्षण भर के लिए उससे मिलकर कितनी प्रसन्नता होती है। आज वही प्रसन्नता क्षण भर के लिए उसके गौर मुख पर दौड़ गई।

—यह श्री राजेन्द्र किशोर श्रीवास्तव हैं, सप्लाई विभाग में नये ही आये हैं। हैं बड़े ही सज्जन, न सिगरेट पीते हैं और न पान ही खाते है।

—जी, आपकी तरह तो नहीं, जिनका जीवन ही सिगरेट का धुआ है।

—मिस सरीन ने कहा।

—तो आप आगरे में कहां रहते हैं ?

—पीपल मण्डी में।

—हाँ।

—तुम्हारे बाबूजी क्या करते हैं?

—[illegible] देहान्त हो गया। मेरी माँ ने मुझे शिक्षा दी है। वे देहाती आदमी थे, हमारे घर के पास के लड़कियों के स्कूल में पढ़ाती हैं।

—तो यहाँ किसके पास रहते हो?

—मामा के। वह केन्द्रीय सरकार के [illegible] विभाग में काम करते हैं।

—और मैं अपने चाचा के पास रहता हूँ, वे भी यही काम करते हैं।

वे दोनों आपस की बातचीत में लग गये। दीवान बोला—बस लग गये न अपनी आदतें वाली बातों में। अरे भई, इसका भी ध्यान है कि हम भी यहाँ हैं जिनका तुम्हारे वार्तालाप से सम्बन्ध नहीं है।

राजेन्द्र कुछ झेंप-सा गया। वह वाक्पटुता में निपुण न था।

—अच्छा, अब चला जाये।

उसने हाथ जोड़कर नमस्ते की, राजेन्द्र ने भी उत्तर दिया। दोनों चल दिये और वे दोनों भी अपने कार्य में लग गईं।

दीवान ने सीढ़ी से नीचे उतरते हुए कहा—राजेन्द्र, यद्यपि तुम इतने सीधे, सरल, भोले और साधारण हो कि मेरे स्वभाव के नितान्त प्रतिकूल हो, फिर भी न जाने क्यों मेरा हृदय चाहता है कि मैं तुमको अपना सबसे बड़ा मित्र बनाऊँ। राजेन्द्र! बोलो, तुम मेरा साथ दोगे?

राजेन्द्र ने सिर झुकाकर 'हां' कर दी। वैसे दीवान और राजेन्द्र की आयु में अधिक अन्तर भी न था। दीवान कोई 24 वर्ष का होगा, परन्तु सिगरेट आदि ने उसको 30 वर्ष का बना दिया था। राजेन्द्र की हां को देख दीवान प्रसन्नता से बोला—

—अच्छा, चलो! केन्टीन चलकर कुछ खा लिया जाये।

—नहीं भाई, मेरा खाना रखा हुआ है।

—तो क्या तुम भी मजदूरों के समान कटोरदान में खाना लाते हो? अरे भई, केन्टीन में खा लिया करो।

—नहीं, यों ही काम निकल जाता है।

—अच्छा, आज तो चलो।

राजेन्द्र दीवान के साथ चल दिया। दीवान अनेक प्रकार की मिठाई, नमकीन, चाय भी ले आया। राजेन्द्र के बहुत मना करने पर भी वह न माना। राजेन्द्र को खाना पड़ा।

खा-पीकर दोनों बाहर निकले। राजेन्द्र बोला—

—धन्यवाद अमृत, अब चलता हूं।

—शाम को क्या करते हो?

—एक छोटी लड़की है उसे पढ़ाने लग जाता हूं। कभी हार्डिंग लाइब्रेरी चला जाता हूं। इस बहाने कुछ घूमना भी हो जाता है और कुछ अध्ययन भी।

—क्या जीवन बना रखा है? आज शाम को कनाट-प्लेस चलेंगे कुछ घूमना होगा, फिर गेलार्ड में कुछ चाय-वाय पीयेंगे। यदि दिल हुआ तो कोई सिनेमा देख लेंगे।

—आज नहीं, दो-एक दिन बाद।

—क्यों, क्या वेतन मिल जायेगा इस कारण से?

—नहीं-नहीं—पर उसके कहने की विधि ने सत्य स्पष्ट कर दिया।

—रुपये आदि की चिन्ता मत करना। जब तक तुम्हारा अमृत है तुमको किसी बात की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। अमृत अपने मित्र पर जान तक दे सकता है, रुपया-पैसा क्या? मेरा हृदय इतना संकुचित नहीं, राजेन्द्र! बस, मैं एक सच्चा मित्र चाहता हूं।

—अच्छा, फिर देखा जायेगा ।—राजेन्द्र अपने कमरे की ओर चला गया और दीवान अपने कमरे की ओर ।

राजेन्द्र अपने कमरे में आकर बैठ गया । उसके सम्मुख आज दो नये परिचित व्यक्ति थे । एक अमृत चटक-मटक से पूर्ण बातें करने में निपुण, और दूसरी वह । उसका नाम पूछना तो भूल गया । क्या नाम है उसका, पर थी कितनी सरल, सुन्दर और साधारण । स्वाभाविक सौन्दर्य की मूर्ति, कहीं भी कृत्रिमता नहीं । उसकी आंखों में काजल, कपोलों पर रज और अधरों पर लिपस्टिक इत्यादि कुछ भी नहीं । ऐसा लगता था मानो उसे अत्यन्त सोच-विचार कर रचा है । परन्तु उस कामिनी का प्रभाव राजेन्द्र के हृदय पर क्यों पड़ा, यह राजेन्द्र स्वयं ही समझने में असमर्थ था । वह सुन्दरता जानता था पर सौन्दर्य को देखकर अपना बनाने की भावना का जन्म उसके हृदय में कदाचित् अभी नहीं हो पाया था । उसका शैशव अब भी उसमें शेष था । वह यौवन की मादकता व चपलता से पूर्ण रूप से परिचित न था । वह कुसुम को खिला देखकर प्रसन्न होना जानता था । तोड़ना नहीं ।

अमृत के शब्दों ने उसको प्रभावित किया । उसके सच्चे मित्र बनाने की भावना, उस पर तन-मन-धन त्याग व बलिदान करने के विचार ने अमृत को राजेन्द्र के हृदय में एक स्थान दे दिया था । अमृत कितना धनवान है कि गर्मी के समय में भी गर्म पतलून तथा रेशमी कमीज पहनता है । उसने दो-एक बार पहले भी देखा, पर सदा एक-से-एक अच्छे वस्त्र पहने देखा, पर उसमें किसी प्रकार का गर्व नहीं था । उसने अपने को वार्तालाप से टंगे शीशे में देखा, उसके सामने तो वह उसका नौकर-सा लगता है । कहां उसके वे ठाठदार कपड़े और कहां उसकी खाकी पैन्ट ? इतने पर भी वह उसको मित्र बनाने की भावना रखता है । वास्तव में उसका हृदय विशाल है !

राजेन्द्र की विचारधारा घड़ी की ध्वनि से टूट गई । चपरासी ने प्रवेश करके कहा—

—साब ने बुलाया है ।

राजेन्द्र झट से उठा और पास ही साहब का कमरा था ।

—क्यों भई, वह रिपोर्ट बना दी ?

—जी, वह तो मैंने पहले ही आपकी मेज पर बारह बजे से पहले रख दी।

—बड़ी जल्दी काम करते हो। अच्छा, एक काम है।

—जी।

—देखो, मैं तो जरा बम्बई जाऊंगा। मेरा घर तुम जानते ही हो ले दरियागंज में ?

—जी।

—वहां चले जाओ और मुन्नू और बेला को जरा चांदनी चौक ले जाना। घर पर पूछ लेना। उनके लिए पैंट व कमीज का कपड़ा खरीद कर दे देना।

—जी।

राजेन्द्र आकर अपने कार्य में लग गया। कुछ देर बाद वह पास के बाबू से बोला—

—लाओ गोस्वामी बाबू, तुम्हारा काम करा दूं।

—अरे बेटा, तुम रोज कब तक मेरे काम में हाथ बंटाते रहोगे।

—जहां तक बन पड़ेगा।

—भगवान तुम्हारा भला करे।

राजेन्द्र अपना काम करके गोस्वामी बाबू का काम समाप्त करवाने में लग गया। उस छोटे कमरे में वह और गोस्वामी बाबू ही बैठा करते थे। उनके बराबर ही लकड़ी का पर्दा था उस भाग में उनके साहब पी० आर० आचार्य सप्लाई अध्यक्ष बैठा करते थे।

तीन

राजेन्द्र ने घर जाकर अपनी चाची से कहा कि वह आज आगरे की एक

सहेली से मिला जो उसके कार्यालय में काम करती है। राजेन्द्र के चाचा-चाची पंजाब के विभाजन के पश्चात् दिल्ली में आ गए थे। उसके चाचा की लाहौर में प्रान्तीय राजकीय कार्यालय में सरकारी नौकरी थी, परन्तु विभाजन के कारण लाखों व्यक्तियों को भारत से पाकिस्तान और पाकिस्तान से भारत में भागना पड़ा। उस कोलाहल व हाहाकार में से अपनी जान बचाकर भागने वाले राजेन्द्र के चाचा श्रीगोपाल और उसकी चाची राधिका भी थी। श्रीगोपाल बाबू और राजेन्द्र के पिता सगे भाई थे, परन्तु नौकरी के कारण दोनों को इतनी दूर-दूर बसना पड़ा था। श्रीगोपाल बाबू का विवाह हुए यद्यपि सात वर्ष हो चुके थे, पर उनके कोई सन्तान न थी। राधिका की सदा यही इच्छा रहती कि कम-से-कम एक तो होती, पर नियति का लेख इसके प्रतिकूल था। वह बेचारी सदा उदास रहा करती थी। कभी-कभी श्रीगोपाल बाबू भी उसको समझाते कि भगवान की इच्छा है उस पर सन्तोष रखो। कभी राधिका उकता कर कह उठती कि तुम दूसरा विवाह कर लो, जिससे वंश चलाने को सन्तान तो हो जाये। इस पर श्रीगोपाल हंसकर उत्तर देते कि कौन-सा हमारा राजाओं का वंश है जिसे चलाने की आवश्यकता है। पीढ़ियों से हमारे बाबूगिरी होती आई है, एक-दो पीढ़ी और बढ़ जायेगी। कई बार राधिका ने अनाथालय से पुत्र गोद लेने को कहा परन्तु श्रीगोपाल जी इस मत से सहमत नहीं थे।

लेकिन जब से राजेन्द्र आया तब से दोनों बड़े प्रसन्न रहते। राधिका को ऐसा लगा कि जैसे उनकी गोद भगवान ने भर दी है। वह राजेन्द्र को बड़ा लाड-प्यार करती। राजेन्द्र भी अपने चाचा-चाची का सदा ध्यान रखा करता था। उसकी मां बचपन में उसे छोटा-सा छोड़कर स्वर्ग सिधारी थी। उसके पिता ने लोगों के बहुत कहने पर राजेन्द्र का जीवन बचाने के लिए दूसरी शादी की, परन्तु राजेन्द्र अभागा था। यदि अभागा न होता तो उसकी मां उसे छोड़कर क्यों मरती। उसे कभी मां की ममता न मिल पाई थी। पिता का प्यार उसे अवश्य मिलता रहा। दिल्ली आने पर उसे चाची की गोद में शीतलता प्राप्त हुई थी। उसकी आंतरिक पिपासा जो ममता के लिए थी शांत हुई। राजेन्द्र में अब भी शैशव था। वह कभी

कहा लेकिन आपने वह भी न लिये और उल्टे मुझ पर आप नाराज हो गये। चाची से मैंने कहा तो आंख भरकर रोईं और उन्होंने खाना तक उस दिन नहीं खाया।

—रज्जू!

—हां चाचा, मुझे पता है कि आप मेरे लिए सदा चादर से बाहर पांव पसारने का प्रयत्न करते हैं। चाचा, स्नेह हृदय से किया जाता है और मेरा यह सौभाग्य है कि आप जैसे चाचा-चाची मुझे मिले, लेकिन चाचा हमारी जितनी क्षमता है उतना ही तो करना चाहिए।

—तो क्या तुम समझते हो मेरी क्षमता नहीं है? यदि आज इस आंगन में तुम-सा कोई बच्चा अपना होता तो क्या उस पर इतना व्यय मैं नहीं करता?

राजेन्द्र जान गया कि उसने चाचा की सोई उद्भावना को जाग्रत कर दिया, उसने उनके टूटे वीणा के तारों को जोर से झंकृत कर दिया। उसे अपनी भूल मालूम हुई। उसने चाचा का उदास मुख देखकर कहा—

—चाचा, क्षमा करना, मैंने वर्जित क्षेत्र में पग रखा था। चाचा, मैं यह चाहता था कि मैं किसी प्रकार आपके ऊपर भार न बनूं। मैं नहीं चाहता था कि आपके सुख सागर में मैं बड़वानल की ज्वाला बनूं।

—अरे पगले! श्रीगोपाल जी ने राजेन्द्र को अपने वक्षस्थल से लगा लिया और राजेन्द्र के मुख में जलेबी का टुकड़ा रखा ही था, राधिका पीछे से बोली—

—अरे, अन्दर ही बैठा कर खिला दिया होता। ऐसी कौन-सी जल्दी थी कि दरवाजे पर खड़े खिला रहे हो।

श्रीगोपाल और राजेन्द्र दोनों हंस पड़े। राजेन्द्र अन्दर आकर बैठ गया।

राजेन्द्र जलेबी खाकर साइकिल उठाकर कार्यालय की ओर चल दिया। वह अपनी धुन में मग्न धीरे-धीरे चला जा रहा था कि पीछे से किसी ने आवाज दी 'मिस्टर राजेन्द्र' 'राजेन्द्र' 'राज' तीसरी आवाज उसके हृदय में प्रवेश कर गई। उसे ऐसा लगा जैसे कि किसी ने जोर से उसके हृत-तन्त्र के तारों को झंकृत कर दिया है। उसने मुड़कर देखा कि वह का

राधिका की गोद मे लेट जाता और राधिका जब प्रेम से अपना आंचल उस पर उढ़ा देनी और अपनी स्नेह-भरी अगुलिया उसके केशों पर फेरती तब राजेन्द्र को लगता जैसे उसने अपनी मा को पा लिया और राधिका को लगता कि उसकी गोद में उसका ही पुत्र है।

राजेन्द्र कार्यालय जाने लगा। उसने अपनी साइकिल निकाली ही थी कि सामने श्रीगोपाल दोने में कुछ लिये आ रहे थे।

—चाचा मैं रात को देर मे आया, आप सो गए थे। कल लाइब्रेरी मे एक ऐसी पुस्तक मिल गई कि बस पूछिये नही, जब तक वह समाप्त नही हो गई मैं हिला नही यद्यपि वहां का चपरासी बन्द करने को जल्दी मचा रहा था।

—क्या ऑफिस चल दिये ?

—हां चाचा, नौकरी क्या है बस न पूछिये, हम नौकर सरकार के क्या आचार्य जी के घर के भी हैं।

—आचार्य जी के बच्चों को यदि कपडों की आवश्यकता हो तो राजेन्द्र उन्हें घर से ले जाए और खरीदवा कर घर छोडकर आये।

—बेटा, यह सब करना पड़ता है। अपने साहब को प्रसन्न रखोगे तो हो सकता है तुमको वह तरक्की भी दे दे। काम बने नही तो बिगाड़ेगा तो नही।

—चाचा, प्रसन्न तो अपने काम से रखता हूं। यदि कोई काम वह दो बजे तक मांगते हैं तो मैं बारह बजे तक दे देता हूं। यद्यपि मुझे काम शुरू किए दो महीने ही हुए हैं पर नयेपन की झलक मुझ में तनिक भी नही। यदि विश्वास न आये तो पूछ लीजिये। राजेन्द्र ने अपनी साइकिल दरवाजे से लगाते हुए कहा।

—वह तो ठीक है, परन्तु इन कामों मे तुम्हारी हानि नही प्रत्युत लाभ होने की ही सम्भावना है। अच्छा छोडो इन बातो को, आओ गर्म जलेबी खा लो। श्री गोपाल जी ने राजेन्द्र की पीठ थपथपाते हुए कहा।

—चाचा, देखिये यह बात ठीक नही है। मैं जानता हूं कि आपके अंदर मेरे लिए कितना स्नेह है। लेकिन इसका यह अर्थ नही कि आप प्रतिदिन इस प्रकार व्यर्थ के व्यंय व्यय करें। बाबू जी ने आपको खाने के दाम देने को

कहा लेकिन आपने वह भी न लिये और उल्टे मुझ पर आप नाराज हो गये। चाची से मैंने कहा तो आंख भरकर रोई और उन्होंने खाना तक उस दिन नही खाया।

—रज्जू।

—हां चाचा, मुझे पता है कि आप मेरे लिए सदा चादर से बाहर पांव पसारने का प्रयत्न करते हैं। चाचा, स्नेह हृदय से किया जाता है और मेरा यह सौभाग्य है कि आप जैसे चाचा-चाची मुझे मिले, लेकिन चाचा हमारी जितनी क्षमता है उतना ही तो करना चाहिए।

—तो क्या तुम समझते हो मेरी क्षमता नही है? यदि आज इस आगन मे तुम-सा कोई बच्चा अपना होता तो क्या उस पर इतना व्यय मैं नही करता?

राजेन्द्र जान गया कि उसने चाचा की सोई उद्भावना को जाग्रत कर दिया, उसने उनके टूटे वीणा के तारो को जोर से झंकृत कर दिया। उसे अपनी भूल मालूम हुई। उसने चाचा का उदास मुख देखकर कहा—

—चाचा, क्षमा करना, मैंने वर्जित क्षेत्र मे पग रखा था। चाचा, मैं यह चाहता था कि मैं किसी प्रकार आपके ऊपर भार न बनू। मैं नही चाहता था कि आपके सुख सागर मे मैं बड़वानल की ज्वाला बनू।

—अरे पगले! श्रीगोपाल जी ने राजेन्द्र को अपने वक्षस्थल से लगा लिया और राजेन्द्र के मुख मे जलेबी का टुकड़ा रखा ही था, राधिका पीछे से बोली—

—अरे, अन्दर ही बैठा कर खिला दिया होता। ऐसी कौन-सी जल्दी थी कि दरवाजे पर खड़े खिला रहे हो।

श्रीगोपाल और राजेन्द्र दोनों हंस पड़े। राजेन्द्र अन्दर जाकर बैठ गया।

राजेन्द्र जलेबी खाकर साइकिल उठाकर कार्यालय की ओर चल दिया। वह अपनी धुन मे मस्त धीरे-धीरे चला जा रहा था कि पीछे से किसी ने आवाज दी 'मिस्टर राजेन्द्र' 'राजेन्द्र' 'राज' तीसरी आवाज उसके हृदय मे प्रवेश कर गई। उसे ऐसा लगा जैसे कि किसी ने जोर से उसके हृत्-तन्त्र के तारों को झंकृत कर दिया है। उसने मुड़कर देखा कि वह का

रही थी।

राजेन्द्र उतर गया।

—कहिये आप पैदल ही जाती हैं ?

—जी, हां।

—तब तो पास ही में रहती होंगी।

—जी हां, लगभग दो-एक मील ही तो है, कटरा नील।

जिस स्वर में उसने कहा राजेन्द्र को हंसी आ गई और उसके साथ वह भी हंस पड़ी। राजेन्द्र ने पहली बार उसके दांतों की चमक देखी तो उस पर बिजली-सी गिरी। लेकिन उसकी अनुभव शक्ति का विकास नहीं हो पाया था। एक तो उसकी आयु कम थी, फिर आरम्भ से वातावरण ऐसा ही रहा कि वह कुछ न अपना पाता। वह यह जानता था कि यह हंसी उसे अच्छी लगी पर क्यों लगी ? यह नहीं। उसे उसका साथ अच्छा लगा क्यों लगा ? इसका उत्तर वह स्वयं भी नहीं जानता था।

—तब तो मैं भी तुम्हारे पास ही रहता हूं। कुतुबरोड के पास।

—हां, राह तो एक है इसीलिए तो मिल गये।

—और मंजिल भी एक है।

—हां, वही राशन का दफ्तर, 'लुडलो कैसिल्स'—कहकर वह मुस्कराई, मानो नव प्रभात मुस्करा उठा।

—हां एक बात स्मरण आई, उस दिन आपका मैं नाम पूछना तो भूल गया।

—नीरा—लाज का अवश वितान तन गया।

—आगे ?

—आगे क्या ?

—टण्डन, मेहरा, कपूर ?

—सिन्हा।

—तो क्या आप भी कायस्थ हैं।

—क्यों क्या आश्चर्य हुआ ?

नहीं, पर आप लगती नहीं, फिर आप रहती भी कटरा नील में हैं, अधिकतर खत्री लोग ही रहते हैं।

—तो क्या काबुल के सब घोड़े ही होते हैं खच्चर नहीं।—दोनों हँस पड़े।

लड़की कॉलिज का दरवाजा आ गया। राजेन्द्र ने अपनी साइकिल स्टैंड पर लगाई और फिर दोनों चल दिए। नीरा अपने विभाग की ओर चली गई और राजेन्द्र अपने कमरे में। नीरा नाम उसे अत्यन्त पसन्द आया। उसने यह नाम कई उपन्यासों में पढ़ा था विशेषकर बंगाली उपन्यासों में। आज उन्हीं उपन्यासों के विभिन्न चित्र उसके सामने आ रहे थे। कभी अपने को उन उपन्यासों के नायकों और नीरा को उन उपन्यासों की नीरा से तुलना करने लगता। एक उपन्यास में उसने पढ़ा था कि नीरा अत्यन्त निर्धन लड़की है और उसका प्रेमी अत्यन्त धनवान है जिसके यहां वह शिशुपालन का काम करती है। नीरा ने अन्त में विषपान कर लिया। क्योंकि वह धनवान के द्वारा कलंकित की जा चुकी थी। उसने एक उपन्यास में पढ़ा था कि नीरा कलकत्ते में एक बड़े धनवान की पुत्री है। उसका प्रेमी उसके घर पर पढ़ाने वाला अध्यापक है, जोकि उसके घर में ही रहता है। अध्यापक अपना प्रेम अपने हृदय में रखे रहा, कभी उसने स्पष्ट करने का प्रयास नहीं किया। नीरा की शादी किसी दूसरे धनवान से हो गई, जिसकी आयु उसके पिता के समान थी।

इस प्रकार विभिन्न उपन्यासों की घटनाएं जिनकी नीरा नायिका थी उसके सामने आ रही थीं लेकिन क्या नीरा भी उसको प्रेम करती है? अथवा वह नीरा को प्रेम करता है, यह दोनों प्रश्न उसके सम्मुख थे भी नहीं। यदि उससे पूछा भी जाता तो कदाचित दोनों में से किसी एक का भी उत्तर वह नहीं दे पाता।

इतने में चपरासी ने आकर फाइलों का ढेर सामने रखा। उपन्यास की घटनाओं में विलीन राजेन्द्र जाग उठा और अपने काम में लग गया।

चार

हरिगोपाल बाबू श्रीगोपाल जी के बड़े भाई थे तथा जैन विद्यालय में
बड़े बाबू थे। 90 रु० मासिक वेतन मिलता था। उसमें और श्रीगोपाल
में अधिक भेद नहीं था। उन्होंने श्रीगोपाल जी को बच्चों के समान पाला
था। उन्होंने ही नौकरी करके उन्हें पढ़ाया था। उनके लिए वह भाई और
पुत्र दोनों ही थे। उनके पिता जिस समय स्वर्ग सिधारे थे हरिगोपाल
बाबू 17 वर्ष के थे तथा श्रीगोपाल जी 7 वर्ष के थे। उसी समय से कुटुम्ब
का भार इन पर पड़ा था। उन्होंने अपनी कमाई से भाई को पढ़ाया; शादी
की, बहिन की शादी की इसी कारण वह दो रुपये बैंक में जमा नहीं कर पाये।
इतने कम वेतन में दो-जून पेट भर भोजन मिल जाता, यही बहुत था।
राजेन्द्र की मां स्वभाव की देवी थी। वे अपने लिए कभी न कहती सदा
अपने देवर व ननद के लिए करती रहती। कभी हरि गोपाल जी अपनी
पत्नी के लिए कुछ लाते तो वह उसका उपभोग कभी स्वयं न करती, प्रत्युत
अपनी ननद को दे देती। राजेन्द्र के जन्म के पश्चात् उनको न जाने क्या
प्रसव रोग लगा कि सदा बुखार लगा रहता। हरिगोपाल जी ने न जाने
कितना रुपया समाप्त कर दिया लेकिन फिर भी वे पत्नी का जीवन न
खरीद सके। उनको अपनी पत्नी के वियोग का अत्यन्त दुःख हुआ। राजेन्द्र
की छोटी आयु के कारण उनकी माता ने आग्रह किया और उनको दूसरा
विवाह करना पड़ा। मां तो विवाह कराने के दो वर्ष बाद स्वर्ग सिधार
गई। अब उनके ऊपर से मां का साया भी चला गया। सारे कुटुम्ब का
भार उन पर पड़ा। बहिन की शादी तो मां के सामने कर चुके थे।
श्रीगोपाल की शादी उन्होंने कुछ वर्षों के बाद कर दी। उनके दूसरी पत्नी से
एक पुत्री शैलनी थी जो आज 16 वर्ष की थी और एक पुत्र था जो 6 वर्ष
का था। इस प्रकार हरिगोपाल जी का कुटुम्ब 90 रु० के अनुसार बड़ा
. कारण उन्हें अपने पुत्र को नौकरी के लिए विवश करना पड़ा।
.. उठ कर हरिगोपाल जी एक घंटा उपासना में व्यतीत
का कथन था कि मनुष्य की हार्दिक शान्ति व सन्तोष के लिए

यह अत्यन्त आवश्यक है। इसके अतिरिक्त उनको ईश्वर पर दृढ़ विश्वास था। इसी प्रकार वे सन्ध्याकाल की उपासना भी अवश्य करते। कहीं भी कीर्तन होता, कथा होती अथवा अखंड पाठ होता तो हरिगोपाल जी अवश्य जाते।

उनकी धार्मिकता व सरलता उनके मुख में, रहन-सहन आचार-विचार से दिखाई देती थी।

शाम को विद्यालय से लौटे तो बोले—

—अरे मुन्नू की माँ सुनती हो?

—क्या है—उनकी पत्नी गंगा चौके से बोली।

—देखो मैं कहता था न कि आज रज्जू का मनिआर्डर अवश्य आयेगा देखो आज उसने 50 रु० भेजे हैं। तुम कहती थी न कि रज्जू दिल्ली में जाकर बिगड़ गया है रुपया नहीं भेजेगा। आखिर बेटा तो मेरा है।

—हां तब ही 50 रु० भेजे है—त्यौरी चढ़ाते हुए गंगा ने कहा।

—और कितने भेजता, 120 रु० वेतन मिलता है। कुछ अपने लिए भी तो आवश्यकता पड़ती है।

—90 रु० अकेले व्यक्ति के लिए। जिस पर कि श्री बाबू एक पैसा खाने का नहीं लेते हैं। मुझे तो सन्देह है कि वहां वह बुरी आदतों में न पड़ गया हो। दिल्ली शहर बड़ा है, वहां क्या नहीं होता?

—चुप भी रहो। तुमको तो सदा ही वह खोटी आंख नहीं सुहाता है। तुम्हारे कारण मैंने उसकी पढ़ाई छुड़ाई और इस अबोध आयु में नौकरी करने के लिए विवश किया है।

—जैसे कि वह डिप्टी बन जाता। वहां है तो कौन-सा दुःखी है, बड़े आराम से होगा। चाचा-चाची का लाडला तो पहले से है।

—खैर! जहां भी हो भगवान उसे सुखी रखे। उसने लिखा है चाचा ने यद्यपि खाने के रुपये लेने को मना कर दिया है फिर भी मैं उनको किसी न किसी रूप में दे दिया ही करूंगा। देखो उसने यह भी लिखा है कि अगले माह से अधिक भेजने का प्रयत्न करूंगा। इधर कपड़े नहीं थे इसलिए अधिक न भेज सका।—हरिगोपाल बाबू पत्र पढ़ते हुए बोले।

—पिछले दो महीने से कपड़े बनवा रहा है ऐसी अमीरी आ गई है।

यहां तो फटे-पुराने में दिन निकालते हैं और यह है कि नये-नये व पढ़े बन-ठने में लगा है ।

—और ! यह बात तो छोड़ो । यह बताओ कि मैं पिछले दो महीने से सत्यनारायण की कथा करवाने की सोच रहा हूं । कई लोग कह चुके है कि बेटे की नौकरी लग गई है । दो-चार ब्राह्मण को खिला देंगे और पांच-दस आदमियों को प्रसाद बंटवा देंगे ।— हरिगोपाल बाबू ने एक गोल मूढ़े पर बैठते हुए कहा ।

—हां, हां ठीक है कथा करवा लो । दो-चार ब्राह्मण खा लेंगे, दस-बीस को प्रसाद बंटवा देना यदि महीने में पांच-दस रोज चूल्हा नहीं जला तो क्या हुआ कथा तो हो ही जायेगी । बेटे की नौकरी जो लगी है ।—गंगा ने कटाक्ष भरे स्वर में कहा ।

शब्दों की मधुर कटार अधिक पैनी होती है । उसने हरि गोपाल बाबू के हृदय पर गहरा आघात किया । उनके जी में आया खूब जली कटी सुनायें, पर वे गंगा का स्वभाव जानते थे कि वह कितने गर्म दिमाग की नारी है । वे चुपचाप चले गये और एक कमरे में जाकर बैठ गये ।

आज उनकी भावना को अत्यन्त ठेस पहुंची थी । यदि इस समय उनकी पहली पत्नी राजेन्द्र की मां होती तो क्या इस प्रकार कटाक्ष करती । उसने कभी उनकी बातों का विरोध नहीं किया । जो कुछ उन्होंने कहा उसे सरलता से मान लिया चाहे वह गलत बात ही क्यों न हो ? आज वह होती तो उसको कितनी प्रसन्नता होती, गाना करवाती, कीर्तन करवाती तथा अखंड पाठ करवाती । उनको स्मरण है कि जब उनकी बहन की शादी हुई थी तो वह कितनी प्रसन्न हुई थी प्रसन्नता के कारण फूली नहीं समा रही थी । उसने स्वयं अपने गहने उतार कर अपनी ननद को चढ़ा दिये, जिससे कोई यह न कहने पाये कि कुछ गहने नहीं चढ़े । वर्षों की उनके द्वारा लाई नई-नई साड़ियां दे दी लेकिन आज उनकी दूसरी पत्नी गंगा है जो प्रथम के नितान्त प्रतिकूल ! स्वार्थ सब में होता है पर ऐसा भी स्वार्थ क्या ? उन्होंने कहा क्या, केवल सत्यनारायण की कथा कराने को । अधिक-से-अधिक [illegible]-आठ रुपये में हो जाती । लेकिन भगवान के प्रसन्नता के कार्य में भी [illegible] । जब दूसरों के घर कथाओं में जाते उनके हृदय में यही भाव उठते

कि कोई शुभ अवसर आये तो हम भी अवश्य कथा करायेंगे। बेटे की नौकरी पर परमों ही लाला चिरंजीलाल ने कथा कराई थी। चिरंजीलाल और उनके पुत्र को सबने कितनी मंगल बधाइयां दी थी। उनके हृदय में भी जिस दिन राजेन्द्र की नौकरी लगी, उसी दिन से यह भाव उत्पन्न हो गये थे कि कम-से-कम सत्य नारायण की कथा अवश्य करायेंगे। उनको इतना आघात लगा कि घन्टों बैठे रहे। जब मुन्नु दीपक लेकर उनके कमरे में आया तब उनको पता लगा कि इतनी रात हो चुकी। मुन्नू बोला—

—बाबू जी, अंधेरे में बैठे क्या कर रहे है?

दीपक के मन्द प्रकाश में नन्हे बालक ने अपने पिता का उदास मुख देखा और बोला—

— बाबू जी, आपको क्या हो गया है?

—कुछ नहीं बेटा।

नन्हा बालक अपने पिता से लिपट गया उनको कुछ सान्त्वना मिली। अपने पुत्र की वात्सल्यता में क्षण भर के लिए उनके हृदय का भार उतर गया। पुत्र के अथाह स्नेह-सागर में डूब गये। उनकी गीली पलकें उनके शिशु के कोमल कपोलों को स्पर्श कर रही थी। अबोध बालक अपलक नयनों से दूर देख रहा था तथा किसी विचार में डूबा था। कदाचित यह विचार रहा था कि उनके पिता क्यों इतने गम्भीर है।

पांच

नई दिल्ली के कनॉट-सर्कस में कई बड़े-बड़े होटल है। उनमें मेट्रो भी एक है। यह ऊपर दो मंजिल पर स्थित है और नीचे दुकाने है। मेट्रो दिल्ली के अच्छे होटलों में से एक है। ऊपर जाने के लिए एक जीना जाता है। उस जीने के द्वार के सामने खाकी वर्दी पहने होटल का एक चौकीदार अपनी कमर में खुखरी कसे खड़ा रहता है। उसी के पास एक बोर्ड रखा रहता है

से पालिश नहीं किये जाने के कारण, भद्दे लग रहे थे। उसके हृदय में ग्लानि हो रही थी। वह सोच रहा था। लोग उसको देखकर क्या कह रहे होंगे। उसकी गर्दन शर्म के कारण झुकी जा रही थी। कई क्षण वह चुपचाप रहा अमृत बोला—

—गर्दन झुकाये क्या सोच रहे हो?

—कुछ नहीं अमृत।

—देखा तुमने, एक दुनिया यह भी है। देखो, यहां इनको देख कर कौन कह सकता है कि हमारा भारत गरीब है, हमारे भारत में लोग भूख मरते हैं। राजू, मैं तो यहां इसलिए कभी-कभी आता हूं कि यहां पर जीवन की दो घड़ियां आराम से कट जाती हैं, नहीं तो वही दिन भर की आफिस की घिस-घिस।

—ठीक कहते हो अमृत, लेकिन यह धन का खेल है, हम लोग इतना कहां से ला सकते हैं।

—राजू, दुनिया ही धन का खेल है, यहां सुख व प्रेम बटता नहीं, बिकता है, जिसके पास रुपया है वही खरीद सकता है इसी कारण जब मैं जीवन के दुख से तंग हो जाता हूं और सुख की चाह होती है, तब मैं अपनी पूरी शक्ति से सुख खरीदने का प्रयत्न करता हूं।

राजेन्द्र कुछ मुस्कराया फिर गम्भीर होकर बोला—

—अमृत, इसको तुम सुख कहते हो, सुख आन्तरिक होता है, हृदय से होता है, आत्मा से होता है।

—भई आत्मा व आन्तरिक सुख से मैं परिचित नहीं और न आज तक कभी मैंने इसे जानने का प्रयास ही किया है। इस चटक-मटक, राग-रंग को देख कर क्या तुम्हारे हृदय में इच्छा नहीं होती है कि तुम इसमें सम्मिलित हो सको? क्या इस विश्व में प्रवेश करने का हमारा अधिकार नहीं।—अमृत ने फिर अपने कोट पर लगे रूमाल से मुंह पोंछ लिया।

—नहीं, अमृत नहीं, मनुष्य को अपना पांव चादर देख कर पसारना चाहिए।

— [illegible] है, इसी कारण कहते हो राजू।

[illegible] है, चाहे उसे किसी प्रकार हो

करना हो।

—समझा नही।

—और न समझोगे अभी।

इतने मे होटल का बेयरा, गहरे नीले कपड़े पहने आया, अमृत ने कहा—

—दो कप चाय, केक-पेस्ट्री और टोस्ट भी।

वह चला गया। राजेन्द्र पास में बैठे युवकों को देख रहा था।

—क्या देख रहे हो राजू?

—यह लोग क्या पी रहे हैं?

—शराब।

—शराब। इतनी छोटी आयु मे। राजेन्द्र ने कहा—

—क्यों? क्या बुरी चीज है?

—हां, बाबू जी ने चलते समय मुझसे कहा था कि बेटा शराब, सिगरेट से बचते रहना। यह ऐसी लतें हैं जो मित्र मंडलियों से लगा करती हैं, फिर घर नष्ट हो जाये, शरीर दुर्बल हो जाये, पर, यह नही छूटती हैं।

—ठीक कहते हो राजू, शराब की तो इतनी नही पर सिगरेट की अवश्य इतनी बुरी लत पड़ गई कि छुड़ाये नही छूटती, महीने मे दस-बीस लग ही जाते हैं।

इतने में रंग-मंच से एक मोटा-सा युवक उठा और उसने अंग्रेजी मे कहा कि मिस रोजी और मिस्टर जॉन अपना नृत्य उपस्थित करेंगे। कुछ ही क्षण पश्चात् सारे हॉल में एक शांति की लहर-सी दौड़ गई। जॉन ने हल्के नीले रंग का सूट पहना हुआ था और रोजी ने छोट की स्कर्ट पहन रखी थी। राजेन्द्र ने अनेकों भारतीय नृत्य देखे थे जिसमे लोग घुंघरू और विभिन्न प्रकार के कपड़े पहन कर नाचा करते थे; लेकिन इनके पांव में न घुंघरू और न इन्हें वैसे कपड़े पहने ही देखा। कभी उनके पग धीरे-धीरे चलते तो कभी तेजी से। कभी वे दोनो दूर हो जाते तो कभी इतने सट जाते कि एक सूत की दूरी भी नहीं रहती। कभी जॉन रोजी के कमर में हाथ डाल कर उसे घुमा देता तो वह फिरकी के समान घूमती-घूमती दूर तक चली जाती। अर्थात् उसे नृत्य अत्यन्त नवीन-सा लग रहा था।

नृत्य समाप्त होने पर सबने करतल ध्वनि से स्वागत किया। नृत्य के पश्चात् अमृत ने राजेन्द्र से पूछा—

—कैसा लगा?

—अच्छा था, नट का-सा तमाशा।

—'स्लो फाक्सट्रॉट' और 'फॉस्ट फॉक्सट्रॉट' दोनों एक साथ था। यह करना बड़ा कठिन होता है।

इतने में दोनों के सामने चाय की ट्रे रख दी गई। अमृत ने चाय बनाई और दोनों पीने में लग गये।

कुछ देर के बाद रंग-मंच से बड़ा मोटा-सा व्यक्ति उठा उसने अंग्रेजी में कहा कि मिस जेनी अपना नृत्य करेंगी।

कुछ ही देर बाद जेनी नृत्य करने के स्थान पर आ गई। राजेन्द्र को उसके पहनावे पर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसकी गोरी जांघों पर कोई कपड़ा नहीं था। उसकी पीठ नंगी थी, बस शरीर के कुछ आवश्यक अंग ही लाल रंग के कपड़े से ढके थे। कन्धों तक केस झूलते थे। यह नृत्य राजेन्द्र को कुछ भारतीय मणिपुरी कत्थक के समान लगा पर इसमें कमर का घुमाव अधिक, गर्दन व नयनों का भाव दर्शन कुछ भी न था। लेकिन शरीर का मोड़-तोड़ उसे अधिक सुन्दर लगा। उसका नृत्य लगभग आधे घंटे तक रहा। समाप्त होने के बाद उसने हाथ हिला कर झुक कर जनता को सलामी दी। हॉल पुनः-पुनः की ध्वनि से प्रतिध्वनित हो गया। अमृत नृत्य के बाद राजेन्द्र से बोला—

—यह 'हवायन' नृत्य था। बड़ा गजब का नाचती है जेनी जिस दिन इसका नृत्य होता है सब स्थान भर जाते हैं।

—वस्त्र तो ऐसे पहने है जैसे लाज-शर्म कोई वस्तु नहीं।

—नहीं राजू, 'हवायन' नृत्य में अधिकतर ऐसे ही कपड़े पहने जाते हैं।

इसके बाद अमृत ने अपनी घड़ी देखते हुए बोला—दस बज रहे हैं। तुमको देर हो जायेगी। राजेन्द्र को ऐसा लगा कि वह सोते से जग गया। दस बज रहे हैं, ग्यारह से पहले घर नहीं पहुंचूगा, चाचा सो जायेंगे। अमृत ने होटल के बैरे को बुलवाया, वह 'बिल' लेकर आया। अमृत ने

अपनी जेब से दस का नोट निकाल कर रख दिया। वह कुछ देर में शेष रुपये व पैसे लौटा लाया। अमृत ने सब पैसे उठा लिये केवल चार आने उसमें छोड़ दिये उसने सलाम किया। राजेन्द्र यह सब देख रहा था। सीढ़ी से उतरते समय बोला—

—चार आने क्यों छोड़ दिये ?

—इन गरीबों का भी कुछ अधिकार होता है।

—तो यह भिक्षा दी।

—नहीं इनाम।

राजेन्द्र अमृत को बीच में छोड़कर अपने घर की ओर चल दिया। इस समय ग्यारह बजने में कुछ ही देर थी। राजेन्द्र को साहस नहीं हो रहा था पर उसकी साइकिल की खड़-खड़ से राधिका की नींद टूट गई। उसने देखा कि राजेन्द्र का बिस्तरा खाली है। वह समझ गई कि राजेन्द्र ही होगा। उसने झट से उठकर द्वार खोला। राजेन्द्र बोला—

—चाची देर हो गई।

—अच्छा-अच्छा जा जल्दी से सो जा मैं थोड़ी कुछ कह रही हूं।

राजेन्द्र सोच रहा था कि चाची से क्या कहेगा, झूठ कहेगा या सच। पर बिना ही कहे वह अन्दर आकर अपने बिस्तरे पर लेट गया। वह करवट बदल रहा था लेकिन उसे नींद नहीं आ रही थी। अंग्रेजी साजों के स्वर अब भी उसके कानों में गूंज रहे थे, विदेशी नृत्य अब भी उसकी आंखों के सामने हो रहा था। रंग-बिरंगे वस्त्रों से सुसज्जित नारियों के चित्र उसके हृदय-पटल पर अब भी सजीव थे। उसने आज नये संसार में पांव रखा था। जो उसने कभी न देखा था। दो बार वह उन उच्च भवनों के सामने से निकला था, पर उसे न मालूम था कि इसके अन्दर का विश्व निराला ही है। उसका हृदय चाहता है कि वह भी वहां जाये। लोग कितने स्वच्छ कपड़े पहने बैठे थे किसी के मुख पर दुःख के चिन्ह तक न थे, सब कितने प्रसन्न थे। लोग कितने प्रेम से अपनी प्रेमिका का कर अपने कर में लेकर आते। अमृत सत्य कहता था कि दिन भर की कार्यालय की घिस-घिस के पश्चात् वह यहां आकर दो घड़ी के लिए सब कुछ भूल जाता है। एक वह है जो कि दिन भर के परिश्रम के पश्चात् अधिक-से-अधिक अपने को दूसरे

के लिए पुस्तकालय में चला जाता है अथवा पार्क में सैर कर आता है। अमृत सत्य कहता था कि इस विश्व में सुख बटता नहीं बिकता है? क्या हमारा अधिकार इस संसार में पांव रखने का नहीं? आज इन्हीं समस्याओं ने उसके हृदय में एक द्वन्द्व स्थापित कर दिया था। उसको प्रारम्भिक शिक्षा इन दोनों के प्रतिकूल मिली थी। पर उसका हृदय इस ओर बढ़ना चाहता था, लेकिन मस्तिष्क रोक रहा था कि कभी ऐसा नहीं करना, जो सामर्थ्य के बाहर है। एक झोपड़ी के भिखारी को महलों के स्वप्न नहीं देखने चाहिए। धरती पर रह कर आकाश के तारे तोड़ने का प्रयास करने वाला मूर्ख नहीं तो क्या कहलायेगा?

इसी द्वन्द्व में रात्रि का प्रथम पहर ढल चुका था। उसे पता नहीं कब नींद आई।

छह

इधर आठ-दस दिनों से सन्ध्या के समय कुछ ऐसा होता कि वह प्रतिदिन अमृत के साथ कहीं-न-कहीं घूमने चला जाता। प्रायः वे अधिकतर कनॉट-प्लेस में घूमने जाते, कभी इंडिया गेट की ओर निकल जाते। दिल्ली की लम्बी-चौड़ी खुली सड़कों पर राजेन्द्र को घूमने में भी आनन्द आता था।

आज सन्ध्या को वह पुस्तकालय की ओर निकल गया। अमृत को शाम को दुकानों की जांच के लिए जाना था। देहली जंक्शन के सामने एक बड़ा बाग है। सामने सफेद नगर पालिका भवन चमकता है। उसके पास ही पूर्व की ओर उसी बाग में हार्डिंग लाइब्रेरी स्थित है। दिल्ली के प्रसिद्ध उद्यान में से राजेन्द्र उसी की ओर बढ़ा जा रहा था कि सामने उसे नीरा आती हुई दिखाई दी। उसने आश्चर्य से पूछा—

—अरे नीरा, तुम यहां कहां?

—यों ही मैं अपनी सहेली के यहां गई थी। बेबी आग्रह करने लगी कि दीदी पार्क चलो।

—यह तुम्हारे मामा की लड़की है।

—हां।

—कहो बेबी, तुम क्या करती हो।

—अपने पापा और मम्मी के साथ रहते हैं।

इस उत्तर पर राजेन्द्र मुस्कराया—

—और क्या करती हो?

—गुड़िया खेलते हैं, दीदी से कहानी सुनते हैं, जब सोते हैं तो दीदी से गीत सुनते हैं।

—अच्छा, क्या तुम्हारी दीदी गीत बहुत अच्छा गाती हैं?

—और क्या नहीं, अगर यह 'सोजा मेरे स्वप्नों की रानी' वाला गीत सुना दें तो आप खड़े-खड़े ही सो जायें।

दोनों हंस पड़े। राजेन्द्र ने उसे गोदी में उठा लिया।

—बड़ी तेज है।

—फिर जल्दी से नीचे उतार दीजिये।

—क्यों?

—कहीं आप की नाक काट खाऊं तो फिर आपकी शादी भी नहीं हो पाएगी।

राजेन्द्र हंस पड़ा। उसे बच्चे बड़े अच्छे लगते थे। अपने मुन्नू को भी दिन भर खिलाता रहता। इससे कभी उसके पिता पढ़ाई के लिए गुस्सा भी होते। लेकिन नीरा को बेबी का यह उत्तर अच्छा न लगा। वह डांट कर बोली—

—बेबी बहुत बोलने लगी है।

बेचारी 5-6 वर्ष की बच्ची एक डांट में सहम गई। राजेन्द्र ने उसे अपने पास खड़ा कर लिया। नीरा बोली—

—इधर कहां जा रहे हैं?

—लाइब्रेरी।

—क्यों पुस्तक पढ़ने में बड़ी रुचि है?

—हां, पर इधर कई दिनों से न आ पाया।

—मैंने भी आपको ऑफिस में आते-जाते नहीं देखा। हां, आपको उपन्यास कैसे पसन्द है?

—मुझे उपन्यास पढ़ने में रुचि कम है, पर यदि ऐसा उपन्यास है जिसमें लेखक ने सजीव दर्शन किया है, कल्पना की उड़ान में वास्तविकता को नहीं मिटा दिया है अथवा उपन्यास पढ़ते समय हमारे हृदय से निकल उठे 'वास्तव में यह सत्य है ऐसा होता है' वही उपन्यास मुझे अच्छा लगता है।

—फिर तो आपको प्रेमचन्द के उपन्यास बड़े अच्छे लगते होंगे।

—हां, उनके उपन्यास पढ़ने का तो मुझे किसी समय में इतना पागलपन चढ़ा था कि एक समाप्त करता तो दूसरा आरम्भ करता। दो महीने के अन्दर मैंने उनके सब उपन्यास पढ़ डाले थे।

—मुझे तो साहित्यिक उपन्यास अधिक पसन्द है।

—मनुष्य का जीवन ही साहित्य है। जो उपन्यास मानव जीवन का सच्चा जीता-जागता चित्र नहीं उपस्थित करता मेरे अनुसार तो वह *साहित्य का अंग कहलाने योग्य नहीं।*

वे दोनों सड़क पर खड़े थे। राह के चलते पथिक मुड़-मुड़ कर उनको देखते जा रहे थे। दोनों कुछ क्षण चुप रहे। दो पल के लिए दोनों ने एक-दूसरे के हृदय की गहराई में प्रवेश करने का प्रयास किया। फिर नीरा के लाज का अवगुंठन बढ़ा और पलक नीचे झुक गये। नीरा ने कहा—

—यहां क्या खड़े है? चलिये घर चलिये।

—आपका घर पास है?

—जी हां, कोई दस मिनट का रास्ता है।

बेबी अब की से अपने को न रोक पाई। वह देख रही थी कि जब कि यह दोनों परस्पर में बात कर रहे हैं जो विषय उसकी समझ के बाहर था, वह क्यों न कुछ बोले और जहां उसके बोलने का अवसर मिला वह झट से बोल उठी।

—देखिये मेरे जाने से आपके मामा-मामी कुछ दूसरा मतलब न

निकालें।

नीरा राजेन्द्र का अभिप्राय समझ गई। वह एक बार कुछ लजाई सी फिर बोली—

—नही-नही, मेरे मामा-मामी ऐसे नही।

—अच्छा चलिये।

दोनों साथ-साथ चल दिये। कुछ देर तक दोनों चुप रहे। फिर नीरा बोली—

—कहिये, आपको नौकरी पसन्द आई।

—नौकरी, हम बाबू लोगो का भी कोई जीवन होता है। दिन भर कलम घिसते-घिसते ऑफिस मे बीत जाता है और फिर इसके साथ साहब को प्रसन्न करने के लिए कभी उनके बच्चों को दुकान ले जाओ कपड़ा खरीदने के लिए। जब चपरासी न हो तब उनके घर की सब्जी खरीदकर घर दे आओ। नौकरी क्या बस भगवान ही बचाये।

—लेकिन आचार्य साहब आपके साहब हैं। अजीब व्यक्ति हैं उनके लिए यह प्रसिद्ध है कि यदि वह किसी से प्रसन्न हो गये तो उसे चोटी पर चढ़ा दिया और किसी से नाराज हुए तो उसे न दीन का रखा न दुनिया का।

दोनों आगे बढ़ते जा रहे थे। राजेन्द्र कुछ देर विचार करके बोला—

—क्यों आपकी क्या राय है कि इस संसार मे सुख व प्रेम बंटता नही बिकता है?

यह प्रश्न जो राजेन्द्र ने उससे पूछा वह उतना प्रभावहीन नही था, लेकिन प्रश्न नीरा के हृदयतम मे प्रवेश कर गया। वह बोली—

—मेरे विचार से नही।—उत्तर छोटा था, लेकिन उसके भाव, उसके नयन उससे कुछ अधिक कह रहे थे। जिनको कि राजेन्द्र समझने का प्रयत्न न कर सका।

राजेन्द्र को लेकर नीरा ने अपने मामा के घर मे प्रवेश किया। उन्होंने घर का निचला भाग किराये पर ले रखा था। घर तीन मंजिला था। की मंजिल पर मकान मालिक स्वयं रहता था। सबसे निचले भाग के दो कमरे उनके अधिकार में थे। उस मकान मे लगभग आठ कुटुम्ब

रहते थे। जिस भाग में मीरा रहती थी, वह बड़ा अन्धकारमय था। सूर्य की किरण नीचे के भाग में नहीं पहुंचती थी। प्रायः उनको दिन में भी दीपक जलाना पड़ता था। प्रवेश करते ही एक छोटा-सा आंगन था, उसमें लगा एक नल था, सामने दो कमरे थे यह उनके अधिकार में थे। राजेन्द्र चारों ओर देखता रहा।

—काफी अंधेरा रहता है। उसने प्रश्न किया।

—अजी गरीबों के जीवन में अंधेरा ही रहता है।—मुस्करा कर मीरा ने कहा। राजेन्द्र बात का दार्शनिक रूप न समझ सका। फिर भी उसने एक गहरा-सा आघात किया।

—क्या किराया दे रही हो?

—बीस रुपया।

—बीस! इस अन्धकार में रहने के?

—हां उस पर भी लाला के नखरे बड़े हैं। प्रति मास भाड़ा बढ़ाने की धमकी देता रहता है?

—क्या काम करता है?

—थोक कपड़े का व्यापारी है, पर है बड़ा कंजूस दिल का बड़ा छोटा है। इतना कमाता है पर रहना फटे हाल, खाना भी क्या खाना है, बस न पूछो। दोनों आंगन में खड़े थे। राजेन्द्र उत्तर आंगन के सब सीढ़ियों के मध्य से मीरे आकाश को देखने का प्रयत्न कर रहा था।

—मनुष्य जितना बड़ा होता है उतना ही उसका हृदय छोटा हो जाता है। प्रेमचन्द जी ने अपने कई उपन्यास में इसका उल्लेख किया है।

देवी प्रसन्नता से [illegible] करने के बाद उधर अन्दर की मां को बुलाने गई थी कि उस समय उधर थी। राजेन्द्र ने देखा देवी [illegible] पकड़े [illegible] रही थी कहती—[illegible] देखो कौन आया है?

मीरा की [illegible] [illegible] सामने [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] उसका [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] उसकी [illegible] [illegible] मीरा पर पड़ा था और उसकी [illegible] [illegible] [illegible] हंसी। इससे पहले कि [illegible] कुछ कहे मीरा ने पहले ही कह दिया—

—मामी, यही राजेन्द्र जी है, आगरे के हैं।

—कब आये।

—जी, मैं तो यहीं काम करता हूं।

—हमारे साथ ही राशन में हैं।—नीरा ने शेष की पूर्ति की। बेबी जो अभी तक चुप-चाप खड़ी तीनों का मुख देख रही थी बोल उठी—

—मा, यह राजेन्द्र जी है न, यहां आने मे डर रहे थे।

बालिका ने इतने भोलेपन से कहा कि तीनों व्यक्ति हंस पड़े, सविता बोल उठी—

—अरे बैठो, खड़े क्यों हो ?

नीरा बाहर आंगन में खाट बिछाने लगी। सविता बोली—

—अरे ! बाहर भी कोई बैठने की जगह है, यह तो आम रास्ता है। आने-जाने वालों का तांता बना रहता है।

नीरा ने उसे अन्दर आने को कहा, वहा दो खाटें पड़ी हुई थी जिनका बिस्तर लिपटा उन पर ही पड़ा था। दीवार को देखने से ऐसा लगता था कि वर्षों से उन पर सफेदी नहीं हुई है। चूना इतना उतर गया है कि अन्दर की ईंट दिखाई दे रही थी। उन दीवारों पर कई तस्वीरें चिपक रही थी जैसे राम के बनवास जाने वाला चित्र, कृष्ण और राधा का कदम्ब के वृक्ष के नीचे खड़ा वाला चित्र। सबसे सुन्दर चित्र राजेन्द्र को वह लगा जिसमें कृष्ण जी बीच में है और गोपियां चारो ओर से घेरे उन पर रंग भरी पिचकारियां फेंक रही हैं, कृष्ण का एक हाथ मुख के एक ओर को छुपाये हुए था और दूसरा आगे बढ़ा यह संकेत कर रहा है कि अब तो बस करो। राजेन्द्र गोपियों की मुस्कान को पल भर के लिए देखने लगा। नीरा का घर अन्धकार से पूर्ण अवश्य था, परन्तु गन्दा तनिक भी न था। कुछ क्षण बैठ कर राजेन्द्र ने कहा—

—मामी जी, अच्छा चलूं।

—कहा रहते हो, बैठो तो।

—कुतुब रोड के पास।

—नीरा, ताक से पैसे निकाल कर बेबी को दे दे, दही ले आयेगी, लस्सी बना दे।

—नहीं मामी जी, आप व्यर्थ कष्ट कर रही हैं।

राजेन्द्र मना करने पर भी पार न पा सका। नीरा पल में ही लस्सी बनाकर ले आई। उसकी आंखों में एक मादकता थी, अधरों में मन्द मुस्कान लिये थी।

राजेन्द्र के हृदय-पटल पर उसकी यह मूर्ति उतर गई। वह एक पल तक उसकी ओर देखता रहा। नीरा की पलकें नीचे झुक गईं। उसने चाय पीने के बाद विदा मांगी। सविता ने कहा—कभी-कभी आया करो।

नीरा उसे छोड़ने द्वार तक आई। राजेन्द्र के मुख पर कुछ गम्भीरता थी जैसे किसी उलझन में फंसा हो उसका अधिक न बोला, केवल कर जोड़ कर नमस्ते की और सत्कार के लिए धन्यवाद दिया। नीरा द्वार पर खड़ी देखती रही जब तक वह आंख से ओझल न हो गया। बेबी जो पास खड़ी थी पूछ पड़ी।

—दीदी, ये हमारे कौन हैं ?

नीरा बता कह परन्तु इस प्रश्न ने उसके हृदय में एक गुदगुदी उत्पन्न कर दी। उसने उसे गोदी में उठा कर अपने हृदय से लगा लिया।

—दीदी राजेन्द्र बाबू तुम्हें बड़े अच्छे लगे। क्या तुमको भी ? इस प्रश्न ने नीरा का उन्माद अपरिमित कर दिया। उसने बेबी का मुख चूम लिया। भोली बालिका इस अज्ञात स्पर्श से प्रसन्न हो गई।

राजेन्द्र के विषय में नीरा जानना चाहती थी। उसके मुख पर जो कोमलता और गम्भीरता का मिश्रण रहता था वह उसे बड़ा अच्छा लगता, वह स्वयं भी गम्भीर प्रकृति की नारी थी। इसी कारण अपनी सी प्रकृति का मनुष्य अच्छा लगना उसके लिए स्वाभाविक ही था। उसका हृदय चाहता था कि वही उसके साथ बैठकर बातचीत करते रहें। [illegible] बार जब उनकी बात हुई तब उसको पता लगा कि राजेन्द्र का [illegible] संकुचित नहीं, उसके विचार अछूते और [illegible] वह [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

आले को उतार कर पटक देती, परन्तु फिर लाल बत्ती जल जाती और घंटी बजने लगती, और उसको कान पर आला लगाना पड़ता। उसको कभी-कभी ऐसा लगता मानो उसका सिर फट जायेगा, परन्तु नौकरी करनी थी। वह जानती थी कि मा की कमाई से कब तक काम निकल सकता है।

परन्तु जब से राजेन्द्र का उससे परिचय हुआ तब से उसको कार्यालय जाने में एक जिज्ञासा उत्पन्न हो गई। जब वह जाती उसकी आंखें चारों ओर हिरनी के समान खोजती रहतीं। लेकिन राजेन्द्र प्रायः कम ही मिल पाता था। या तो अपने स्थान पर बैठा काम करता रहता या अमृत के साथ कैंटीन में चला जाता।

आज उसे अवकाश मिला था जब कि वह राजेन्द्र से बात कर पाई थी। मनुष्य की जब किसी हार्दिक आकांक्षा की पूर्ति होती है तब उसको ऐसी प्रसन्नता होती मानो उसने कुबेर की सम्पत्ति पा ली हो।

सात

राजेन्द्र का हृदय नीरा के घर जाने के पश्चात बड़ा प्रभावित हो गया था। उसे उसके घर की सादगी अत्यन्त अच्छी लगी। इस अंधकारमय गृह में वह चन्द्रमा के समान थी। नीरा उस अंधकार का प्रकाश थी। निशा की रजतमयी ज्योत्सना थी। उसके सामने रह-रह कर उसके घर का चित्र आ रहा था और वह मुस्कराती हुई ऐसी लगती जैसे रजनी समाप्ति के पश्चात उषा की मुस्कान आच्छादित हो गई हो। राजेन्द्र को रात भर नींद न आई, वह पड़ा सोचता रहा।

दूसरे दिन वह अपने कार्यालय के कमरे में कुछ विचारपूर्ण लग रहा ...के कार्य में किसी प्रकार की शिथिलता नहीं आ रही थी। ...ी खिड़की से बाहर देख लेता फिर एक घूट पानी पी लेता, ...प्रकार उसके हृदय की विचारधारा टूट जाये, जिससे कहीं

उसके काम में त्रुटि न हो जाय। पांच महीने उसे काम करते हो गये थे।
अब कार्य उसके लिए दैनिक आवश्यक कार्यों के समान परिचित और सरल हो गया था।

पास बैठे गोस्वामी बाबू यह अनुभव कर रहे थे कि आज राजेन्द्र कुछ परेशान है। उन्होंने कहा—

—राजेन्द्र बाबू क्या बात है, आज कुछ चिन्ताग्रस्त दीखते हो?

—नहीं तो।—राजेन्द्र ने ऐसे कहा जैसे कोई छोटा बालक पढ़ते-पढ़ते सो गया हो, और उसके पिता उसे कहें कि सो रहे या पढ़ रहे हो और वह शीघ्रता से आख खोल पुस्तक की ओर देखने लगे और बोले नहीं तो मैं पढ़ रहा हूं। ठीक यही भाव राजेन्द्र के मुख पर थे।

—फिर भी बाबू, कुछ तो सोच रहे हो।

—क्या बताऊ गोस्वामी जी, कभी मैं बैठा-बैठा यह सोचता हू कि हम क्लर्कों का भी क्या जीवन है। दिन भर फाइलों से सिर मारते रहो और महीने के अंत में मिलते कितने गिन-चुने 120 रुपया। दिल्ली में तो इतने में एक का भी गुजर नही चल सकता फिर कोई कुटुम्ब कैसे चलाए।

—क्यों, तुम्हारे तो कुटुम्ब नही फिर ऐसी बातें क्यों सोच रहे हो आज। हमसे पूछो बाबू तीन लड़कियां है, तीनों जवान हो रही है और शादी योग्य है। यहां खाने-पहनने का तो गुजर कठिनता से होता है शादी की कैसे सोचूंगा। मोहल्ले वाले हैं सोचे डालते है कि शादी क्यों नही करते? हालत ऐसी है कि कोई भला आदमी 10 रुपया उधार तक देने का साहस नही करता है।—गोस्वामी बाबू के रुदन में आह थी। उनके कथन के बाद जो मुस्कान उनके मुख पर थी उसमें एक विषाद की झलक थी।

—सच हम लोगों की भी एक दर्द भरी कहानी है। केवल इतना मिलता नही कि कोई ऐसे मकान में रहे जहां बीमारी न रहे, अन्धकार में रहने वाले व्यक्ति के लिए जीवन भर अन्धकार नही तो क्या आलोक रहेगा?—राजेन्द्र जानता था यह बात उसने जो कही वह सीधा उस पर लागू थी। कहने के बाद न जाने क्यों वह इतना गम्भीर हो गया कि चुपचाप काम में लग गया।

वह काम करता रहा और काम में वह भी भूल गया कि उसको खाना

भी खाना है। उसका टिफिन वैसा का वैसा नीचे रखा था। राजेन्द्र काम
में संलग्न था कि उसके कान में एक सीटी की आवाज पड़ी। पीछे की
खिड़की में देखा तो अमृत था। उसके मन में कुछ ऐसा आ रहा था कि
अमृत को मना कर दे कि वह आज कहीं नहीं जायेगा। न जाने वह उसकी
कोई बात टालने का साहस नहीं करता था। वह उठ कर बाहर आया।
अमृत बोला—

—क्यों भई, घर में क्या चाचा-चाची ने मारा है।

—नहीं तो।—राजेन्द्र मुस्करा दिया।

—तो फिर क्या बात है। चलो चार बज रहे हैं जरा कैन्टीन में चाय
पी ली जाये।

—अरे मैंने तो खाना भी नहीं खाया।—राजेन्द्र को अब ध्यान आया।

—वाह भई, तुमको तो बिना शराब का नशा चढ़ने लगा।

—नहीं अमृत ,आज मेरी तबियत कुछ उचाट है।

—तो फिर चलो आज कोई सिनेमा रीगल में देखेंगे फिर 'गेलार्ड' में
भोजन करेंगे।

तबियत ठीक हो जायेगी। पिछले महीने मेट्रो गये उसके बाद अब तक
नहीं गये केवल तुम्हारे ही कारण।

—व्यर्थ रुपया फेंकने से क्या लाभ ?

दोनों कैन्टीन के द्वार तक पहुंच चुके थे। राजेन्द्र ने सामने से देखा कि
नीरा आ रही है। उसे देख कर न जाने उसके हृदय में क्या तूफान-सा आ
गया। ज्यों-ज्यों उसके पग उसकी ओर बढ़ रहे थे त्यों-त्यों उसकी धड़कन
तीव्र होती जा रही थी। उधर नीरा भी ज्यों-ज्यों पास आती जा रही थी
उसके पग तीव्र होते जा रहे थे। उसको ऐसा लग रहा था कि जैसे वह
लड़खड़ा कर गिर जायेगी। कैन्टीन के द्वार पर खड़े अमृत और राजेन्द्र
को देख कर उसके हाथ उठ गये।

अमृत उत्तर में केवल मुस्करा दिया और राजेन्द्र ने दोनों कर जोड़
दिये। नीरा के हृदय में आ रहा था कि वह राजेन्द्र को बुलाए और राजेन्द्र
यह चाह रहा था कि वह नीरा के साथ-साथ जाये। नीरा जब लगभग बीस
कदम आगे निकल चुकी तब उसने पीछे मुड़कर देखा तब राजेन्द्र की पीठ

पर हाथ रखते हुए अमृत बोला—

—क्यों भई क्या मामला है? यह क्या गोल-माल है?

—कुछ नहीं।—वह कुछ भिटपिटा गया।

—राजू कहीं यह दिल का सौदा तो नहीं।

—नहीं, पर लड़की मुझे अच्छी लगती है।

—और तुम उसको अच्छे लगते हो।

—यह मैं नहीं कह सकता।

—तो फिर उसने मुड़ कर क्यों देखा?

—पता नहीं क्यों?

—राजू, मैं नहीं चाहता—कि तुम नीरा के स्वर्ण जाल में फंसो। यह प्रेम आदि अमीरों के चोचले हैं, हमारे नहीं।

—तुम्हारा मतलब है कि गरीब प्रेम नहीं कर सकते हैं।

—हां, क्योंकि आज के समय में प्रेम चलता है दौलत से, रुपये-पैसे से।

—तुम्हारे अनुसार प्रेम किया जाता है, हो नहीं जाता और चंद चांदी के टुकड़ों से खरीदा जाता है।

—हां राजू, तुमने अभी दुनिया नहीं देखी है। मैंने इसी दिल्ली में अनेकों को प्रेम करते देखा है और उनको आपस में अलग-अलग होते देखा है, धन बीच में दीवार बन जाता है।

—पर वह तो धनवान नहीं है।

—यही सबसे बड़ी कमजोरी है, तुमको कदाचित पता नहीं राजू, निर्धन धन के लिए प्रेम बेच भी देते हैं।

—अमृत बस करो, तुम्हारे विचार मेरे लिए नितांत नये हैं जिनको मैं समझने में असमर्थ हूं। लेकिन प्रेम कोई चीज अवश्य है, प्रेम बिकता नहीं है।

—अच्छा चलो फिर देखेंगे। थोड़ी देर तुम कैन्टीन में चाय पियो और खाना खाओ। पांच बज रहे हैं मैं अपने कार्ड ले आऊं नहीं तो पंडित जी चिन्ता रहे होंगे कि मैं नौकर बैठा हूं जो कि छः बजे तक तुम्हारे कार्ड लिये बैठा रहूं।

राजेन्द्र और अमृत अपने-अपने दफ्तर में चले गये।

आने में झिझकती, तो किसी के घर पर मोटा-सा ताला।

काम समाप्त होने पर दोनों ने अपनी साइकिलें एक राशन की दुकान पर रखी और पैदल लगभग दो मील चले होंगे। यात्रा के अधिक भाग में राजेन्द्र चुप ही रहा। अमृत का भी अपने सिगरेट के कश में और सड़क पर चलती जनता को देखने में समय अच्छा कट रहा था। अजमेरी गेट से दाहिनी ओर मुड़ने पर राजेन्द्र ने कहा—

—यह कोई नई सड़क है ? मैं यहां कभी नहीं आया।

उसने ऊपर दुकान पर लगे बोर्ड पर सड़क का नाम लिखा हुआ पढ़ा जी० बी० रोड। प्रवेश करने से पूर्व लिखा था कि फौजियों के लिए इस सड़क पर आना मना है। राजेन्द्र को कुछ आश्चर्य हुआ कि कैसी सड़क है। इसी कारण उसने अमृत से प्रश्न किया।

—हां, थोड़े दिनों बाद चिर-परिचित हो जायेगी।

वे दोनों चले जा रहे थे। राजेन्द्र पीले रंग से पुते तीन मंजिले ऊंचे मकानों को देखता जा रहा था। इतने में किसी छोटे से बालक ने कहा—'बाबूजी' राजेन्द्र ने कुछ सुना नहीं, फिर उसने उसकी कोहनी से पकड़ कर कहा—बाबूजी कुछ तफरी।

राजेन्द्र ने देखा एक लड़का है काफी मैले कपड़े पहने है, नौकर की कमीज बाहर है, मुख में बीड़ी है, बालों में शायद महीने से तेल नहीं पड़ा जिसके कारण वे जटाओं के समान हो रहे हैं। राजेन्द्र ने अमृत की ओर देखा उसके शून्य भाव और अज्ञानता से अमृत मुस्करा उठा। उसने उसको भाग जाने का आदेश दिया।

अमृत राजेन्द्र को लेकर एक पांच-दस कदम के जीने पर चढ़ गया। जीना काफी चौड़ा सीमेन्ट का था, नीचे पान की दुकान थी, उसके पास कुछ मालायें भी थी। उसने मालाओं के लिए संकेत से पूछा पर अमृत ने मना कर दिया। राजेन्द्र और अमृत ने जब ऊपर बिजली से तेज चमकते हुए कमरे में प्रवेश किया तब एक बूढ़ी पोपली औरत जो पान चबाने का प्रयत्न कर रही थी उसने कहा—आओ अभी गुलबदन आ रही है।

राजेन्द्र को यह स्थान नितान्त अपरिचित-सा लग रहा था। चारों ओर रंग-बिरंगी फोटो लगी थी। अधिकतर नारियों की थीं। कोई-कोई

चित्र नग्न नारी का भी था। ऊपर बिजली का पंखा लगा था, जिसके पंख गर्मी के समाप्त होने के कारण निकाल लिये थे। नीचे कमरे के तीन ओर मोटे-मोटे तकिए लगे थे, बीच में काफी स्थान खाली था। सामने की ओर तकिए आदि नहीं रखे थे। राजेन्द्र चारों ओर देख रहा था। वह विचार रहा था कि यह कौन-सी दुनिया है। इतने में एक स्त्री, कद जरा लम्बा, मोटी-सी पीछे चोटी, सिर में मुगल ढंग का मांग टीका, चूड़ीदार पायजामा और कुर्ता, जिसके उभरे हुए वक्ष स्थल पतली-सी चुन्नी में से झाक रहे थे। उसका मुख उसी प्रकार से पुता हुआ था, जिस प्रकार से राजेन्द्र ने मेट्रो की स्त्रियों का देखा था। उसने झुककर तसलीम की। इस प्रकार से तस-लीम करते राजेन्द्र ने एक ऐतिहासिक चित्रपट में देखा था, जो कि मुगल साम्राज्य से सम्बन्धित थी। राजेन्द्र और अमृत एक तकिए का सहारा लिये बैठे थे। स्त्री ने कहा—हुजूर आज जल्दी आये पर काफी दिनों बाद आये। इसके बाद वह राजेन्द्र की ओर बैठती हुई बोली—हुजूरे आला ! आज हमारे गरीबखाने में पहले-पहल आये हैं।

—हां गुलबदन बेगम !—एक आह भरने के बाद अमृत ने कहा।

—फिर क्या हुक्म है हुजूर—दादरा, ठुमरी, कजरी, गजल या कोई फिल्मी, पर हुजूर थोड़ी देर बाद देखिएगा महफिल का रंग।

राजेन्द अज्ञान अवश्य था, लेकिन उसे समझने में देर न लगी कि वह एक नाचने वाली के घर में है। उसे ऐसा लगा कि वह नरक में गिर गया। उसके हृदय में आया कि वह एक जोर का तमाचा इस वेश्या के मारे और एक अमृत के भी।

—हुजूर, थोड़ी देर इन्तजार करिये, तशरीफ रखिए। अभी ऊपर उस्ताद अमीर खां अपनी सारंगी के तार तान रहे हैं। श्याम अपना तबला ठीक कर रहे हैं। हुजूर, शकूर तो गजब का हारमोनियम बजाता है अभी नया ही आया है पर सारे बाजार में उसकी धाक जम गई। गुलबदन कह रही थी राजेन्द्र देख रहा था कि उसके बात कहने में अदा थी। नयनों का नचाना और कटाक्ष करना, हाथों का घुमाना उसको विशेष अच्छा नहीं लग रहा था।

—गुलबदन बेगम, यदि तुम इनसे प्रेम करो तो यह तुम्हारे पास रोज

आइयेगे।

—हुजूरे आला, आप कुछ देर बैठिये आपका दिल यहां से जाने को कुछ नहीं चाहेगा। यहां एक बार जो आया है वह सौ बार फिर आया है।

इसके बाद वह फिर सभ्यता की ओर उसने बड़े प्रेम से गुलाब का फूल राजेन्द्र के कपोलों पर घुमा दिया। इसके बाद बांकी चितवन से कटाक्ष कर वह अन्दर चली गई।

दोनों कुछ देर बैठे रहे। राजेन्द्र बार-बार चलने को कह रहा था और अमृत रोक रहा था। धीरे-धीरे लोगों का तांता बंधना शुरू हो गया। आठ बजते-बजते हाल यह हो गया कि बैठने को तिल भर भी जगह न रह गई। सामने जो स्थान खाली था वहां पर सारंगी, तबला तथा हारमोनियम वाले बैठे थे। उन्हीं के मध्य बैठी थी वह बूढ़ी पोपली औरत। जो इस समय बैठी सुपारी कतर रही थी। कुछ ही देर बाद जब गुलबदन ने उस कमरे में प्रवेश किया कमरा सिगरेट के धुए से भर रहा था। आकर *उसने झुककर तसलीम की। अश्लील वाक्यों से उसका स्वागत किया गया।* उसको स्वीकार करने में भी उसको एक गर्व-सा हो रहा था कि वह विद्युत सी इतने लोगों को तड़पा रही है। कुछ ही देर में स्वरों के अलाप के साथ उसने गाना आरम्भ किया।

'हाय राम, तिरछी नजरिया से मार गयो। बेदर्दी सैयां' लोग *'वल्लाह वल्लाह वाह वाह'* करके झूम रहे थे और वह गीत गाते-गाते झुक-झुक कर एक एक के पास जाती और लोग अपने हाथ से उसको नोट देने में गर्व समझ रहे थे और वह नोट बूढ़ी के सामने रखी हुई पान की तश्तरी में रखती जा रही थी। राजेन्द्र को उस कमरे में घुटन लग रही थी। तथा लोगों के मुख से दुर्गंध आ रही थी। वह अपने को अधिक न रोक सका। ज्वर के तेज प्रकार का वेग उसके हृदय में क्रांति उत्पन्न कर रहा था। वह उठ कर चल दिया। अमृत को भी महफिल से उठना पड़ा। उसने कुछ बात की और तश्तरी में पांच का नोट रख कर राजेन्द्र के साथ हो लिया। राजेन्द्र ने देखा कि कुछ लोग जो कदाचित गरीब है जीने में ही खड़े-खड़े अपना कलेजा मसल रहे हैं। नीचे

खड़े जिसने वाले कह रहे थे कि जानिम ने बना रूप और मना पाया है।

स्टेज पर पहुंचने पर अमृत ने कहा—

—क्यों राजू यहाँ क्यों आये? प्रेम बिकता देखा नहीं, प्रेम लुटता भी देखना चाहते हो, पर यह भी स्वांग है?

राजेन्द्र ने अमृत की ओर देखा और एक दृष्टि से ऊपर देखा और दोनों ने अपने पग आगे बढ़ा दिये।

—इन फूलों से सुगन्ध और पराग लूटने का प्रयत्न न करो अमृत! यह ऐसा ही होगा जैसे कि दिन को रात बताना और सूर्य को चन्द्रमा बताना।—आज राजेन्द्र की बात में ओज था।

—तुमने देखा नहीं जितने लोग थे जो उनके कदमों पर रुपये लुटा रहे थे। उनमें बैठने वाले दो-चार को मैं भी जानता हूँ। कोई पंडित जी हैं, कोई सेठ है तो कोई हमारे समाज के कहलाने वाले धर्मात्मा और दानी हैं। सबके सिर हमारे समाज में ऊंचे हैं पर यहां सब झुकते हैं। एक एक अदा पर सौ-सौ रुपये फेंकते हैं। जब धनवान लोग अपना सुख चांदी के टुकड़ों से खरीद सकते हैं तो क्या हमारा अधिकार नहीं? गरीबों के लिए वह द्वार बन्द क्यों? क्या उनके सीने में दिल नहीं? देखा नहीं तुमने कितने लोग जीने में और नीचे खड़े ही कान लगाये सुन रहे थे। ऐसा लग रहा था जैसे अमृत इस उत्तर के लिए पहले से तैयार हो।

—पर क्या तुम उन चंचल नयनों के घुमाव-फिराव और धन के लिए पसारे जाने वाले हाथ तथा उनकी चन्द अदाओं को प्रेम कहते हो। ऊपरी चटक-मटक और अन्दर के खोखलेपन को तुम सौन्दर्य कहते हो। बेसुरे स्वर के उतार-चढ़ाव को राग-रागनी कहते हो। उनका संसार कृत्रिम है? अमृत कृत्रिम?—राजेन्द्र के स्वर तीव्रता से निकल रहे थे।

—उनका संसार सुन्दर है, नहीं तो उनमें प्रवेश करने के लिए लोग इस प्रकार से जाने का क्यों प्रयत्न करते?

—अमृत! धनवान गर्व के कारण यदि कोई बुरा कार्य करते हैं तो हमारा यह कर्त्तव्य नहीं है कि हम भी उनको अपनायें। वे कोई परमात्मा हैं नहीं जो कि उनके कार्य देव-तुल्य हों। यह भूल है, अमृत यह भूल है। प्रेम बिकता नहीं प्रेम अमूल्य है।

—किताबी दुनिया में विचरने वाले सब ऐसे ही होते हैं। प्रेम गरीबों के लिए स्वप्नमय, लेखकों के लिए काल्पनिक और धनवानों के लिए विलासमय होता है। प्रेम, प्रेम के रूप में कहां मिलता है।

राजेन्द्र को अमृत का यह वाक्य कुछ भारी लगा। उसके अर्थ ने उसकी आन्तरिक विचारधारा पर प्रभाव डाला। वह मौन हो गया और रास्ते में भी अधिक न बोला। घर आकर उसने थोड़ा बहुत खा लिया और चुप-चाप जाकर बिस्तरे पर लेट गया। चाची ने कुछ पूछा नहीं, सोचा था कि बेचारा दिन भर के परिश्रम से थक गया होगा।

—राजेन्द्र के नयन मुंदे हुए थे पर उसमें नींद नहीं थी। रह-रह कर उसके सम्मुख गुलबदन के कोठे के चित्र बनते और मिटते थे। उसकी आत्मा उसको धिक्कार रही थी कि आज वह वेश्या के घर गया है। उसने कितने उपन्यासों में पढ़ा है कि लोग वेश्या के घर जाकर अपने परिवार को नष्ट कर चुके हैं। उसे अपने पर क्षोभ हो रहा था कि उसने उस नरक में पाँव क्यों रखा। यदि आज मीरा को पता लग जाये तो उसे वह पापी समझे और कदाचित बात करना भी अच्छा न समझे। उसने अपने को धिक्कारा।

परन्तु उसके सामने एक बार फिर गुलबदन की मूर्ति सजीव हो उठी। क्या ऊपरी चटक-मटक थी। उसके नयनों की हर अदा में चाँदी के टुकड़ों के लिए तृष्णा थी उसमें प्रेम था कहां? सौदागरों की दुकान के समान उसकी भी दुकान थी पर क्या उसका सौदा प्रेम था? नहीं कदापि नहीं। फिर लोग क्यों जाते हैं? अमृत कह रहा था कि समाज के वे लोग जिनका आदर-सत्कार होता है, वे वहां जाते हैं। क्या समाज इतना अज्ञानी है अथवा अन्यायी है, यदि है तो ऐसा क्यों?

एक गुलबदन तो दूसरी मीरा। आकाश-पाताल का अन्तर था दोनों में। उसकी सादगी में भी एक सौन्दर्य है। उसके नयनों में एक आकर्षण है, उसके स्वरों में वीणा की एक झंकार है, उसकी बातचीत में भी एक संगीत है। कहां वह और कहां गुलबदन क्या दोनों की तुलना की जा सकती है? कभी दीपक का आलोक सूर्य के सम्मुख टिका है।

परन्तु अमृत का कथन कि प्रेम गरीबों के लिए स्वप्नमय, लेखकों के

लिए काल्पनिक और धनवानों के लिए विलास के रूप में है। क्या यह सत्य है ? क्या जो कुछ उसके और नीरा के मध्य में है सब स्वप्न है ? और वह क्या सब भूल जाये ? पर क्या नीरा के हृदय मे भी इसके प्रति प्रीत है लेकिन उसने अभी तक कुछ जानने का प्रयास नही किया, पता नही शायद कुछ भी न हो। उसके सामने चारो ओर अंधकार था, बाहर भी और अन्दर भी और उस अंधकार मे वह कुछ खोजने का प्रयत्न कर रहा था।

आठ

आज महीने का पहला दिन था। छोटे बाबू कृष्णचन्द्र जी लोगों को वेतन के चेक दे रहे थे। दो-एक मास्टर भी सामने बैठे थे। बड़े बाबू हरि गोपाल जी अपने कार्य में संलग्न थे। बराबर में बैठा एक बाबू टाईप की मशीन पर तेजी से हाथ चला रहा था। खट-खट की ध्वनि से कमरा गूंज रहा था। छोटे बाबू ने एक अध्यापक को वेतन दिया। चेक लेकर वह गम्भीर हो गया। कृष्ण चन्द्र जी ने प्रश्न किया—

—शर्मा जी, क्या बात है? सबको वेतन मिलने पर प्रसन्नता होती है, एक आप है आपका मुख वेतन मिलने के पश्चात् गम्भीर हो जाता है ?

—जब वेतन मिलता है छोटे बाबू, तब हृदय मे कसक उठ कर र जाती है। 80 रु० के वेतन मे क्या होता है ? तीन बच्चे हैं, उनका कैसे कोई पालन करे ? क्या खुद खावे, क्या दूसरों को खिलाये। सोचता हूँ सबको जहर खिला दूं।

—शर्मा जी यह आपके साथ ही नही सब केसाथ होता है।—साथ बैठे अध्यापक ने कहा—मेरे भी दो बच्चे है, अभी से उनकी इतनी चिन्ता है कि सोचते-सोचते कभी सिर में दर्द होने लगता है।

—वर्मा जी, आप ठीक कहते हैं, हम लोग बहनों को बहलाते हैं राष्ट्र

लिए काल्पनिक और धनवानों के लिए विलास के रूप में है। क्या यह सत्य है? क्या जो कुछ उसके और नीरा के मध्य में है सब स्वप्न है? और वह क्या सब भूल जाये? पर क्या नीरा के हृदय में भी इसके प्रति प्रीत है लेकिन उसने अभी तक कुछ जानने का प्रयास नहीं किया, पता नहीं शायद कुछ भी न हो। उसके सामने चारों ओर अंधकार था, बाहर भी और अन्दर भी और उस अंधकार में वह कुछ खोजने का प्रयत्न कर रहा था।

आठ

आज महीने का पहला दिन था। छोटे बाबू कृष्णचन्द्र जी लोगों को वेतन के चेक दे रहे थे। दो-एक मास्टर भी सामने बैठे थे। बड़े बाबू हरि गोपाल जी अपने कार्य में संलग्न थे। बराबर में बैठा एक बाबू टाईप की मशीन पर तेजी से हाथ चला रहा था। खट-खट की ध्वनि से कमरा गूंज रहा था। छोटे बाबू ने एक अध्यापक को वेतन दिया। चेक लेकर वह गम्भीर हो गया। कृष्ण चन्द्र जी ने प्रश्न किया—

—शर्मा जी, क्या बात है? सबको वेतन मिलने पर प्रसन्नता होती है, एक आप हैं आपका मुख वेतन मिलने के पश्चात् गम्भीर हो जाता है?

—जब वेतन मिलता है छोटे बाबू, तब हृदय में कसक उठ कर रह जाती है। 80 रु० के वेतन में क्या होता है? तीन बच्चे हैं, उनका कैसे कोई पालन करे? क्या खुद खायें, क्या दूसरों को खिलायें। सोचता हूँ सबको जहर खिला दूं।

—शर्मा जी यह आपके साथ ही नहीं सब के साथ होता है।—साथ बैठे अध्यापक ने कहा—मेरे भी दो बच्चे हैं, अभी से उनकी इतनी चिन्ता है कि सोचते-सोचते कभी सिर में दर्द होने लगता है।

—वर्मा जी, आप ठीक कहते हैं, हम लोग कहने को कहलाते हैं राष्ट्र

लिए काल्पनिक और धनवानों के लिए विलास के रूप में है। क्या यह सत्य है? क्या जो कुछ उसके और नीरा के मध्य में है सब स्वप्न है? और यह क्या सब भूल जाये? पर क्या नीरा के हृदय में भी इसके प्रति प्रीत है लेकिन उसने अभी तक कुछ जानने का प्रयास नहीं किया, पता नहीं शायद कुछ भी न हो। उसके सामने चारों ओर अंधकार था, बाहर भी और अन्दर भी और उस अंधकार में वह कुछ खोजने का प्रयत्न कर रहा था।

आठ

आज महीने का पहला दिन था। छोटे बाबू कृष्णचन्द्र जी लोगों को वेतन के चेक दे रहे थे। दो-एक मास्टर भी सामने बैठे थे। बड़े बाबू हरि गोपाल जी अपने कार्य में संलग्न थे। बराबर में बैठा एक बाबू टाईप की मशीन पर तेजी से हाथ चला रहा था। खट-खट की ध्वनि से कमरा गूंज रहा था। छोटे बाबू ने एक अध्यापक को वेतन दिया। चेक लेकर वह गम्भीर हो गया। कृष्ण चन्द्र जी ने प्रश्न किया—

—शर्मा जी, क्या बात है? सबको वेतन मिलने पर प्रसन्नता होती है, एक आप है आपका मुख वेतन मिलने के पश्चात् गम्भीर हो जाता है?

—जब वेतन मिलता है छोटे बाबू, तब हृदय मे कसक उठ कर रह जाती है। 80 रु० के वेतन में क्या होता है? तीन बच्चे हैं, उनका कैसे कोई पालन करे? क्या खुद खाये, क्या दूसरो को खिलाये। सोचता हूं सबको जहर खिला दूं।

—शर्मा जी यह आपके साथ ही नही सब केसाथ होता है।—साथ बैठे अध्यापक ने कहा—मेरे भी दो बच्चे है, अभी से उनकी इतनी चिन्ता है कि सोचते-सोचते कभी सिर में दर्द होने लगता है।

—वर्मा जी, आप ठीक कहते हैं, हम लोग कहने को

के निर्माता, राष्ट्र का भविष्य बनाने में और कल के नेता के हम पोषक हैं, परन्तु मिलता क्या है 80 रु०। इससे अधिक तो भवन के निर्माता मजदूर कमा लेते हैं। कब तक यह शोषण चलता रहेगा।

—सच है अध्यापकों की गाथा बड़ी दुख-भरी है। यह न मजदूरों व किसानों के समान खुले आम हड़ताल कर विरोध कर सकता है और न उस के समान साधारण अवस्था में रह सकता है आज सबसे दुखदाई श्रेणी हम लोगों की है। सरकार को भी पता है हम लोग कितने शक्तिहीन हैं।—कृष्ण चन्द्र जी ने कहा।

—अब आप ही कहिए, मुझे नौकरी दी है 9 महीने के लिए। मई तक वेतन मिलेगा। मई के बाद तीन महीने क्या पेट में पत्थर डालकर पड़ा रहूं। फिर जुलाई में कहीं दूसरा स्थान ढूंढो। देश की बेकारी ने नौकरी की भावी सुरक्षा भी तो छीन ली है।—टाईप पर अगुली चलाने वाले बाबू ने अपनी अगुलियों को रोककर पीछे मुड़कर कहा।

—सच कहते हो सक्सैना, आज कल तो शिक्षा के केन्द्र भी धन कमाने के यन्त्र हो गये हैं। यह हमको पता है कि कितनी सरकार से सहायता आती है और किस प्रकार से स्कूल व कॉलिज में बचत की जाती है।—शर्मा जी ने कहा।

—आज ही इन्सपेक्टर आने वाले हैं देखो व्यवस्थापक से लेकर चपरासी तक सब लगे हैं। बाहरी दिखावा और अन्दर से खोखलापन। विद्यार्थियों को धोखा, सरकार से विश्वासघात।—वर्मा जी बोले।

बड़े बाबू अपने कार्य में संलग्न थे, लेकिन सब सुन रहे थे, कागज पर नीचे मोहर लगाकर उसे पास की ट्रे में रखने के बाद बोले—

—जो आप लोग कह रहे हैं सब ठीक है। हमको वेतन कम मिलता है, हमारी दशा खराब है। लेकिन हमें कार्य उसी प्रकार से करते रहना चाहिए क्योंकि यह मानव का कर्त्तव्य है कि वह अपने कर्त्तव्य की पूर्ति करे, फल की इच्छा न करे। भगवान सबको देने वाला है।

बड़े बाबू के समान उपदेश यदि कोई दूसरा देता तो अवश्य उसका मजाक उड़ाया जाता। परन्तु बड़े बाबू 20 वर्ष से अधिक उस विद्यालय में कार्य कर रहे थे। उनके सामने बहुत से विद्यार्थी अध्यापक बन गये थे।

इस कारण विद्यार्थी ही नहीं अध्यापक तक उनका आदर करते थे। परन्तु कृष्ण चन्द्र जी कुछ उग्र विचार के थे वह न सहन कर पाये, बोले—

—बड़े बाबू, गीता का यह उपदेश मैंने कई बार सुना है। दिल को बहलाने की बड़ी सुन्दर विधि है, इस संसार के यथार्थ जीवन में क्या इस का मूल्य है? आप अपने को देख लीजिए 20 वर्ष से यहां खून-पसीना एक करते हैं और मिलता क्या है 90 रु०। यह कहां तक ठीक है? आपका यह ऊनी काला कोट आठ वर्ष से मैं देख रहा हूं।

—पर मुझको कभी अधीर देखा है? जितना मिलता है मनुष्य को उसी में सन्तोष कर लेना चाहिए। आत्मा और मानसिक शांति के लिए यह परम आवश्यक है।—बड़े बाबू ने बराबर की रखी हुई फाईल खोली और उसके नीचे मोहर लगाकर अपने हस्ताक्षर करके उसको भी यथास्थान पर रख दिया।

—यह धार्मिक श्रद्धा का प्रभाव है।—शर्मा जी ने कहा।

इतने में चपरासी ने एक पत्र लाकर बड़े बाबू के हाथ में दे दिया। बड़े बाबू उसको पढ़ने लगे, पढ़ते समय उनके मुख पर एक प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। सबकी आंखें बड़े बाबू की ओर लगी हुई थीं। उनमें प्रसन्नता की झलक देखकर वर्मा जी बोले—

—क्या बात है बड़े बाबू, आज कोई शुभ समाचार है।

—हां, राजू आ रहा है। परसों रात को।

—फिर तो सत्य नारायण की कथा तो होनी चाहिए।—शर्मा जी बोल उठे।

इतने में विद्यालय का घंटा बजा। और दोनों अध्यापक शर्मा जी और वर्मा जी उठ कर चल दिये। बड़े बाबू और छोटे बाबू अपने काम में लगे थे।

बड़े बाबू को आज प्रसन्नता हो रही है उनका हृदय का टुकड़ा परसों उनसे लगभग छः महीने बाद मिलेगा। उनका जी चाहता है कि शीघ्रता से परसों की रात आ जावे, तब देखें कि उनका लाल कैसा हो गया है। रहे थे कि बाहर रहता है दुबला हो गया होगा। उनका स्नेह के लिए अधिक होना स्वाभाविक था। एक तो उसकी मां उसको

छोटी आयु में ही छोटकर स्वर्ग सिधार गई थी। दूसरे उसको दूसरी मां म ममता न मिली थी। यदि उसे वह पिता का प्यार नहीं देते तो नन्हें बालक के हृदय पर कितना आघात पहुंचता। इसकी कल्पना वह जब करते तब उनका हृदय कांप उठता। जब कभी शैशव में गंगा कुछ डांटती अथवा मारने लगती तब वह अवश्य राजेन्द्र का ही पक्ष लेते। उनका हृदय राजेन्द्र को देखने के लिए कितना इच्छुक था।

और सत्यनारायण की कथा। उसका ध्यान आते ही उनके सामने वह घटना आ गई जबकि उन्होंने गंगा से कहा था। गंगा ने किस प्रकार का कटाक्ष किया कि वह अपना हृदय पकड़ कर बैठ गये थे। इसके बाद कभी उनको साहस नहीं हुआ कि वह पुनः कहते।

जब वह घर पहुंचे तब उन्होंने गंगा से कहा—

—अरी सुनती हो!

—क्या है?—बाहर आंगन में बैठी दाल बीनती हुई गंगा बोली।

—रज्जू आ रहा है।

—कब? उसने रुपये भेजे कि नहीं?

—परसों, तुम बस पहली तारीख से ही शोर मचाना शुरू कर देती हो। आयेगा तो अपने साथ लेता आयेगा।

—लेता आयेगा, यदि रुपया नहीं लाया तो उसे रोटी नहीं मिलेगी।

—गंगा!—उन्होंने तनिक उच्च स्वर में कहा—क्या तुम्हारे सीने में हृदय नहीं है? मैं कितनी बार कह चुका हूं गंगा, उसको अपना समझने का प्रयत्न करो। कितना प्रेम करता है वह तुम्हें।

—बड़ा करता है।—आंखें निकाल कर गंगा ने त्योरी चढ़ाते हुए कहा और रसोई में चली गई।

हरि बाबू कितनी प्रसन्नता से आये थे और उन्हें मिला क्या? जली-कटी बातें। उनकी दशा सागर की उस हर्षित लहर के समान थी जो वि तट की ओर बढ़ती है और किनारे के पाषाणों से टकरा कर छितरा जाती है। वह चुपचाप चले गये। बोले कुछ नहीं, वह जानते थे कि बोलने से व्यर्थ लाभ उल्टे दो-चार और सुनने को मिल जायेगी।

नौ

राजेन्द्र कई दिनों से नीरा को मिलने का प्रयत्न कर रहा था, परन्तु वह उसे मिल ही नहीं रही थी। प्राय: उसका और नीरा का समय मिलता था। वह मोरी गेट के चौराहे से लेकर साइकिल-स्टैंड तक कहीं-न-कहीं अवश्य मिल जाती और जिस दिन न मिलती, उस रोज वह उसके कमरे में चला जाता। परन्तु इधर तीन-चार दिन हो गये उसे नीरा न दिखाई दी। अब उसे उसकी कमी प्रतीत हुई। वह अपने विभाग में कार्य करता, पर आंखें उसकी खिड़की की ओर लगी रहती। उसने सोचा कि आज वह अवश्य उसके घर जायेगा पता नहीं क्या बात है? क्यों नहीं आई। पहले तो उसने जब कभी विचारा तब यह सोचकर नहीं गया कि इसके मामा-मामी क्या कहेंगे। परन्तु आज उसने दृढ़ निश्चय कर लिया था। उसे ऐसा लग रहा था कि जैसे उसके शरीर का कोई आवश्यक अंग निकाल लिया गया हो। राजेन्द्र साइकिल-स्टैंड पर से साइकिल निकलवा ही रहा था कि पीछे से किसी ने कहा—

—राज!

—अरे नीरा!

राजेन्द्र को 'राज' नाम से बड़ा प्रेम था। उसने एक-दो फिल्मों में भी देखा था कि नायिका नायक को 'राज' कह कर पुकारती है। उस समय उसकी भी यह इच्छा होती कि उसको भी कोई 'राज' कहकर पुकारे। उसका नाम भी राजेन्द्र है और राज कह कर पुकारा जा सकता है, पर वह पुकारा जाता था 'रज्जू' या 'राजू' कहकर। नीरा ने जब पहली बार दफ्तर जाते समय राज कहकर पुकारा तब उसे कितनी प्रसन्नता हुई जैसे उसके शरीर का कुछ रक्त बढ़ गया हो। उसने नीरा से कह दिया था कि वह उसे राज कहकर पुकारे तब से वह इसी नाम से पुकारा करती थी। वह जब कभी राज कहती क्षण भर के लिए उसके सम्मुख उस नायक और नायिका का चित्र उपस्थित हो जाता और पल भर के लिए वह अपने को ौर नीरा को उन्हीं के समान समझने लगता।

दोनों अपलक दृष्टि से कुछ क्षण तक एक-दूसरे की आंखों की गहराई में डूब कर हृदय तक पहुंचना चाहते थे। राज ने कहा—

—कहां रही नीरा ?

वह अपनी साइकिल लेकर चलने लगा और नीरा भी साथ-साथ चलने लगी।

—मामी की तबीयत तीन-चार दिन से खराब थी।

—अब कैसी है।

—ठीक है।

—कल तुम आई थी ?

—जी।

—दिखाई नहीं दी ?

—देखने का प्रयत्न ही नहीं किया गया—नीरा कहकर कुछ मुस्कराई।

—यह तो मेरे हृदय से पूछो।

—अच्छा जी, आपका हृदय भी है। उसकी मुस्कान मन्द हंसी में परिवर्तित हो गई।

—क्यों क्या पत्थर का समझ रखा है ?

—नहीं, मैं समझती थी कदाचित आपका बुद्धिपक्ष इतना प्रबल है फिर हृदयपक्ष का कोई स्थान ही नहीं।

—हां पहले था पर धीरे-धीरे तुम्हारे साथ रहते-रहते ऐसा लगता है कि केवल हृदयपक्ष ही रह गया है।—राजेन्द्र के मुख पर हल्की सी प्रसन्नता की झलक थी। उसका मुख एक खिले कुसुम के समान उज्ज्वल लगता था। नीरा के नयनों में दो दीप जल उठे और राजेन्द्र कह उठा—

—नीरा, मेरे प्रेम के अंधकार में तुम दीप के समान हो, तुम्हारे बिना मेरे जीवन में सब अंधेरा है।

पहली बार राजेन्द्र के मुख से प्रेम की अभिव्यक्ति की बात निकली थी। उसके अधरों में कम्पन था। उसने कई बार सोचा था कि कह दे परन्तु साहस नहीं होता था। क्या जाने इसका क्या उत्तर हो। यदि कोई किसी से इस बार प्यार कर लेता है तो उसका यह अर्थ तो नहीं लगाया जा सकता है कि वह उससे प्रेम भी करता है। किसी के स्नेह और सहानुभूति को प्रेम का

ध्यान तो नही दिया जा सकता है। जब कभी वह विचारता तो बात अधरों तक आती लेकिन उसकी जिह्वा नही हिलती, अधरों में कम्पन होकर रह जाता। आज न जाने कैसे यह स्वर फूट पड़े। वह यह तो गया पर उसको अकस्मात ऐसा लगा कि उसने अनुचित बात यह दी जो कि उसे नही कहनी चाहिए थी। उसने नीरा के मुख की ओर देखा उसका मुख ऐसा लग रहा था जैसे कि किसी कलाकार ने अरुण रंग की तूलिका फिरा दी हो। उसने आज तक नीरा का मुख इतना लाल न देखा था। राजेन्द्र उसको देखकर तनिक सिटपिटाया। सड़क पर चलते-चलते क्या उसे ऐसी बात करनी चाहिए थी। सत्य करता था अमृत कि वह संसार के लिए नितान्त अज्ञानी है। राजेन्द्र ने कहा—

—चलो निकलसन पार्क में बैठा जाये।

वे लोग मोरी गेट से आगे निकल चुके थे। कुछ देर मौन रहने के पश्चात नीरा जिसको कि इस वाक्य को सुनकर ऐसा लग रहा था कि मानो धरती खिसकी जा रही है, सब कुछ आंखो के आगे घूम रहा हो, पांव ऐसे हो रहे थे जैसे किसी ने बेड़ी पहना दी हों, दुर्बलता ऐसी प्रतीत हो रही थी कि वह लड़खड़ा कर गिर जायेगी।

—नही, आज मैं तुम्हारे घर चलूंगी।

—नहीं-नहीं, अच्छा मैं ही तुम्हारे घर चलता हूं जरा मामी जी को देख आऊं।

—नही राज, आज तुम्हारी नही चलेगी। पांच महीने हो गये लेकि आज तक मैं तुम्हारे घर नही गई। जब कभी कहती हू तो पता नही व.. टाल देते हो।

—मुझ पर सन्देह करती हो, चलो। राजेन्द्र ने गम्भीर होकर कहा।

—तुम तो बड़ी जल्दी बुरा मान जाते हो। क्या मेरी इच्छा नही होती है कि मैं तुम्हारे चाचा-चाची से मिलूं।

—नहीं नहीं, चलो, मेरी चाची बड़े अच्छे स्वभाव की हैं बस बिल्कुल तुम्हारी मामी के समान।

दोनों घर की ओर चले जा रहे थे। राजेन्द्र कुछ गम्भीर था। वह इसी उलझन में पड़ा था कि उसने प्रेम की बात कहकर ठीक किया कि नहीं।

यदि वह उससे प्रेम नहीं करती होगी तो क्या सोच रही होगी उसके बारे मे। यही न कि विश्व के इतने जीवों के समान यह भी स्वार्थी है। पर हो सकता है उसके हृदय मे भी उसके लिए कोई स्थान हो। यदि न होता तब उसे डांट देती, फटकार देती। लेकिन यदि है तो उसने कहा क्यों नही? जब उसने अपने हृदय की बात कह दी तब उसने क्यो न कह दी।

दोनो मौन चले जा रहे थे। नीरा भी विचार रही थी कि वह क्या कहे। वह भी हृदय की गुत्थी को सुलझाने मे लगी थी, विशेष कर राजेन्द्र की बात पर। घर के सामने रुककर उसने कहा—

—तुमको पता लगा कि मैं तुमको क्यो नही अपने घर लाना चाहता था? देखो, चारों ओर अच्छी तरह देखो कि इन चूहों के बिलो मे पशु नहीं इंसान रहते है। जो सदा गर्मी की धूप, बरसात का पानी और शीत की ठण्डी हवा का सामना करते है। प्रत्येक ऋतु जिनके लिए एक जटिल समस्या है।

नीरा चुप थी। वह चारो ओर के घरो को देख रही थी। यदि कभी आप रेल मे नई दिल्ली से पुरानी दिल्ली गये हो तो किनारे बाईं ओर को कच्चे मकान दिखाई देंगे जिनके पास से गन्दे नाले बहते हैं। बहुत से घर तो ऐसे हैं जिनको मकान कहते भी लाज आती है चटाइयो से खड़े लाज को ढकने के लिए मानवो ने अपना स्थान बना रखा है। दो ईंटो को बाहर रखकर ही खाना बनाया जाता है। नीरा निशा के बढ़ते अधकार मे नन्हे दीप जलते छोटे मकानो को देख रही थी। धुए के कारण बहुत दूर तक देखना सम्भव नही था राजेन्द्र बोला—

—क्यों, चुप क्यों हो? भारत की राजधानी मे ऐसे मकान! तुलना कर रही हो क्या राष्ट्रपति भवन से। अरे नीरा, इनमे भी इन्सान अपने जीवन की घड़िया गिनते हैं। देखती हो, पास का गन्दा नाला, यह लोगो मे बीमारी के कीटाणु पहुंचाता है। देखा तुमने मेरा घर? कितनी इच्छुक थी?

—राज!

—हां, पर इन काले स्थान के रहने वाले लोग बाहर से काले अवश्य है पर उनके कर्म काले नही, उनका हृदय उच्च भवनों मे रहने वालो के

नमस्कार करते नहीं चलो मेरी चाची से मिलो।

राजेन्द्र ने उसका परिचय कराया। राधिका हाथ में लालटेन लेकर [illegible] [illegible] में कौन है।

—नमस्ते! [illegible] करने का [illegible] था कि [illegible] चर्चा किया करता था।

—चाची, नीरा है [illegible] मैं तुमसे [illegible]

आओ, अन्दर आकर बैठो।

दोनों ने अन्दर प्रवेश किया। नीरा ने चारों ओर घूमकर देखा कि चारों तरफ कच्ची दीवार है जिसमें यदि कोई चाहे तो [illegible] ओर से दूसरा मार्ग [illegible] को देखने [illegible] है, अन्दर छोटा-सा आंगन। जिसमें एक ओर [illegible] है। दो छोटे-छोटे कमरे [illegible] [illegible] है कि [illegible] बना जाता है। [illegible] में से [illegible] है। ऊपर [illegible] लगाई हुई थी। राधिका उनको एक कमरे में ले [illegible] कमरे के ऊपर [illegible] में [illegible] भी रात के तारे दिखाई दे जाते थे। दीवारें कच्ची ईंट की थीं। एक [illegible] के मूढ़े पर बैठने का आदेश करके स्वयं राजेन्द्र ने एक खाट पर बैठते हुए कहा कि—यह मेरा कमरा है।

—तुम लोग बैठो। मैं खाना लाती हूं।—राधिका बोली।

—रहने दीजिये चाची।

—अरे हमारे घर का भी तो खा लो। यह कहकर राधिका चली गई। नीरा ने भी अधिक आग्रह नहीं किया जिससे कहीं राजेन्द्र यह न समझे कि यह हमारी दशा देखकर मुंह मोड़ गई।

—चाचा जी कहां हैं?

—घूमने।

नीरा चारों ओर देख रही थी और राजेन्द्र नीरा की ओर। कभी-कभी दोनों की दृष्टि पल भर के लिए टकरा जाती पर फिर दोनों में से एक अपनी नजर चुरा लेता। इसी आंख-मिचौनी को खेलते-खेलते समय बीत गया। राधिका एक थाली में खाना लेकर आ गई। बहुत मना करने पर भी राजेन्द्र और नीरा नहीं माने उन्होंने राधिका को भी खाने में अपने साथ सम्मिलित कर लिया।

वे लोग खाना खाकर उठे ही थे कि सामने से श्रीगोपाल जी अन्दर आये। राधिका ने कहा—

—यह नीरा है, आगरे की रहने वाली है और राजेन्द्र के कार्यालय

मे काम करती है।

नीरा ने हाथ जोड़ कर नमस्ते की।

—अरे, आज तीसहजारी के शरणार्थी केम्प मे आग लग गई।

—अच्छा तब ही मैं कहू कि यह उत्तर की ओर लाल-लाल क्यो हो रहा है। तुमसे कितनी बार कहा कि यहां से मकान छोड़ दो कही दूसरी जगह चलो। यहा भी किसी दिन आग लगेगी।—राधिका ने कहा।

—मेरे बस की है, मैंने तो दो वर्ष से मकान के लिए अर्जी दे रखी है।

—अजी, सरकारी दफ्तर से तो अगले जन्म तक मकान नहीं मिलेगा। क्यो नही दूसरा ढूढ लेते हो।

—यह दिल्ली है पता है, तीस से कम मे तो कही मकान मिलेगा नही। इस पर भी साल भर का किराया और 500 रु० पगड़ी के। मैं सोच रहा हू कि सरकार से मकान मिल जाये, कुल दस फीसदी किराया कटा करेगा।

—फिर शहद की तरह सरकारी कर्मचारी को रुपये चढ़ाओ तब मिलेगा, नही तो अर्जी मे पड़े-पड़े दीमक लग जायेगी पर मकान न मिलेगा।

—अच्छा चाची जी चलें। –नीरा ने बीच मे बात काट कर कहा।

—बैठो भी बेटी।—श्री बाबू ने कहा।

—इसकी मामी जी की तबीयत ठीक नही है।—राजेन्द्र ने कहा।

—अच्छा इसे तुम स्वयं छोड आओ रात का समय है। कहा रहती हो?

—कटरा नील।

—अच्छा, आया करो, यह भी घर तुम्हारा ही है।—राधिका ने कहा।

नीरा वहा से विदा हुई। वे बाहर आये तो बाहर आते ही नन्हें बालकों ने राजेन्द्र को घेर लिया। 'रज्जू भईया रेवड़ा' कहके सब अपना हिस्सा माग रहे थे। नन्हें बालकों का स्नेह देख कर नीरा का हृदय गदगद हो गया। राजेन्द्र ने कहा—फिर मिलेंगी, बच्चे कह रहे थे 'यदि आज

—क्या है मैं भी तो जानू ?—एक शरारत भरी निगाह थी।

—यही, क्या तुम्हारे हृदय में भी मेरे लिए कोई स्थान है ?

इस प्रश्न से नीरा को ऐसा लगा जैसे कि किसी ने उसके हृदयतंत्री तारों को जोर से झकझोर दिया है। नीरा का घर आ गया था उसने एक सीढ़ी पर पांव रखा और पीछे मुड़ कर मुस्कराते हुए कहा—

—यह बात पूछी नहीं जाती है।

राजेन्द्र ने गली के मन्द प्रकाश में उसके मुख पर नया आलोक देखा, जिससे उसे अपने हृदय का अंधकार हटता सा लगा। अब उसे ऐसा लगा कि नव प्रभात का उदय होने को है और उषा की लाली नील गगन पर आ गई है। राजेन्द्र वहां से विदा लेकर घर की ओर चलने लगा, फिर कुछ स्मरण कर बोला—

—अरे हां ! मैं कल आगरे जा रहा हूं, कुछ घर पर कहलवाना है ?

—यदि मैं स्वयं चलूं तब ?

—सच !—नयनों के दीप जल उठे।

नीरा ने गर्दन हिला कर हां की।

—अच्छा कल छः बजे मद्रास से चलेंगे।

राजेन्द्र लौट पड़ा। राजेन्द्र के पग आज तेजी से उठ रहे थे। उनमें आज नया उत्साह था, जैसे उसने जीवन का सब कुछ पा लिया हो। उसके अधरों में हल्की गुनगुनाहट थी, कदाचित् किसी गीत की।

दस

नीरा और राजेन्द्र आगरे साथ-साथ आये। मार्ग में इतनी भीड़ थी कि बेचारे जैसे-तैसे बैठे। दिल्ली से आगरे लगभग चार घंटे से कम समय लगता है। रात के दस बजे के करीब वे लोग राजा मंडी के स्टेशन पर उतरे। दोनों ने एक रिक्शा ली। मार्ग में राजेन्द्र ने नीरा को बता दिया

था कि उसकी मां सौतेली है और मिजाज की तीखी है। इस कारण वह स्वयं ही उसके घर आयेगा। राह में पहले नीरा को उतार कर राजेन्द्र अपने घर की ओर रिक्शा में चल दिया। घर में उतरते समय नीरा की मां से उसका परिचय हुआ था। नीरा की मां ने उसे बैठने को कहा, लेकिन रात अधिक हो जाने के कारण उसने घर जाने की क्षमा मांगी और दूसरे दिन आने का वचन दिया। राजेन्द्र घर पहुंचा और द्वार पर थाप दी। पिता की आखों में नीद कहां थी। उन्होंने ही खोला, राजेन्द्र ने झुक कर पांव छुये। हरि बाबू की आंखें डबडबा आईं। उन्होंने बेटे को सीने से लगा लिया। अन्दर प्रवेश करने की आवाज से दोनों बच्चे और गंगा जाग गई। राजेन्द्र ने मां के भी पांव छुये। मां ने यही कहा रहने दे। फिर कुछ देर बाद गंगा बोली—

—क्यो रे रज्जू, तुझे दिल्ली का पानी लग गया।

—हा मां, पहले से मोटा हो गया हूं।

हरि बाबू को गंगा की यह बात अच्छी न लगी। वह इसे हेय बात समझते थे। शैलनी बोली—

—क्या लाये भैया मेरे लिये ?

—माल पूये।—गंगा ने बैठे-बैठे कटाक्ष किया।

—नही मां, देखो मैं क्या लाया हूं ? यह कह राजेन्द्र ने अपना सन्दूक खोला और एक बढ़िया-सी साड़ी निकाल कर बोला—

—ले मुन्नी यह तेरी है।

—देखू तो बड़ी अच्छी है, कितने की लाया ?

—तीस की।—गर्व से राजेन्द्र ने कहा।

—तीस की, रुपया क्यों पानी मे फेंकता है। यहा तो महीने का खर्च चलना कठिन हो जाता है तू वहां......

—'भैया मेरे लिये'—मुन्नू ने बात काट कर कहा।

—यह देख, बुशर्ट और निकर का कपड़ा। एक रेशमी कपड़ा निकाल कर रख दिया।

—बाबू जी, यह आपके लिए ऊनी कुर्ते का कपड़ा और धोती।—हरि बाबू को देते हुए कहा।

—मेरे लिए व्यर्थ मे लाया, मेरे पास कपड़ों की क्या कमी।

गंगा की आंखें ट्रंक की ओर लगी थी उसका सन्तोष का बांध टूटना ही चाहता था। उसकी उत्सुकता बढ़ती ही जा रही थी कि वह उसके लिए क्या लाया। उसकी आखों मे लालसा झलक रही थी। उसकी आंखों की तुलना उस कुत्ते की आंखो से की जा सकती है जो कि मनुष्य की थालो के सामने बैठा हो और आशा भरी दृष्टि से देखता हो तथा कभी मुह चलाता हो और कभी पूछ हिलाता हो। सब से अन्त मे एक आसमानी रंग की साड़ी निकाल कर देते हुए कहा—मां यह तुम्हारी। राजेन्द्र जानता था कि आसमानी रंग की साड़ी मां की प्राण है। साड़ी की ओर गंगा का हाथ ऐसा दौड़ा जैसे कि प्लेटफार्म के किनारे खड़े बच्चे को रेल से बचाने के लिए उसकी मां के हाथ दौड़ते हैं। अपने सीने से लगा कर ट्रंक के पास आकर बोली—

—अये हये, चार दिन के लिए आया और कपड़े कितने लाया। दिल्ली आकर रज्जू तेरे तो रंग बदल गये। क्या ऊपरी कमाई है?

—नहीं मां, यदि कमाना चाहू तो हजार-पांच सौ तो मामूली बात है। कपड़े और सीमेन्ट परमिट हमारे साहब ही बनाते हैं।—राजेन्द्र ने गर्व से कहा, और मनुष्य का हृदय जब साफ होता है तो उसे कहने मे भी गर्व होता है।

—यदि ऐसा भी होगा तो क्यो बतलादेगा। मैं तेरी हिस्सेदार जो बन जाऊंगी।

उस रात सब व्यक्ति सो गये। गंगा ने कसे मुह पूछा कि भूख है तो कुछ खा ले। पर राजेन्द्र जानता था कि वह सौतेली मां के पास जा रहा है, इस कारण मथुरा से पूरी लेकर आया और उसने खा ली थी।

दूसरे दिन सुबह मुह-हाथ धोकर, नहाकर और कपड़े आदि बदल कर राजेन्द्र नीरा के घर की ओर चल दिया। नीरा की मां घर मे अकेले ही रहती थी, शान्ति उनका नाम था, जो कि उनके स्वभाव का भी द्योतक था। अपने पति के देहान्त के बाद शान्ति के जीवन मे अन्धकार हो गया। उस घोर तिमिर मे केवल उसकी दसवर्षीय पुत्री नीरा ही एक आशा के दीप के समान थी। उसे अपनी पुत्री के लिए जीवित रहना था।

पति की मृत्यु ने सारे साधन समेट दिये। शांति का जीवन बड़े संघर्ष से बीता था। जो पति उसको पल भर के लिए भी आंखों से दूर नहीं होने देते थे वह ही उसे सदा के लिए छोड़ स्वर्ग सिधारे थे। जो पति उसे अधिक परिश्रम करते देख उसको अपने हृदय से लगाकर सांत्वना दिया करते और अधिक परिश्रम से रोकते कि तुम्हारा जन्म इस प्रकार सौन्दर्य को नष्ट करने के लिए नही हुआ है, वही शांति अपने पति के देहान्त के बाद दिन भर सिलाई करती और पढती। सिलाई के काम से उसका गुजारा चलता। जब कभी वह अधीर हो जाती तब रो उठती। उस समय उसको हृदय से लगाने वाला था कौन? वह स्वयं नीरा को अपने हृदय से लगाती। नीरा मा के स्नेह से संचित हो बडी हुई थी। प्रारम्भिक परि-स्थिति और कठिनाइयों ने उसको गम्भीर बना दिया था। जब वह प्राइवेट हाईस्कूल में द्वितीय श्रेणी मे उत्तीर्ण हुई तो मां उसको आगे पढ़ाना चाहती थी, परन्तु बेटी समझदार थी। मां को पिसते कैसे कोई औलाद देख सकती है। उसने कहा मां मैं नौकरी करूंगी। उधर शांति के भाई भी आये थे। वह उसको दिल्ली ले गये और वहां उस समय ही उसको नौकरी मिल गई, तब से वह वहीं काम कर रही थी। मां उससे कई बार कहती कि बेटी तू मुझको कब तक साधेगी। मुझको तो एक दिन हाथ पीले करने हैं, तब तू चली जायेगी, उस समय मुझे ही तो परिश्रम कर जीवन बिताना पड़ेगा। नीरा रो उठती। मां, मैं शादी नही करूंगी, तुमको छोड़कर मैं कैसे रह सकती हूं और मां अधीर होकर कहती, हट पगली लड़कियां इसलिए इस विश्व में आती हैं कि उनको पाल-पोसकर बडा किया जाये और फिर उनकी शादी रचा कर दूसरे के हाथ में दिया जाये। एक मां को तब सुख होता है कि उसकी बेटी एक अच्छे घर जाये और सुखी रहे। मां उसे अपने हृदय से लगाकर कहती, बेटी तू सुखी रहेगी तब मैं भी अपने जीवन के परिश्रम को सार्थक समझूंगी। राजेन्द्र ने द्वार पर थाप दी। द्वार खुला था, लेकिन थाप से पूरा खुल गया। उसने सामने देखा कि नीरा तानपुरे संभाले गा रही है 'मेरे तो गिरधर गोपाल दूजा न कोई' स्वर कितनी सरसता तथा मधुरता है। राजेन्द्र अपने पगों को न रोक सका द्वार के चौखट के पास अवलम्ब ले बैठ गया। नीरा के केश खुले थे। का

बादलों के मध्य में चन्द्रमा की सुन्दरता दूनी हो जाती है, उसी प्रकार नीरा और शांति की भी। सामने कृष्ण व राधा की मूर्ति थी। निरमयी श्याम वर्ण में बंसी लिये कितने सुन्दर लग रहे थे। नीचे धूप-बत्ती की सुगन्ध से कमरा सुगन्धित हो रहा था। क्षण भर के लिए उसको इतनी शांति और सुख का अनुभव हुआ कि उसका हृदय पुकार उठा कि कौन कहता है कि इस संसार में सुख बसता नहीं बिकता है। गीत में उसको जितना आनन्द का अनुभव हो रहा था। हृदय से फूटे स्वरों में वह मिठास थी, जिसका *रसास्वादन वह मन्ज़ो और गुलबदन के कोठे पर नहीं कर पाया। यहां उन* स्थानों जैसी चमक-दमक न थी परन्तु जितनी सादगी थी उतनी ही सरसता और मधुरता थी। वह बाहर बैठा भगवान के दो भक्तों को उनकी शरण में लीन देख रहा था।

भजन के समाप्त होने के पश्चात् शांति ने पीछे मुड़कर देखा। अपनी आंखों से आंसू पोंछती हुई बोली--

—अरे! बाहर क्यों बैठे हो?

—यों ही माता जी, भजन अच्छा लग रहा था, फिर अन्दर आने से पूजा भी भंग होती।

नीरा सफ़ेद धोती में और भी सुन्दर लग रही थी। वह लाज से सिमट-सी गई।

—आओ बैठो।—बाहर आंगन में धूप में चारपाई डालते हुए शांति ने कहा।

—ठीक है। बैठते हुए राजेन्द्र ने कहा।

राजेन्द्र ने देखा कि उसका घर जितना छोटा है उतना सुन्दर और साफ़ भी है।

—मां, ये रम्मू के साथ दसवीं में थे।

—हां बेचारा आजकल दीवानी में मोहर्ररी का काम कर रहा है। बीच साल में पढ़ाई पिता की मृत्यु के बाद छोड़नी पड़ी।

शांति के हाथ में माला थी। वह नीचे चटाई पर बैठे-बैठे फिरा रही थी। नीरा पास खड़ी थी। उसने अपने सिर पर धोती कर ली थी।

राजेन्द्र वहां दो घण्टे बैठा। दो घण्टे में वह शांति के अत्यन्त निकट

आ गया था। शांति को उसके गुण और उसकी स्पष्टता अच्छी लगी। एक प्याली चाय और दाल-मोठ से उसको जलपान कराया गया। राजेन्द्र को नीरा के घर का वातावरण इतना शांत और अच्छा लगा कि उसका हृदय चाह रहा था कि वह घटों वहीं बैठा रहे। मनुष्य जो शांति, मंदिर में बैठने से अनुभव करता है। उसी शांति का अनुभव राजेन्द्र नीरा के घर में कर रहा था। एक उसका घर है, चौबीस घंटे कलह ही मचा रहता है। हाय-हाय के कोलाहल से दूर यहां उसको सुख की अनुभूति हुई।

जब वह चलने लगा तो बोला—

—माता जी, नीरा के बिना आप अकेले कैसे रह लेती हैं?

—बेटा, भगवान् जो है, देखा नहीं तुमने। जब कभी मेरा हृदय भारी होता है, मैं घटों उनकी शरण में पड़ी रहती हूं। वहां शांति मिलती है इस कारण मुझे अकेलापन नहीं अखरता है।

नीरा और शांति दोनों उसे द्वार तक छोड़ने आयीं। राजेन्द्र के चले जाने के बाद शांति ने कहा—

—भला लड़का है कितनी श्रद्धा से द्वार पर बैठा था।

—इनके पिता भी बड़े भक्त हैं, उनका प्रभाव पड़ना संभव ही है।

—दो घंटे में ऐसा घुल-मिल गया जैसे कि मुझसे इसका सम्बन्ध पहले से हो।—शांति ने कहा।

—इनका स्वभाव ही ऐसा है। बचपन में मां छोड़कर स्वर्ग चली गई, इस कारण मां की ममता न मिलने के कारण जहां कहीं इनको प्रेम का आश्रय मिलता है उसको ही अपना समझने लगते हैं। वहां मामी से इतना प्रेम है कि सदा उनका दुःख-सुख पूछते रहते हैं। मामी भी इनको बहुत चाहती हैं।—नीरा ने संकोच से धीमे स्वर में कहा।

—भगवान् ऐसे भले बालक सबको दें।

नीरा कुछ लजा गई। उसने अपने आंचल से अपना मुंह ढाप लिया। उसका हृदय गद्गद हो उठा। शांति ने कुछ भी न देखा पर बिना देखे ही उसने सब कुछ देख लिया था। लेकिन कुछ बोली नहीं। राजेन्द्र के आचार-विचार, भाव-स्वभाव उसको स्वयं अच्छे लगे। शांति ने केवल अपनी पुत्री को अपने हृदय से लगाकर कहा—

—बेटी, तुमको वह बहुत अच्छा लगता है ?

नीरा चुप थी। उसके मौन मुख के भाव उसकी स्वीकृति प्रकट कर रहे थे।

—बेटी, जो कुछ करना अपनी विधवा मां की लाज बचाकर करना।

—मां! यह कहकर नीरा जोर से शांति के हृदय से लग गई। स्वर में एकदम रुदन था। शांति की आंखें डबडबा गईं। फिर भी उसने मुस्कराकर कहा—पगली! इस पगली में कितना प्यार था और ममता का प्रगाढ़ स्नेह था!

ग्यारह

जेन्द्र आगरे से दिल्ली नीरा के साथ ही लौटा। परन्तु उसने घर मे नीरा कोई चर्चा नही की, क्योंकि वह जानता था कि कोई लाभ नही था। ल्ली आने पर उसने सब कुछ साफ-साफ अमृत से कह दिया। अमृत से सका कई एक विषयों पर घोर मतभेद हो जाता लेकिन फिर भी अमृत र बड़ा विश्वास रखता था। उसकी स्पष्टता और उसकी प्रगाढ़ मित्रता उमड़ते सागर को देखकर राजेन्द्र उसको अपना समझता था। राजेन्द्र ानता था कि अमृत और उसके जीवन के प्रति दृष्टिकोण मे अन्तर है। मृत जो कुछ देखता है रंगीन चश्मा लगाकर और वह वास्तविक आंखों ।। वह जीवन के कृत्रिम रूप का पुजारी था और राजेन्द्र यथार्थ का। मृत ने राजेन्द्र का सब वर्णन सुनकर कहा।

—मैं जानता हूं राजेन्द्र, वह तुमसे प्रेम करती है और यह सुनकर मित्र के नाते मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। लेकिन राजेन्द्र, हम लोगों के जीवन मे प्रेम का स्थान ही कहां है। चार पैसे कमाने वाले क्या प्रेम भी कर सकते है ?

—अमृत, मेरा तुमसे इसी से मतभेद रहता है कि तुम कहते हो प्रेम धन

से चलता है और मैं कहता हूं कि हृदय की अनुभूति से।—राजेन्द्र ने तनिक गम्भीर होकर कहा।

—होता होगा अपन तो कभी नारी जाल में उलझे नहीं, जीवन में वैसे ही क्या परेशानी कम है। जब कभी इच्छा हुई तो प्रेम का सौदा नकद किया।—अमृत ने मुस्कराकर कहा। राजेन्द्र अमृत का अभिप्राय समझ गया।

—अमृत, वहां न जाया करो। वहां इन्सान नहीं जाते हैं। वह स्वर्ग नहीं नरक है अमृत।

—पर धनवान तो जाते हैं।

—तेरी इच्छा।—कहकर राजेन्द्र शांत हो गया।

—खैर। जो हो राजू, अमृत तेरे लिए जान भी दे सकता है। मित्रता की है, हंसी-मजाक नहीं किया है आजमा लेना। तुम दोनों एक हो। अच्छा है हम भी वह शुभ दिन देख लेंगे।—सिगरेट निकालकर मुख में लगाते हुए अमृत ने कहा।

—यह लो दोनों आ रही हैं।—राजेन्द्र ने कहा।

—कौन?—सिगरेट जलाकर दिलासलाई फेंकते हुए अमृत ने कहा।

—सरीन और नीरा।

दोनों पास आ चुकी थीं। राजेन्द्र और अमृत कैन्टीन के सामने बड़े वटवृक्ष के नीचे बातें कर रहे थे। दोनों पास से निकली तो अमृत ने कहा—

—नीरा जी, आज तो मिस सरीन के बंगले चलेंगे। महीने के अंतिम दिन हैं। पॉकेट भी जवाब दे गई है। चाय या कॉफी पीने का जी चाह हा है। क्यों? क्या राय है?

—चलिये, कॉफी हाउस?

—जी होटलों में तो आपसे कई बार चाय पी ली है अब तो आपके बंगले में ही चाय पीयेंगे।

सरीन टालना चाहती थी, परन्तु अमृत कुछ तीव्रता से बोला—

—साहब, यह कौन-सी बात है कि जब कभी आपके बंगले जाने का प्रश्न होता है, तब ही आप टाल जाती हैं।

नीरा और राजेन्द्र ने भी आग्रह किया तब सरीन मना न कर पाई। चारो व्यक्ति बाहर आकर 9 नम्बर की बस में बैठ गये। प्रोवियन रोड पर बस रुकी, चारों उतर गये। वहां पर सुन्दर-सुन्दर खुले बगले हैं। अधिक वहे सरकारी कर्मचारी या विश्वविद्यालय के प्राध्यापको के हैं। राजेन्द्र, अमृत और नीरा दोनो ओर झाकते जा रहे थे। बगलो पर लगे नामपट्टो को पढ़ रहे थे और पूछते जा रहे थे कि कौन-सा है। सरीन कुछ सिटपिटाई-सी थी। एक स्थान पर आकर रुक गई बोली—'यह है घर मेरा' घर बड़ा प्राचीन गुम्बद था। उसके आगे मिट्टी की ऊंची चारदीवारी खिची थी, जिसके ऊपर चटाई का छप्पर लगा रखा था। उन तीनो को कुछ आश्चर्य-सा हुआ और तीनो ने घर में प्रवेश किया। एक चारपाई पर वे बैठ गये। अन्दर से किसी के खासने की आवाज आई।

—कौन है पुष्पा ?

—आई पापा जी।

वह अन्दर चली गई और कुछ देर बाद बाहर आई बोली—

—अन्दर मेरे पिता हैं, बीमार है। बीमारी क्या है ? नौकरी नही मिलती पंजाब मे ठेके का काम करते थे। इसी कारण चिन्ता से बीमार हो गये हैं।

—चिन्ता व गरीबी हमारे देश की सबसे बड़ी बीमारी है।—राजेन्द्र ने कहा।

—अच्छा तुम लोग बैठो, मैं चूल्हा सुलगाकर चाय बनाती हूं।

—पुष्पा तुम्हारी मां ?

नीरा के इस प्रश्न ने पुष्पा को गम्भीर बना दिया।

—मेरी मां नहीं है।

वह चूल्हा सुलगाने मे लग गई। उसने चाय बनाकर पिलाई। कुछ देर वहां बैठ कर तीनों व्यक्ति लौट रहे थे। पुष्पा को अपने से घृणा अथवा सकोच-सा हो रहा था कि यह लोग क्या विचार रहे होंगे। उसने कहा मैं छोड़ आऊं। लेकिन तीनो ने यही तय किया कि माल रोड के बस स्टैंड तक शाम का समय है घूमकर चला जाये। पुष्पा लौट गई।

अमृत ने कहा—

—देखा ! किसलिए आने को मना कर रही थी।

—पर इसके रहन-सहन को देखकर कौन विश्वास कर सकता है। नीरा ने कहा।

—इन्सान अपनी गरीबी को जो ढांकने का प्रयत्न करता है।—राजेन्द्र ने कहा।

—क्यों ?—नीरा ने पूछा।

—गरीबी नग्न जो होती है।—अमृत ने उत्तर दिया।

राजेन्द्र के हृदय पर पुष्पा का घर देखकर अधिक प्रभाव पड़ा। कौन कह सकता था उसको देखकर कि वह एक गरीब, वेकार, बीमार ठेकेदार की बेटी है। जब सज-धज कर, चटक-मटक कर ऑफिस में पर्स लेकर आती है, तब यही अनुमान किया जा सकता कि किसी अच्छे उच्च मध्यम श्रेणी के व्यक्ति की पुत्री है। विशेष कर जब यह पूछा जाता कि वह रहती कहां है ? तब उसके उत्तर से—प्रोवियन रोड पर। क्योंकि वहां बड़े लोग अधिकतर रहते हैं।

सच में मनुष्य अपने आप पर आवरण डालने का कितना प्रयास करता है। वह नहीं चाहता कि उसकी त्रुटि देखकर दूसरे लोग उसका उपहास करे। इसके लिए वह सीमित और असीमित कार्य करता है। दूसरों की दृष्टि में आदर और उच्च स्थान प्राप्त करने के लिए अपना सर्वस्व लुटा देने को तत्पर रहता है। अपने अस्तित्व और वास्तविकता को कृत्रिमता मे विलीन कर देता है। कागजी फूल का सौन्दर्य दूर ही से तो होता है। वह दूसरों के हृदय-पटल पर अवास्तविक चित्र अंकित कर देता है, पर क्या वह अपने आप को धोखा दे सकता है ? ऐसा यदि करता है तो क्यों ? अपनी परिस्थिति के कारण, अपना प्रतिमान दूसरो के समतुल्य करने को कहीं वह बढ़ते समाज मे पीछे न रह जाए, कहीं कोई उसके यथार्थ जीवन का उपहास न बना दे। उसके नयनों में एक स्वप्न और हृदय मे एक भय होता है। तन पर एक चमक व कान्ति, पर आत्मा निराश व हताश।

बारह

दिन पर दिन ढलते गए, निशा पर निशा बीतती गई, सप्ताह पर सप्ताह निकल गये, महीने पर महीने व्यतीत होते गये। और दो आत्मा नीरा और राजेन्द्र एक-दूसरे के पास आते गये। जैसे यमुना और गंगा। दोनों एक-दूसरे में ऐसे घुलमिल गये जैसे दूध में चीनी या पानी में बरफ। एक वर्ष में नीरा राजेन्द्र के काफी समीप आ गयी थी और राजेन्द्र ने भी नीरा के हृदय में घर कर लिया था। दोनों दो शरीर एक आत्मा कहे जा सकते थे। दोनों साथ-साथ आते और दोनों साथ-साथ जाते। जब कभी आगरे जाना होता तो साथ-साथ ही जाते। लेकिन राजेन्द्र ने यह बात अपने माता-पिता से नहीं बताई थी।

लुडलो कौंसिल्स में भी लगभग आधे से अधिक जानते थे कि दोनों का रोमांस चल रहा है। कभी-कभी राजेन्द्र से मजाक भी हो जाते पर राजेन्द्र बुरा नहीं मानता था। उनके प्रेम ने उसके कार्य में किसी प्रकार की रुकावट पैदा नहीं की वह अब एक ईमानदार सप्लाई विभाग का कर्मचारी था। सदा अपने कार्य से आचार्य जी को प्रसन्न करता रहता था।

राजेन्द्र अमृत से अपना साथ न छुड़ा सका। उसको अपनी हृदय की बात कहने के लिए एक मित्र की आवश्यकता थी। यद्यपि अमृत से उसके भाव नितान्त प्रतिकूल थे। फिर भी वह उसकी बातें गम्भीरता से सुनता और आवश्यकतानुसार उसमें संशोधन करता। राजेन्द्र अमृत की मित्रता के मूल्य को समझा करता था। कभी-कभी उसके मुख से उच्च आदर्श की बातें सुनकर राजेन्द्र भी चकित हो जाता। अमृत के व्यक्तित्व का प्रभाव राजेन्द्र पर भी पड़ गया था। वह अब पहले से अच्छे कपड़े पहना करता था। उसके जूतों पर अब पालिश होने लगी थी। तीन रोज छोड़ कर दाढ़ी बनाने वाला राजेन्द्र अब एक दिन छोड़ कर बनाता था। सिर पर छोटे छोटे बालों के स्थान पर उसके बाल अब बड़े हो गये थे। वह भी अब क्रीम, पाउडर आदि का प्रयोग करता था। अमृत के समान उसने भी धूप का चश्मा ले लिया था। यदि दो वर्ष पहले राजेन्द्र को किसी ने देखा हो तो अब उसके लिए पहचानना कठिन तो अवश्य हो जाता।

राजेन्द्र का मानसिक विकास पहले से अधिक हो गया था। पुस्तक
सम और वाचनालय में उसका जाना सदा किसी-न-किसी प्रकार से बना
रहा। हृदय-पक्ष के साथ-साथ उसके बौद्धिक पक्ष की वृद्धि होती रही।
साधारणतः अपनी आयु के व्यक्तियों से कहीं अधिक उसका ज्ञान व
था। यद्यपि उसने केवल दसवीं तक शिक्षा प्राप्त की थी पर उसकी
व हिन्दी बी० ए० के विद्यार्थी से किसी प्रकार कम न थी। ज्ञान की
पिपासा उसे सदा एक शिखर से दूसरे शिखर पर ले जा रही थी।

राजेन्द्र रोज के समान अपने कमरे में बैठा-बैठा कागजों पर
कलम घसीट रहा था। प्रतिदिन के समान वह आज भी जीवन के
स्वप्न की कल्पना में विलीन था। चपरासी ने आकर कहा—बाबू,
है।—गोस्वामी बाबू ने संकुचित होकर कहा—

—राजेन्द्र सम्भल कर जाना आज साहब का मूड सुबह से
है। तीन को डांट चुके हैं, मेरी फाईल ही चपरासी पर फेंक दी। राजेन्द्र
भी तनिक भयभीत हो गया परन्तु उसने अपने हृदय में धीरज
जब उसने कोई काम बिगाड़ा नहीं, क्यों कर नाराज होंगे। मन
अन्दर अनेकों प्रश्न और विचारों की झड़ी उसके मस्तिष्क में
बुलाया क्यों है? उसने संकुचित होकर अपना पग उनके कमरे में रखा।

आचार्य साहब अर्द्ध-वृद्ध थे, यद्यपि उनकी आयु 40 के
होगी, उनके बाल सफेद हो चुके थे, लेकिन शरीर पर तनिक भी
नहीं आया था। बादल से सफेद बाल उनके मुख पर उनके
बढ़ाते थे। उनके गम्भीर स्वभाव और गर्जदार आवाज ने उनका
उच्च कर्मचारियों के मध्य में आदर का स्थान स्थापित कर दिया था।
उन्होंने राजेन्द्र से कहा—

—बैठो!

राजेन्द्र कुछ भयभीत हुआ क्योंकि आज तक कभी उन्होंने बैठने
स्वयं नहीं कहा। कभी वह फाईल लेकर या कोई बात पूछने जाता
जाता था उन्होंने कभी नहीं कहा कि बैठ जाओ
। उसके मुख पर विस्मय और भय के चिह्न थे।
हर रहे हो, क्या मैं खा जाऊंगा।

—नहीं, सर। राजेन्द्र बैठ गया।

—देखो राजेन्द्र, तुम मेरे पास एक साल से ऊपर हुआ काम कर रहे हो और मैं तुम्हारी ईमानदारी से पूर्ण रूप से परिचित हूं। यदि तुम्हारे स्थान पर कोई और होता तो हजार-पांच सौ महीने बराबर पैदा करता मैंने स्वयं सौ के नोट पर हस्ताक्षर करके तुम्हारे पास घूस के रूप में भिजवाया था, पर मुझे गर्व है तुम पर कि तुमने उसे ठुकरा दिया।

—जी, राजेन्द्र का भय कुछ कम हुआ पर उत्सुकता बढ़ी।

—मुझे गर्व है राजेन्द्र तुम पर, भारत को तुम जैसे कर्मचारी चाहिए। मेरे पास विभाग से दो आदमी सब-इन्सपेक्टरी के लिए मांगे गए हैं। मैंने तुम्हारा नाम भेज दिया है।

—सच ! सर !! उसका मुख ऐसा खिल गया जैसे कि कमल का फूल।

—हूं। आचार्य साहब के मुख पर राजेन्द्र ने पहली बार मुस्कान देखी थी। राजेन्द्र का मन चाहा कि साहब के पांव छू ले। वह झुका लेकिन आचार्य जी पांव हटाकर बोले—

—तुमको यह मेरे कारण तो नहीं मिली है। यह तो तुम्हारी ईमानदारी का फल है। कल से तुम सरकिल एक में चले जाना। मेहरा साहब के पास तुम्हारा नाम पहुंच गया है।

—जी, आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।

वह वहां से बाहर निकलकर और अपने कमरे में आया। गोस्वामी जी बोले—

—कहो ? क्या बात थी मि० राजेन्द्र ?

—मेरी तरक्की हो गई, मैं सब-इन्सपेक्टर बना दिया गया हूं।

—सच ? बूढ़े गोस्वामी ने प्रसन्न होकर कहा—पर मुझे प्रसन्नता के साथ-साथ दुःख भी है कि तुम हमारे पास से जा रहे हो।

—यहीं तो हूं सरकिल एक में।

—फिर कभी-कभी आया करना।

राजेन्द्र का हृदय अपने काम में न लगा वह बीच में खाने के समय में मीरा के कमरे में जा पहुंचा। मीरा उसको देख कर बोली—

—क्या बात है, आज तो बड़े प्रसन्न हो ?

—नीरा, मैं सब-इन्सपेक्टर बना दिया गया हूं।

—सच।

—फिर तो मिठाई ? पुष्पा ने भी अपना स्वर मिला दिया।

—अवश्य 'वोल्गा' में पार्टी रहेगी। राजेन्द्र ने कहा।

राजेन्द्र को उतनी ही खुशी थी जितनी किसी व्यक्ति को डिप्टी-कलेक्टरी मिलने की होती है। उसे क्लर्क के जीवन से कितनी घृणा थी। नौकरी से पूर्व ही पिता को देखकर इस पद के प्रति उसकी आस्था शून्य हो गई थी। फिर इसका अनुभव उसे कार्य करने पर हुआ तब उसे इसकी वास्तविक अनुभूति का ज्ञान दिल्ली में हुआ। उसने अपने को और व्यक्तियों को भी देखा तथा कुछ के आन्तरिक जीवन को भी देखा जो ऊपर से सजे-धजे रहते हैं पर वास्तविकता में कुछ नहीं। उनकी आर्थिक दशा का अनुभव उसे स्वयं हुआ था फिर क्या ! अपने बड़े कर्मचारी के सामने चपरासी समान उनकी जी-हजूरी करते रहे। यदि साहब दिन को रात कहें तो रात कहो। इसके साथ उनके घर का काम भी उनको प्रसन्न करने के लिए करता रहे। यद्यपि राजेन्द्र स्वयं भी इस जीवन से उकता चला था। परन्तु चारा क्या था ? क्या नौकरी बंटती थी ? दिन-पर-दिन और भी काम कठिन होता जा रहा था।

इसके अतिरिक्त उसे आत्मग्लानि भी होती। जब कभी अमृत के साथ जाता, किसी से उसका परिचय कराया जाता तब अन्त में बहुत छिपाने पर भी उसे संकोच से कहना पड़ता था कि वह राशन के सप्लाई विभाग में एक बाबू है। उस समय उसको कितनी ग्लानि होती थी। पर अब वह भी अमृत के समान अपने को सब-इन्सपेक्टर के स्थान पर इन्सपेक्टर ही कहेगा।

राजेन्द्र छुट्टी के बाद कैण्टीन के पास खड़ा था। उसे अमृत सामने ही आता दिखाई दे गया। राजेन्द्र ने प्रसन्नता से कहा—

—अमृत, मैं सब-इन्सपेक्टर बन गया।

—सच ? अमृत ने कहा और उसे प्रसन्नता से अपने गले लगा लिया।

—अरे राजेन्द्र, हमारा हर दुकान मे महीने के अनुमार बंधा हुआ।

—क्या पूछ रहे हो ?

—यह पूछ है ? यही तो हमारा अधिकार है। कपूर ने कहा।

—यदि यह न लें तो हमारा काम कैसे चले। 140 रु० में दिल्ली क्या होता है। हमारे बाल-बच्चे हैं। साथ वाले व्यक्ति ने कहा। हम पूछ लेते हैं पर गरीबों का गला काट कर नहीं लेते हैं। हम लेते हैं उन मोटे-मोटे सेठों से, जो कि गरीबों का गला दुकान पर बैठे-बैठे काटते रहते हैं।

—पर मैं नहीं ले सकता हूं। ऐसा करना अपनी सरकार को धोखा देना है।

—सरकार। कह दोनो हंस दिए।

दोनो की हसी राजेन्द्र को अच्छी न लगी। राजेन्द्र का सत्य का अनुगमन करना स्वभाविक था और इसी कारण उसको उन्नति मिली थी, इसी कारण वह इस पथ का समर्थन कर रहा था।

—लगता है अभी नए हो, धीरे-धीरे सब समझ जाओगे। सरकार संचालक ऊपर बैठे-बैठे स्वयं अपनी जेब भर रहे हैं। कपूर ने कहा।

—अरे भई, हम तो यह कहते हैं कि राशन विभाग का क्या कह आज है कल नही किसी दिन भी टूट सकता है। चार पैसे कमाकर रख लोगे तो समय-कुसमय काम दे देंगे। तीसरे साथी ने कहा।

इसी वार्तालाप मे सलग्न चारो व्यक्ति काफी दूर निकल गए। राजेन्द्र ने विदा ली और अपनी साइकिल पर चढे घर की ओर चल दिया। सत्य और असत्य मे एक द्वन्द्व था। दोनो अपना-अपना पक्ष प्रबल कर रहे थे। मनुष्य के अन्दर दो प्रकार की शक्तियां होती हैं। एक सत्य की ओर घसीटती है, जिसे बौद्धिक पक्ष अथवा आत्मा कहा जाता है। दूसरी असत्य की ओर जिसे हृदय पक्ष अथवा माया कहा जाता है। दोनों शक्तियां एक-दूसरे को दबाने का प्रयत्न करती हैं, जो प्रबल हो जाती हैं उसका अनुगमन करता है। पर प्रायः माया का भार इतना अधिक हो जाता है कि दबकर रह जाती है।

शेषकर धन, धन की लालसा किसको नही होती है। ऊंचे भवनों मे

रहने वालों से लेकर सड़क के भिखारी तक में अन्तर यही रहता है कि एक अपनी उदर-ज्वाला की शांति के लिए धन चाहता है और दूसरा उससे अधिक उच्च बनने का प्रयास करता है। राजेन्द्र के हृदय में भी एक विचार उठा कि यदि चार रुपये होंगे तो घर सुधर जाएगा। रूखी रोटी और फटे कपड़ों से पीछा छूट जाएगा। वह भी अपनी हार्दिक अभिलाषा की पूर्ति कर सकता है। कभी-कभी जो उसे धन की कमी खटकती है, जिसके कारण वह अपनी आकांक्षाओं को विषमय अमृत के समान घूंट लेता है उसकी किसी सीमा तक पूर्ति कर सकता है। परन्तु एक और विचार उठता यह पाप है मनुष्य की इच्छाएं और लालसाएं बढ़ती जाती हैं। उसकी अतृप्ति और पिपासा क्या कभी शान्त होती है? आज चार हराम के कमायेगा तो कल आठ की सोचेगा। बिना परिश्रम के रुपये किसको बुरे लगते हैं। फिर एक दिन हो सकता है जब कि उसकी अतृप्ति उसका भंडा फोड़ने में सहायक हो जाए और हो सकता है जेल तक भेज दिया जाए। कल को चार आदमी अंगुलियां उठा कर हँसेंगे ही। उस समय आज के सगे कन्नी काट जायेंगे।

इसी विचारधारा में वह बढ़ता चला जा रहा था और उसकी साइकिल उसे अपने घर की ओर ले जा रही थी।

तेरह

जिस प्रकार से माली का हार्दिक उल्लास उस समय चरम सीमा पर होता है जबकि उसके उद्यान के कुसुम विकसित होकर पुष्पित-पल्लवित होते हैं। उसी प्रकार से पिता का हृदय तब प्रसन्नता से प्रफुल्लित हो उठता है, जबकि उसका पुत्र किसी योग्य स्थान पर पहुंच जाता है। अपने तन को काटकर सदा शिशु को पालने वाले पिता को उस समय कितना सुख का अनुभव होता है जबकि उसका पुत्र उसके खून-पसीने को सार्थक कर देता

—अरे मैंने तो कहा न कि लड़की तो सब देते हैं, कुछ नकदी का मामला भी है कि नहीं।

—तो क्या दहेज…।

—हां-हां, हमने पाल-पोसकर इतना बड़ा किया, क्या हमारा हक नही और लोग पांच हजार से कम बात नही करते है। फिर मुन्नी भी बड़ी होती जा रही है, उसकी भी चिन्ता है कि नहीं। बीच मे बात काटकर गंगा पान चबाते हुए बोली।

—हां है, उसका भी प्रबन्ध हो जायेगा, जिसने दिया है वह सहारा भी देगा।

—अरे, भगत जी बनने से काम नही चलेगा। मेरा कहा मानो, चार-छ: हजार बराबर कर लो, तो मुन्नी की भी अच्छी शादी हो जायेगी, नही तो उधार मांगते फिरोगे तब भी कोई नही देगा। गंगा ने कहा।

—गंगा, लोग सुनेंगे तो कहेंगे कि सामने से साधु बनते हैं, सत्य का प्रचार करते है और शादी मे नकदी रखवाते हैं, नहीं-नहीं यह पाप है। हरि बाबू ने कहा।

—अरे तुम्हारी तो मत मारी गई है। क्या हम किसी का गला काट रहे है। सब ही तो इतना प्रसन्नता से दे देते है। हां, कहां से आया शादी का प्रस्ताव।

—पटना से, लड़की के बाप जमीदार हैं। घर की खेती करते हैं, शहर मे वकील है। वह है न अपने श्यामू मामा, उन्होंने लिखकर भेजा। लड़की अच्छी है, सुशील है, उनकी देखी हुई। हरि बाबू ने कहा और ऐनक साफ कर आंख पर चढ़ाकर कहने लगे—क्या राय है?

—रहने दो, पढ़ो नही। ठीक है, उनको लिख दो पांच हजार दें। बिहार मे खूब लेन-देन चलता है, वहां दस हजार तो मामूली घर के लोग दे देते हैं। हम तो पांच हजार ही के लिए कह रहे हैं।

—गंगा! आतुर होकर हरि बाबू ने कहा।

—अरे मुन्नी का ध्यान तो रखो! वह भी तो तुम्हारी बेटी है। उसने क्या बिगाड़ा है।

है। हरि बाबू प्रसन्नता से नाच उठे जबकि उन्होंने राजेन्द्र की पदोन्नति का समाचार सुना। उन्होंने हनुमान जी के मन्दिर में जाकर पहले सवा रुपये का प्रसाद चढ़ाया।

घर में आकर उन्होंने गंगा को समाचार सुनाया—राजेन्द्र हमारे परिवार का पहला व्यक्ति है जो कि इतने उच्च पद पर पहुंचा है। कार्यालयों में घिसटने वाले परिवार में, जिसमें यह कार्य पीढ़ी से चला आ रहा है, राजेन्द्र पहला व्यक्ति है, जो अफसर बना है।

माता-पिता जब अपने पुत्र को जरा अच्छी जगह लगा देखते हैं, तब उनका विचार एकदम विवाह की ओर जाता है। हरि बाबू का हृदय चाहता था कि इस घर में अपने बेटे की चांद-सी दुल्हन देख जायें। विशेषकर वह यह भी जानते थे कि वे ही राजेन्द्र के माता-पिता दोनों हैं, इस कारण उनकी चिन्ता और भी प्रबल हो गई थी। सदा यही विचारते रहते कि अच्छा घर मिल जाये, तो कहीं शादी कर दी जाये।

हरि बाबू धन रहित तो थे ही इस कारण उनकी धन की ख्याति तो नहीं, पर उनकी सज्जनता और भलेपन का गुण-गान उनके दूर-दूर के परिवार में किया जाता। लोग हरि बाबू को आधुनिक हरिश्चन्द्र समझते थे। साधु स्वभाव का व्यक्ति तथा नम्रता और सादगी की साक्षात् मूर्ति, इस कारण कई घर के लोग उन्हें बेटी, बहू के रूप में देने के इच्छुक थे।

रिपोर्ट बनायेंगे।

राजेन्द्र ने सोचा वह अब लेना आरम्भ कर देगा, परन्तु उस भाग को वह पास के छोटे बच्चों को दे देगा। इस कारण जब दूसरे महीने वह कश्मीरी गेट वाले एरिया में लगा वहां की मंथली का उसने सब बच्चों के लिए दिल्ली क्लाथ मिल्स के बने-बनाये कपड़े की दुकान से जो कि मोरी गेट में थी निकर और कमीज ले लिये। राजेन्द्र ने बच्चों को बांट तो दिये, परन्तु इसका प्रभाव भी उल्टा पड़ा। बच्चों के पिताओं ने कहा हम गरीब अवश्य हैं, रूखा-सूखा खाते है फटे-चीथड़े पहनते हैं तो क्या पर भीख नहीं मागते। राजेन्द्र को बड़ी आत्म-ग्लानि हुई। वह समझ गया कि उसने उन मनुष्यों की भावनाओं को ठेस पहुंचाई है।

इसका परिणाम यह हुआ कि जो राजेन्द्र पहले 60 रुपये भेजा करता था अब 90 रुपये घर भेजने लगा और साथ में उसके रंग भी बदल गये थे। वह भी गर्मी से बचने के लिए धूप का हैट लगाना, रेशमी बुशर्ट और समर की पेंट पहनना। कभी-कभी नीरा को भी होटल और सिनेमा में ले जाता।

राजेन्द्र को दूसरी ठेस और साथ प्रसन्नता। एक और घटना से हुई। पहले महीने के वेतन से उसने चांदनी चौक से एक सुन्दर-सी साड़ी ली और नीरा को दी। नीरा ने डिब्बा खोलकर कहा—यह किसके लिए लाये हो? राजेन्द्र ने कहा—तुम्हारे लिए नीरा, क्योंकि मैं सब-इन्सपेक्टर हो गया हूं, इस कारण से। नीरा की आंखों में आंसू आ गये। उसने कहा—राज मुझे उन लड़कियों में से मत समझो, जो कि अपने प्रेमियों से उपहार लेकर प्रसन्न होती है अथवा लेने की इच्छुक होती है। मुझे उपहार कुछ नहीं चाहिए, बस राज मुझे केवल तुम्हारा प्यार चाहिए। तुम्हारी प्रसन्नता में मेरी प्रसन्नता है। राजेन्द्र को यद्यपि क्रोध तथा शोक दोनों हुए और वह उसे जहां से लाया था वहीं लौटा आया। इसके साथ-साथ उसे प्रसन्नता भी हुई। उसे अमृत के वाक्य अमृत प्रतीत हुए, क्योंकि उसने कहा कि सुख व प्रेम बंटता नहीं बिकता है। सच में प्रेम की अनुभूति और हृदय व आत्म-सम्बन्धित है। उसमें धन और बाह्य कृत्रिमता का कहां स्थान है? जब दोनों एक-दूसरे के लिए त्याग पर उतारू हैं तब स्वार्थ की भावना कहां सीमित है।

गगा रसोई मे चली गई परन्तु हरि बाबू का मस्तिष्क गगा के प्रस्ताव मे चकरा रहा था। गगा का कहना भी ठीक है कि एक लड़की है उसकी शादी अच्छी तरह से कर लेंगे। नही तो एक तो कोई उधार नही देगा और उधार लेने के लिए उनके पास कीमती वस्तु भी नहीं है जिसको गिरवी रखकर वह ले भी सके। मकान भी भाड़े का है और यदि कोई भला आदमी उनको विश्वास करके दे भी दे फिर उसका सूद चुकाना एक समस्या हो जायेगी असल का तो कहना क्या। उन्होंने कितने ही परिवारों को ऋण के कारण बरबाद होते देखा था। इस कारण क्या वे उधार लेने का साहस कर सकते हैं। स्वयं अपने लिए गड्ढा खोदने को क्योंकर तैयार हों पर क्या फिर नकदी के लिए हाथ फैलायें? नहीं, नहीं, वह स्वयं इसका कितना विरोध करते थे। इसकी कटु आलोचना करते थे।

कई बार इसे चोरी और पाप कहा। पर क्या वास्तव मे यह पाप है? यदि कोई प्रसन्नता से दे सके तो फिर क्या? यदि किसी कुएं की दो बूद से किसी की प्यास मिट जाये तो क्या पाप होगा, कुएं का क्या घटेगा?

चौदह

राजेन्द्र सकोच करने पर भी अपने आपको दुकान वालों से घूस लेने से न बचा सका। पहले महीने वह अपने सत्य के मार्ग पर चलता रहा। परन्तु जब साथ के सब-इन्स्पेक्टरों ने देखा तब इन्स्पेक्टर से कहकर उसको किंग पर लगा दिया। राजेन्द्र दो-तीन क्लर्कों के साथ मोरी गेट पर ारपाई डाले राशन कार्ड का ढेर लगाये बैठा रहता और शाम को घर-घर ाक के समान कार्ड बांटता फिरता।

अमृत ने समझाया कि यदि मंथली न लोगे तो साथ कोई नही देगा। साथ के इन्स्पेक्टर और दुकानदार भी कोई साथ न देगा। फिर यह लोग अपने सरकारी फन्दे से बचने के लिए नये-नये प्रकार के जाल और

—तब मेरी आखों की नींद हराम होगी, मैं तारे गिन-गिनकर रात काट दूगा।

—क्यो ?

—हृदयहीन बनाकर पूछ रही हो क्यो। राजेन्द्र ने मुस्कराकर कहा— हां बताओ नीरा।

—अमृत मुझसे कह रहा था कि तुमने आगे के जीवन के बारे मे क्या सोचा, ऐसे गाडी कब तक चलती रहेगी। नीरा ने सकोच से कहा। लाज की लालिमा उसके अधरो मे होड लगा रही थी। उसके स्वर झकृत थे।

—नीरा, मुझसे भी अमृत कह रहा था कि मैं नीरा को भाभी के रूप मे देखना चाहता हू, अब तो तुम सब-इन्सपेक्टर बन गये हो।

राजेन्द्र ने कहा और दोनो कुछ देर तक मौन चले।

—चाची को तो पता है !

—वैसे मामी और माताजी को भी सन्देह है।

—पर मैं मा से घर पर नही कहूगा, चाची से कहूगा वह चाचा द्वारा बाबूजी को चिट्ठी लिखवायेगी। राजेन्द्र ने रूमाल से पसीना पोछते हुए कहा।

—राज, यदि मुझसे तुम्हारा सम्बन्ध न होता तब क्यो इतनी विपद समस्या खडी होती। कभी-कभी मैं भी सोचती हू कि मेरी अनजाने मे कैसी प्रीत हो गई। नीरा ने गर्दन झुकाकर उंगली पर अपनी धोती घुमाते हुए कहा।

—वाह ! नीरा, जब से तुम मेरे जीवन मे आई हो तब से तुम्हारे प्रेम दीप ने मेरा अन्तर आलोकित कर मुझको तुम्हारा बना दिया है।

दोनो प्रेमी दिल्ली की सडकों को चीरते हुए आगे बढ़ रहे थे। दोनो की आखों मे एक स्वप्निल संसार था। मधुर मिलन के भिन्न-भिन्न चित्र दोनो के हृदय-पटल पर बन और मिट रहे थे। प्रेम का कदाचित् एक ही ध्येय होता है। जहां तक हो सकता है उस ध्येय तक प्रत्येक राही पहुंचने का प्रयास करता है। ध्येय आने के पूर्व दो शरीर एक आत्मा वाले प्राणी उस रंगीन संसार के स्वप्न मे विलीन हो जाते हैं। वह ध्येय है सामाजिक बन्धन विवाह, जबकि समाज के सामने अपने आप को एक कह सकें। दो

—तब मेरी आंखों की नींद हराम होगी, मैं तारे गिन-गिनकर रात काट दूंगा।

—क्यों ?

—हृदयहीन बनाकर पूछ रही हो क्यों। राजेन्द्र ने मुस्कराकर कहा—हां बताओ नीरा।

—अमृत मुझसे कह रहा था कि तुमने आगे के जीवन के बारे मे क्या सोचा, ऐसे गाडी कब तक चलती रहेगी। नीरा ने सकोच से कहा। लाज की लालिमा उसके अधरों से होड लगा रही थी। उसके स्वर झकृत थे।

—नीरा, मुझसे भी अमृत कह रहा था कि मैं नीरा को भाभी के रूप मे देखना चाहता हू, अब तो तुम सब-इन्सपेक्टर बन गये हो।

राजेन्द्र ने कहा और दोनो कुछ देर तक मौन चले।

—चाची को तो पता है !

—वैसे मामी और माताजी को भी सन्देह है।

—पर मैं मा से घर पर नही कहूंगा, चाची से कहूंगा वह चाचा द्वारा बाबूजी को चिट्ठी लिखवायेगी। राजेन्द्र ने रूमाल से पसीना पोछते हुए कहा।

—राज, यदि मुझसे तुम्हारा सम्बन्ध न होता तब क्यों इतनी विषद समस्या खडी होती। कभी-कभी मैं भी सोचती हू कि मेरी अनजाने मे कैसी प्रीत हो गई। नीरा ने गर्दन झुकाकर उंगली पर अपनी धोती घुमाते हुए कहा।

—वाह ! नीरा, जब से तुम मेरे जीवन मे आई हो तब से तुम्हारे प्रेम दीप ने मेरा अन्तर आलोकित कर मुझको तुम्हारा बना दिया है।

दोनो प्रेमी दिल्ली की सडकों को चीरते हुए आगे बढ़ रहे थे। दोनों की आंखों मे एक स्वप्निम संसार था। मधुर मिलन के भिन्न-भिन्न चित्र दोनों के हृदय-पटल पर बन और मिट रहे थे। प्रेम का कदाचित् एक ही ध्येय होता है। जहां तक हो सकता है उस ध्येय तक प्रत्येक राही पहुंचने का प्रयास करता है। ध्येय आने के पूर्व दो शरीर एक आत्मा वाले प्राणी उस रंगीन संसार के स्वप्न मे विलीन हो जाते हैं। वह ध्येय है सामाजिक बन्धन विवाह, जबकि समाज के सामने अपने आप को एक कह सकें। दो

—कल से हम लोगों में भी ऐसा रहेगा। नीरा ने कहा।

—क्या बात करती हैं आप भी। अमृत ने कहा।

—नहीं, सच कहती है नीरा, बहुत पक्के-से-पक्के मित्रों की मैत्री में जो खाई पड़ जाती है इसका मुख्य कारण यही कि मैंने इतना खर्च किया और उसने नहीं। ऐसा करने से किसी प्रकार के भी भाव नहीं आते।

—हां ठीक है, राज का कथन ठीक है।

—जैसी आप दोनों की राय, मैं तो अकेला ही हूं।

—फिर शीघ्र बनिये न जोड़ीदार।

तीनों व्यक्ति हंस पड़े। बिल के दाम चुकाकर तीनों बाहर निकले। कुछ दूर चलने के बाद तीनों बीच के पार्क में बैठ गये। अमृत ने कहा—

—राजू ! तुमने चाची जी से कहा।

—हां, उनसे तो कहा, पर उन्होंने अभी तक चाचा से नहीं कहा। कदाचित् आज कहेंगी।

—चाचीजी ने क्या उत्तर दिया ?

—कुछ नहीं, केवल मुस्करा दी।

—फिर तो अपना काम बना समझो।

नीरा को यद्यपि इस वार्तालाप में रुचि तो सबसे अधिक थी, पर प्रत्यक्ष रूप से ऐसे दिखा रही थी जैसे कि उसमें उसकी कोई रुचि नहीं। वह मन-ही-मन नाच रही थी, वह आत्मविभोर थी। उसने बात बदलकर कहा—

—चला जाये।

—चलिये साहब हम तो आपके बारे में ही सोच रहे है और आपको घर जाने की जल्दी हो रही है। अमृत ने कहा।

तीनों उठकर चल दिये। राजेन्द्र और नीरा के अधरों पर मिलन के ..। दोनों की आत्मा एकाकार होकर नृत्य कर रही थी। वे भविष्य ..ना में लीन थे। ऊपर गगन में तारे नृत्य कर रहे थे। प्रकृति का संगीत था। चारों ओर की वस्तुएं दोनों को सुखमय प्रतीत ..। विश्व उनको स्वर्णमय लग रहा था, जीवन सुख का कोष ..नके हृदय में एक राग-रागिनी छिड़ी हुई थी।

सोलह

जब माया का पलड़ा भारी हो जाता है तब मनुष्य चाहे कितना ही सतो-गुणी क्यों न हो, वह अपने मार्ग से विचलित हो जाता है। उस समय वह अपने नये मार्ग का अनुकरण करता है परन्तु सतोगुण की उपस्थिति उसके हृदय में एक भय, भ्रम और संशय अवश्य ही रखती है। हरि बाबू ने अपने हृदय पर काबू पाने का प्रयास किया कि वह नकदी का सौदा न करे, परन्तु धन की न्यूनता और कर्तव्य के भार ने उनको उनके दृढ़ मार्ग से विचलित कर दिया। अनेक पत्र-व्यवहार करने के पश्चात् उन्होंने सौदा तीन हजार का पक्का किया। श्यामू मामा ने इसमें सबसे बड़ा भाग लिया।

उन्होंने राजेन्द्र को तार दिया। यद्यपि राजेन्द्र उन दिनों दुकान पर काम जांचने के कार्य में लगा था साथ-साथ मौसम ठीक न होने के कारण दो-एक सब-इन्सपेक्टर भी छुट्टी पर थे। इन कारणों से उसको छुट्टी मिलना असम्भव था फिर भी उसने किसी प्रकार से छुट्टी प्राप्त की। तार पाते ही हजार प्रकार के विचार उसके मस्तिष्क में आने लगे। असली उद्देश्य विचारने पर भी न विचार पाया और अन्त में वह आगरे चल दिया। चलते समय वह नीरा से मिल लिया था। उसने उसको आश्वासन दिलाया था कि यदि अवसर मिला तो वह ओर से भी इस बात को कहेगा। उसके पिता के पास माँ और बाप दोनों का ही हृदय है इस कारण वह उसकी बात न टालेंगे।

उन्होंने अपनी ओर अपनी पत्नी गंगा की राय पर लड़की के पिता को बुलवा लिया था।

राजेन्द्र जब पहुंचा तो हरि बाबू ने उसे अलग बैठक में ले जाकर कहा—बेटा मैंने तुम्हारी शादी की बात-चीत पटने के वकील राम नारायण के घर पक्की की है। श्याम मामा ने प्रस्ताव भेजा था, लड़की पढ़ी-लिखी है, सुशील है, घर के काम-काज में निपुण है, अच्छे कुल की है, बाप जमींदार और वकील दोनों है। मामा ने लड़की देख रखी है। फिर सबसे बड़ी बात यह है कि तीन हजार दहेज में और एक हजार तिलक में नकदी दे रहे है। इसके अतिरिक्त तुम तो जानते हो कि विहार में कितना दिया जाता है? श्याम मामा का कहना है कि घर भर जायगा। लक्ष्मी के साथ लक्ष्मी आ जायगी। एक हजार तो तिलक में मिलेगा, उससे तुम्हारे विवाह की तैयारी कर ली जायगी और तीन हजार जो मिलेंगे उससे मुन्नी की शादी भी हो जायेगी, एक पथ दो काज। मैं तो इस लेन-देन के पक्ष में नही था परन्तु तुम्हारी मा ने सुझाव अच्छा दिया। बेटा, मुन्नी भी बड़ी हो रही है। उसकी भी शादी करनी है, सोलहवां लग चुका है, अभी से लोग पूछने लगे है कि शादी नही की, कब करोगे? तुम तो जानते हो कि हमारे घर पूंजी नही, दफ्तर में काम करने वाले बाबू के पास होगा ही क्या? उसको मिलता ही क्या है, जो जमा कर सके। वह दो जून किसी प्रकार से भोजन पा लेता है तो बहुत है। बेटा, इसी बहाने दोनों कार्य हो जायेगे तो अच्छा ही है। नही तो फिर मुन्नी की शादी में एक तो कोई उधार देगा ही नही, और कही मिल गया तो उसका चुकाना कितना कठिन हो जायगा यह तो तुम जानते ही हो। वकील साहब आये हुए है, दो घंटे पश्चात यहा आने वाले हैं। तुमको देखेंगे, जो कुछ तुमको दें ले लेना मना मत करना।

पिता का कथन सत्य, साधारण, छल-कपट और स्वार्थ रहित था, परन्तु राजेन्द्र को ऐसा लगा जैसे वह आकाश से पाताल में फेंक दिया गया है। उसे सब कुछ एक डरावना स्वप्न-सा लग रहा था। वह इसके लिए कभी तैयार भी न था और न सोचा था कि कभी ऐसा भी हो सकता है। उसके जी में आया कि वह जोर से कह दे कि वह यह शादी नही करेगा। यह सब

अन्याय है, क्योंकि उससे पूछा नहीं गया है। कहां वह अपने हृदय की बात कहने आया था और उससे मानने को कहा जा रहा है पिता की बात। क्या वह नीरा को छोड़ दे? नहीं नहीं, यह उससे न होगा। उसका मेरे अतिरिक्त और है ही कौन? कितना प्रेम वह मुझसे करती है? क्या वह उस प्रेम को ठुकरा दे? यह उसके जीवन का प्रश्न था, और उस जटिल समस्या को सुलझाने के लिए समय मिला था केवल दो घंटे। वह अवाक था कि कर्त्तव्यविमूढ़-सा पांच मिनट तक खड़ा रहा पर अपने को सम्भाल न सका। उसके पांव लड़खड़ाने लगे, सिर चकराने लगा। वह पास के तख्त पर बैठ गया। हरि बाबू सामने मूढ़े पर बैठे थे।

राजेन्द्र के मुख से केवल इतना निकला कि—बाबू जी, आप इतना करने से पहले मेरे से एक बार पूछ तो लेते।

हरि बाबू ने उत्तर दिया—अरे! यह बात भी कहीं पूछी जाती है। जो मां-बाप बेटे के लिए करते हैं अच्छा ही करते हैं। हमने तुमको पाल कर इतना बड़ा किया, अपना खून-पसीना एक किया। क्या हमारी इच्छा नहीं कि तुमको एक अच्छे कुल की लड़की मिले। तुम प्रसन्न रहो। बेटा एक पिता की सच्ची आकांक्षा यही होती है। मुझको ही देख लो दो-दो विवाह हो गये कभी इतना साहस नहीं हुआ कि कभी कुछ इस विषय में कहें और न इच्छा ही होती थी।

राजेन्द्र की कुछ समझ में न आ रहा था कि क्या करे। केवल दो घंटे से भी कम समय रह गया था। उसके बाद उसके जीवन का प्रश्न हल हो जायेगा। वह जानता था कि उसके पिता जो कुछ कह रहे हैं ठीक कह रहे हैं। वह स्वयं भी कितनी बार घर पर कह चुका था कि मेरा विवाह आप जहां चाहे करियेगा। उस समय उसने स्वप्न में भी न सोचा था कि एक दिन उसके यह शब्द इतनी जटिलता उत्पन्न कर देंगे। उसने सोचा कि वह कह दे नीरा की सारी बात। उसके पिता सहृदय हैं। यद्यपि यह अशिष्टाचार होगा पर इसके अतिरिक्त वह कर ही क्या सकता था। उसने धीमे स्वर में कहा—यह विवाह एक निर्दोष का जीवन नष्ट कर देगा।

हरि बाबू ने कहा—क्या पहेलियां बुझा रहा है। मेरी समझ में नहीं आता, साफ क्यों नहीं कहता। राजेन्द्र ने संक्षेप में सारी कथा सुना दी। इस

पर हरि बाबू क्रोधित नही हुए, पर उन्होंने समझाते हुए कहा—बेटा, यह ठीक है, आज का युग बदल रहा है। ऐसी बातें होने लगी हैं, जो कि हमारे समय मे नहीं होती थी। यह मेरी भूल है। मुझे तुमसे पूछना चाहिए था, पर मैंने नही पूछा। लेकिन इस पर मेरा अपना विश्वास है कि ऐसे विवाह अधिक सफल नही होते हैं। बाद मे आये दिन लड़ाई-झगडे होते रहते है। देखते नही, विलायत मे तलाक कितना प्रचलित हो गया है। इसी के बीज फिरंगी हमारे भारत मे भी बो गये हैं। फिर बेटा, वह भी कोई लड़की है? उसका क्या परिवार है, मा है गरीब, दूसरा कोई मदद करने वाला भी नही। ऐसे परिवार मे सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए, जो फलता-फूलता हो। फिर बेटा, वहां विवाह करने से मुन्नी के विवाह की भी समस्या नही सुलझेगी।

राजेन्द्र को पिता के वाक्य ऐसे लग रहे थे जैसे चिकने घड़े पर पानी। आज एक विधवा नारी के अधरों से हास्य इसलिए छीना जा रहा था कि वह निर्धन है। उससे सम्बन्ध स्थापित करने मे यह आपत्ति थी कि उसके सब सम्बन्धी निष्ठुर भगवान के करों द्वारा समेट लिये गये थे। एक सुन्दर बाला का सिन्दूर इसलिए नही भरा जा रहा है कि वह निर्धन के घर उत्पन्न हुई है। क्या विश्व में निर्धन होना भी अभिशाप है? क्या निर्धन के हृदय मे भावना नही होती? क्या वह सुख उसके लिए सदा स्वप्न मात्र ही रहता है? ऐसा क्यो? इसलिए न कि एक की निर्धनता दूसरे की धन न्यूनता को दूर करने में असमर्थ है। उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में अपूर्ण है। इसी कारण न कि उसको धन के लिए हाथ पसारना पड़ रहा है। आज उसके पिता पर यदि अपनी पुत्री के विवाह का भार न होता तो क्या वह इस अनुचित मार्ग का अनुकरण करते, क्या वह इस प्रकार से विवश होते?

राजेन्द्र के मुख पर एक दुःख के भाव देख बूढ़े पिता का हृदय पसीज उठा। वह बोले—अब बात इतनी बढ़ चुकी है कि इसका खत्म होना बड़ा असम्भव है। कुछ ही देर मे वह आने वाले होंगे यदि मैं उनको मना करता तो वह क्या सोचेंगे? यही न कि बाप-बेटे मे बनती नही, बाप कुछ कहता और बेटा कुछ और। वह वहां जाकर दो की चार कहेंगे। श्यामू

मामा भी क्या सोचेंगे ? बेटा, हमारे घर में अभी तक ऐसा विवाह नही हुआ है। बिरादरी वाले सुनेंगे तो कोई लड़की तक नही लेगा। बेटा, यह सब धनवानों की चीजें हैं, हम लोगों के लिए नही। हम सोचते कुछ हैं और होता कुछ है।

पिता के अन्तिम वाक्य ने उसको अमृत के वाक्य का स्मरण दिला दिया कि प्रेम कवि की कल्पना धनवान के लिए विलासमय और निर्धन के लिए स्वप्न के रूप में है। क्या उसके लिए भी जो कुछ प्रेम कथा थी, वह सब स्वप्न मात्र थी। उसका जो प्रेम नीरा के साथ हुआ है वह इसलिए भुला दे कि वह सुन्दर स्वप्न है, जो कि कभी पूरा नही हो सकता है इस कारण कि उसके पास धन नही। नही, नही, यह सब कुछ नही। पर क्या वह पिता का विरोध करे। उस पिता का जिसने उसको अपने जीवन से अधिक महत्त्व देकर पाल-पोस कर बड़ा किया। उस पिता का, जिसकी आंखों में सदा से यही आशा रही कि कब उसका पुत्र इस योग्य हो कि घर में लक्ष्मी आये। वह जानता था कि उसके पिता का हृदय कितना कोमल है, इस पर भी उनको घर पर सुख नही।

राजेन्द्र इसी सोच-विचार में पड़ा हुआ था कि क्या करे। इतने में द्वार से खट-खट की आवाज आई। हरि बाबू उठ कर द्वार खोलने गये, खोलने जाते समय कह गये बेटा, जो कुछ करो सोच-विचार कर करना। मेरी लाज तुम्हारे ही हाथों में है।

राजेन्द्र की दशा सांप के मुख में छछुन्दर के समान हो रही थी। वह अपने प्रेम को कैसे छोड़ सकता था ? उसका हृदय इसके प्रतिकूल कल्पना करते ही कांप उठता था। नीरा का भविष्य क्या होगा ? ऐसा सोचने का उसमें साहस न था। उसके वाक्य राजेन्द्र को स्मरण आ रहे थे जो कि प्रायः कहती थी कि यदि राज मैं तुम्हारी न हो पाई तो कभी विवाह न करूंगी। क्या उसके कारण एक का सुख और शान्ति नहीं लुट जायेगी और फिर मना भी कैसे करे। यह उसके पिता के आदर का प्रश्न था। मुन्नी उसकी बहिन है। वह यद्यपि सौतेली है फिर भी उसमें कितना स्नेह करती है क्या उसके सिन्दूर के लिए यह अपनी बलि नहीं दे सकता है। मुन्नी को जब पता लगेगा तब स्वार्थी ही तो कहेगी। पिता को कितना दुःख

होगा। दुनिया वाले अंगुली उठाकर कहेंगे कि यह वह बेटा है जिसने अपने पिता के सीने पर पत्थर रखकर अपना विवाह कर लिया। वह मौन बैठा हुआ था।

वकील साहब ने दो-चार प्रश्न किये। राजेन्द्र उनका उत्तर देता रहा। उसको स्वयं यह नही पता था कि वह क्या उत्तर दे रहा था। पर उसकी भावुकता से वकील साहब अत्यन्त प्रसन्न हुए। कुछ देर बाद मुन्नी लजाती हुई एक तश्तरी मे कुछ मिठाई लेकर आई उन्होंने कहा कि अब मेरा यहां खाने का क्या अधिकार ? हरि बाबू प्रसन्न हो उठे। उनके आशा दीप जल उठे। लड़का पसन्द आया। उस समय राजेन्द्र को ऐसा लग रहा था कि वह मूछित हो जायेगा, पर वह साहस करके बैठा रहा। वकील साहब ने पूछा—

—क्यों तबियत कैसी है ?

—कुछ ठीक नही है—राजेन्द्र ने उत्तर दिया।

—रात भर का सफर करके आया है—हरि बाबू ने कहा।

—मेरे विचार से तो ऐसा है कि तुम आगे पढ़ते जाओ, क्योंकि राशन विभाग का क्या ठिकाना आज है कल नही।

—हां हां, पिछले वर्ष ही इन्टर की परीक्षा देने वाला था पर सरकार ने चुनाव में इसको लगा दिया, इस कारण छुट्टी नही मिल पाई।

—कभी पटना देखा है ?—वकील साहब ने पूछा और अपनी जेब से चांदी की डिब्बी में से पान निकाल कर हरि बाबू को दिया और एक अपने मुंह में रखा। फिर राजेन्द्र की ओर किया।

—जी, मैं पान नही खाता।

—अभी पान, सिगरेट आदि की इसे लत नहीं। यदि है तो किताब पढ़ने की।

—अच्छी आदत है। पान चबाते वकील साहब ने कहा।

—दिल्ली में क्या, अपने चाचा के पास रहते हो ?

—जी।—राजेन्द्र ने कहा।

तीनों व्यक्ति कुछ चुप रहे। वकील साहब की दृष्टि चारों ओर मकान को देख रही थी। लेकिन मकान भी बदल दिया गया था। आस-पास से मांग कर बढ़िया बेंत की कुर्सियां उस कमरे मे लगी हुई थी तथा पालिश-

दार मेज और उस पर मेजपोश बिछा था। पडोस से मांगे चित्रों से दीवार की आभा बढ़ गई थी। हरि बाबू कुछ विचारमग्न थे। वह कदाचित यह विचार रहे थे कि राजेन्द्र कहीं मना न कर दे अथवा यह रस्म क्या देते हैं? राजेन्द्र के विचार तीनों से गहरे थे। अन्त में शान्ति भंग करते हुए वकील साहब बोले—अच्छा चलता हूं बड़े बाबू और उन्होंने अपनी काली शेरवानी की जेब से एक गिन्नी निकाली और कहा—इसे हमारी ओर से प्रथम मिलन की निशानी के रूप में रख लो।

उस सोने के टुकड़े को देखकर राजेन्द्र की आखों में खून उतर रहा था। इसी सोने के टुकड़े ने उसको कैसा विवश किया। इसी सोने के टुकड़े ने दो प्रेमी आत्माओं की आखों के स्वप्न को धूल में मिला दिया। बढ़ता हुआ सोने का गोल टुकड़ा ऐसा लग रहा था जैसे कि उसकी मृत्यु उसकी ओर बढ़ रही है। सिक्के पर गर्दन कटे सम्राट के चित्र के स्थान पर अपना चित्र दिखाई देने लगा। उसके जी में आया कि वह जोर से ऐसा हाथ मारे कि वह टुकड़ा दूर जाकर पड़े। उसके हाथ काप उठे और वह उसके भार को न सम्भाल पाया और वह टुकड़ा धरती पर गिर गया। उसके झकार में उसके हृदयतंत्री के तार इतने जोर से झकृत हो उठे कि ऐसा प्रतीत हुआ मानो वह टूट जायेंगे। उसका हृदय चीख उठा। उसके हृदय की चीख में किसी नारी की कोमल चीख सुनाई दे रही थी, कोई उससे कह रहा था कि तुमने विश्वासघात किया।

हरि बाबू ने वह सोने का टुकड़ा उठा लिया। जब वकील साहब चले गये तब उन्होंने कहा—बेटा, मुझे तुमसे ऐसी ही आशा थी। यह शादी-विवाह मनुष्य के कर्मों के अनुसार होते हैं। जिसके भाग्य में जहां शादी लिखी होती है वहीं होती है। देखो न कहां पटना और कहां आगरा? मनुष्य की अशान्ति से मुक्ति इसी में है कि वह सन्तोष करे। जो कुछ हो उसे भगवान की असीम कृपा समझे और जो कुछ मिले उसे भगवान की देन समझे। यह तुम्हारा भाग्य है कि तुम्हारी इतने अच्छे कुल में शादी हो रही है। इतना मिल रहा है, तुम्हारा सहारा पाकर तुम्हारी बहन भी तर जायेगी।

राजेन्द्र मौन था। वह चुपचाप दूसरे कमरे में चला गया। हरि बाबू

प्रसन्न होकर आंगन में आये। कब से राह देखते-देखते गंगा के नयन थक गये थे, लेकिन हरि बाबू को देखते ही उनकी ओर उठ गये। वह बोली—क्या दिया है?

—गिन्नी।—कितना उल्लास था जैसे कि कुबेर की अतुल सम्पत्ति मिल गई हो।

—सच।—गंगा की आंखे बड़ी हो गईं।

वह जाकर एक गिलास चाय भर कर ले आई और जिस कमरे में राजेन्द्र बैठा था आकर बोली—

—रज्जू कमरे मे बैठा-बैठा क्या कर रहा है अंधेरे मे। अरे रोशनी कर लेता।

रज्जू का हृदय पुकार उठा, मां, जिसके जीवन का दीपक बुझा दिया जाये, उसके जीवन में अंधेरा नही तो प्रकाश रहेगा। सूर्य का कार्य क्या दीपक से चल सकता है? दीपक की बाती क्या रजनी को दिन बना सकती है? उसके अन्तर मे जो हाहाकार उठ रहा था वह अन्तर तक ही सीमित था। एक कड़ुवा घूट वह पीने का प्रयास कर रहा था बोला—

—मां, मैं गर्मी मे चाय नही पीता।

—बेटा पी ले न, गर्मी मे गर्म चाय ठंडक देती है।

आज मां से उसे प्रथम बार ममता मिली थी। उसमें आज एक मधुरता थी, परन्तु हृदय के कोलाहल में वह दब कर रह गई थी। उसने कहा—

—रख दो।

गंगा चली गई। राजेन्द्र के कानों मे मुन्नी के शब्द पड़ रहे थे मां, आज गाना करवाओ। मैं गाऊंगी, नाचूंगी भैया की शादी होगी, मां फिर भाभी के साथ मेरा भी मन लग जायेगा। मां, कब होगी शादी? जल्दी करवाओ न। कब से मेरी इच्छा है कि हमारे घर मे भाभी आये। सरला, कमला अपनी भाभी के गुण गाती रहती हैं। मुन्नू भी कह रहा था कि मां, भाभी मुझे पढ़ायेगी, मेरे लिए खिलौने लायेगी। मां, मैं भी जाऊंगा शादी मे। मां, भाभी कैसी है? मुन्नी बता रही थी कि चांद-सी सुन्दर है।

सत्रह

अमृत ऑफिस के बाद कैन्टीन के पास की दुकान पर से सिगरेट लेकर जलाने लगा। पान वाला बोला—

—अमृत बाबू, अब नये इन्सपेक्टर साहब भी पीने लगे।

—कौन ?

—वही जो आपके साथ रहते हैं भला-सा नाम है उनका। श्रीराम रोड पर लगे हैं।

—राजेन्द्र ! क्या राजेन्द्र सिगरेट पीने लगा ?

—क्यों क्या आश्चर्य हुआ ? अरे बाबू जी यह दिल्ली है। नये रंग सब पर चढ़ जाते हैं। अच्छा है, नया ग्राहक बढ़ा है। दो-चार पैसे हम गरीब भी कमा लेंगे।

अमृत वहां से चल दिया। उसका माथा ठनका।

—कितने दिन हो गये ?

—यही तीन-चार दिन।

चार-पांच दिन पूर्व तो वह आगरे गया था। कह रहा था कि वह अपने पिता से विवाह की बात पक्की करके आयेगा पर तीन-चार दिन से पीनी भी आरम्भ कर दी। इसका अर्थ यह कि उसको आये तीन दिन हो गये और उससे मिला भी नहीं क्यों ? कुछ बात अवश्य है।

वह वहां से सिगरेट जला कर आगे बढ़ा और कुछ सोच रहा था। उसने पूरी जलती सिगरेट फेंक दी। उसके मुख से निकला—यह क्या बला है ? उसने देखा नीरा सामने कुछ आगे आ रही है। उसने अपनी साइकिल आगे बढ़ा दी तथा पास जाकर रोकी, नीरा का मुख कुछ पीला-सा प्रतीत हो रहा था, अमृत ने कहा—

12 बजे आता है, न कुछ खाता है और न कुछ बोलता है। नीरा के मुख पर उदासी थी और आंखों में सावन-भादों की काली घटा, जो बरस पड़ी।

—साहस से कार्य लो नीरा, यह स्थान रोने का नहीं। समझ मे नहीं आता है कि उसे क्या हो गया है।

नीरा चुप थी और अपने आंचल से अपने आंसू पोंछ रही थी बोली—पता नही मुझसे क्यों नही बोले।

—नीरा, तुम घर जाओ, आज मैं इसका पूरा पता अवश्य ही लगाऊंगा। नीरा, तुम धीरज धरो।

नीरा घर की ओर चल दी। अमृत उसे छोड़कर आया। उसके पास साइकिल थी। जब वह आ रहा था तब सामने से उसका एक दूसरा साथी मिल गया। वह बहुत मना करने पर भी नही माना और पास के एक रेस्टोरेन्ट मे ले गया। दो गिलास लस्सी के दोनों के सामने रखे थे। उसके मित्र ने कहा—

—अमृत, आज तेरे मुह पर बाहर क्यों बज रहे है? यार तू तो सदा गुलाब का फूल बना रहता है।

—कुछ नही।

—किस सोच-विचार मे पड़ा है?

—कुछ नही, कौन साला सोच रहा है। हा, कोई ताजी बात सुनाओ।

—क्या सुनाएं भाई अब तो राजेन्द्र भी जाने लगा है।

—कहां?

—अरे कैसा बनता है? जैसे तू जानता ही नही। तेरा ही तो दोस्त है। उस रोज पार्टी मे कैसा बन रहा था कि मैं घूस नही लूंगा। बेटा घूस न लेता तो कोठे पर जाने के लिए और बोतल खाली करके ढुलका देने के लिए रुपये कहां से आये।

—कपूर, पागल हो गया है क्या! या तू पीकर आया है?

—नही मानता तो जा देख आ। आज ही मैंने उसको जी० बी० रोड जाते देखा है। 599 (राशन की दुकान का नम्बर) से बीस रुपये मांग रहा था। लाला के पास थे नही, उसने मना कर दिया।

—कपूर!·········राजेन्द्र!! अमृत के मुख से दो शब्द निकले।

वह लपककर साइकिल की ओर बढ़ा।—अरे प्यारे, गिलास तो खाली कर जा। उसने हंसकर कहा, लेकिन अमृत साइकिल पर बैठकर जा चुका था।

अमृत जी० बी० रोड के चक्कर लगा रहा था। वह दो-तीन जगह गया पर उसको कहीं राजेन्द्र नहीं मिला। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह कहां गया। वह साइकिल पर पागलों के समान चक्कर लगा रहा था। उसको वे स्वर वे झंकार जो कभी इतने मधुर लगते थे कि जिन पर वह मोहित होकर रुपये लुटाता था आज वही उसके कानों में ऐसे लग रहे थे जैसे कि उसके कानों को फाड देंगे। उनका संगीत उसको एक शोर-सा लग रहा था। उसको एक शोर और भीड ने आकर्षित किया।

पास के जीने में किसी को दो व्यक्ति मारते-पीटते नीचे ला रहे थे। कह रहे थे कि सालों ने खाला का घर समझ रखा है। चले आते हैं खाली जेब। कपडे में साहब लगते हैं, है पाकिटमार। भीड के लोग हंस रहे थे और अनेकों प्रकार के अश्लील व्यंग्य की चुटकियां ले रहे थे। अन्धकार में वह व्यक्ति का मुख नहीं देख पाया। लेकिन जब वहां से उठकर चलने लगा और मन्द प्रकाश से निकला तब अमृत के मुख से निकला—

—राजू! और अमृत राजेन्द्र से लिपट गया।

—कौन?

—हां राजू, क्या हो गया है तुमको?

—कुछ नहीं, आज जेब में पैसे नहीं थे सोचा कि आज बिना पैसे के ही। बाद में जब उसको पता लगा कि मेरी जेब खाली है तो उसने मुझको अपने आदमियों से फिंकवा दिया, जैसे शराब की खाली बोतल।

—राजू।

—यार लेकिन है गजब की, नई है, कमसिन है।

—क्या हो गया है राजू···तुम्हारे मुंह से शराब की बदबू आ रही है।—अमृत ने कहा।

—बड़ा मजा आता है तुम तो जानते ही हो। पहले दिन कुछ कड़वी लगी। पर कहते हैं कि इसके एक घूंट से आदमी सौ गम भुला सकता है।

—तुम पागल हो गये हो?

अमृत ने उसको अपनी साइकिल के आगे बिठा लिया। पहले वह

आनाकानी कर रहा था, परन्तु अमृत ने तनिक जोर लगाया तो बैठ गया।

—मैंने सुना है कि तुम सिगरेट भी पीने लगे हो।

—हां अमृत, पहले तो जरा खांसी आती थी, अब तो बड़ा मजा आता है। आखिरी दम मारने में तो पैसे वसूल हो जाते हैं। पहले तो मैं एक पैकिट लेता था, आज एक टिन लाया था। देखो न? वह भी खाली हो गया।

—राजू, मैं तुमको इतना कमजोर नहीं समझता था। तुम मुझको क्यों नहीं बताते क्या बात है। मैं तुम्हारी कदाचित मदद कर सकूं।

—मेरी मदद? क्या मैं कमजोर हूं?—राजेन्द्र ने कहा।

अमृत उस रात राजेन्द्र से कुछ न पूछ सका। उसको घर छोड़ कर वह लौट आया। दूसरे दिन वह सुबह ही उसके घर पहुंच गया। राजेन्द्र पास के एक छोटे से पत्थर पर बैठा था और सामने से जाती रेलगाड़ी को देख रहा था। अमृत भी उसके साथ आकर बैठ गया—क्या देख रहे हो, राजू?

—सामने उन लोहे की रेल की पटरियों को, जिनके ऊपर से रेल निकलती है, कहते हैं पैसा रखो तो चपटा हो जाता है, यदि पैसे के बदले आदमी रखा जाए तो?

—क्या राय है तेरी?

—नीरा से पूछना।

—तुम ही पूछना।

—लेकिन यह सब नाटक क्या है?

—नीरा को भुलाने के लिए।—हंसकर राजेन्द्र ने कहा।

—इसलिए कि नीरा मुझसे घृणा करने लगे। मैं उसके सामने एक पापी और हत्यारा हूं।

—बड़े भोले हो राजू! लेकिन फिर मैंने तुम्हारे मुंह में सिगरेट देखी तो तुम्हारा मुंह नोच लूंगा, अगर तुम्हारे पग उधर की ओर उठे देखे तो टांगें तोड़ दूंगा। याद रखना अमृत जितना कोमल है, उतना कठोर भी।

—अमृत के शब्दों में रोब था।

—अमृत, मुझे हो क्या गया है, मेरी समझ में नहीं आता। मैं जो काम नहीं करना चाहता हूं, उसे क्यों कर रहा हूं?

—यह सब इसलिए है कि तुम पागल हो। अपने को बुद्धिमान समझते हो। कभी अमृत से भी किसी बात की सलाह ली? कमजोर हृदय के लोगों का यही हाल होता है।

—पर सिविल मैरिज ··

—तुम कुछ न कहो राजू, यह काम अदालत करेगा। मैं तुम्हारे समान कायर नहीं और न तुमको शक्तिहीन बनने दूंगा। यदि माता-पिता गलती करें तो पुत्र उसको सह ले। विवाह जीवनभर का प्रश्न है। विवाह तुम्हारा होना है न कि तुम्हारे पिता का। सोचने-समझने की भी कोई सीमा होती है।

—अमृत।

अमृत जा चुका था। राजेन्द्र को आज अपने ऊपर ग्लानि हो रही थी कि उसने यह सब क्या किया। जिस स्थान पर जाने से वह रात भर नहीं सो सकता था। वह वहीं गया। जिसकी दुर्गन्ध से वह मुख पर रूमाल रखे बैठा रहा, उसी मदिरा का उसने पान किया।

जिसके कृत्रिम रूप और सौन्दर्य को देखकर उसका जी थूक देने को चाहता था, उसी पर उसने अपनी मेहनत की कमाई लुटाई। किस कारण? यह मूर्खता नहीं तो क्या है? कल रात वह बड़ा ऊपर से नीचे फेंक दिया गया तब उसका क्या सम्मान रहा। उसे आज अपने से घृणा हो रही थी।

यह सब उसने किस कारण किया? इसी कारण न कि उसका विवाह मीरा से नहीं हो रहा है। अमृत सिविल मैरिज के लिए कह रहा है क्या यह उचित है? वह क्या मुंह लेकर घर जायेगा। लोग क्या कहेंगे? यही कि हरि बाबू इतने भक्त और साधु थे, उनका पुत्र कपूत निकला। एक दूसरी लड़की को घर की इच्छा के विरुद्ध शादी करके ले आया। और फिर उसके ही कारण मुन्नी का क्या होगा? क्या एक दम अपने भाई के कारण

अठारह

हरि बाबू के घर विवाह की तैयारी जोर-शोर से होने लगी। तिलक के एक हजार रुपये आ चुके। गंगा अपने पति हरि बाबू के साथ प्रतिदिन बाजार जाया करती और कुछ-न-कुछ चीजें ले आया करती। कभी साड़ी, तो कभी गहने। शैलनी (मुन्नी) सदा काढ़ती या बुनती दिखाई देती थी। कभी बड़िया टूटती तो कभी चावल के सेव बनते। घर में लड़के की पहली शादी। गंगा भी ऐसी तैयारी कर रही थी जैसे लड़की की शादी हो। यद्यपि उसका ध्येय यह था कि इसमें से भी बचा लिया जाये और फिर जो खरीदा जायेगा वह बेकार तो जायेगा नहीं, घर का घर में आ जायेगा। वह बेटी को देने के काम आ जायेगा। इस कारण जो कुछ किया जाये अच्छा ही किया जाये क्योंकि उसमें हानि की कोई सम्भावना नहीं है। शादी की तिथि 18 नवम्बर को निकली थी, केवल दो महीने ही शेष रह गये थे। इस कारण गंगा प्रायः कुछ-न-कुछ करती दिखाई दे रही थी।

पर हरि बाबू एक पग आगे रखने की सोच रहे थे। उनका कहना यह था कि लगे हाथ यदि शैलनी की भी शादी हो जाये तो व्यय भी कम होगा और भार भी शीघ्र उतर जायेगा। इस कारण उनकी आंखें सदा खोजती रहती कि कोई अच्छा लड़का मिल जाये, जिसमें लेना-देना भी कम पड़े और विवाह भी अच्छा हो जाये। उन्होंने कई स्थान पर पत्र भी लिखे और फोटो भी भेजो। लोग फोटो देखकर हां कर देते, पर अधिकतर नवदो के मामले में उन्हें मुंह की खानी पड़ती और जो कोई राजी भी होता तो लड़की देखकर मना कर देता।

शैलनी संसार की उन लड़कियों में से एक थी, जिसको सब गुण मिले हैं पर सौन्दर्य नहीं। उसकी रूपहीनता उसके राह का बाधक है। वह नव-विकसित कली थी, जिसमें सुगन्ध नहीं, सौंदर्य नहीं, पराग नहीं फिर कौन उसकी ओर हाथ बढ़ाता !

शैलनी को स्वयं अपने से घृणा थी कि उसे ऐसी भद्दी बना दी गई है, कभी-कभी वह दर्पण में मुख देखकर रोया करती। उसे किसी वस्तु का चाव नहीं था। यदि कभी राजेन्द्र उसके लिए सुन्दर साड़ी आदि लाता तब भी

गंगा की समझ में कुछ बात आई। प्रत्येक मां की यह लालसा होती है कि वह अपने हृदय के टुकड़े को उसी घर में भेजे जहां उसे सुख मिल सके। गंगा भी मां थी, परन्तु वह उस राही के समान थी जो कि अन्धकार में चलते-चलते निराश हो गया हो, और उसे अभी तक अपनी मंजिल का पता न लगा हो। निराशा के गहन आवरण ने उसकी आशा को दबा रखा था। उसने कहा—

—यदि तुम कहते हो तो वहां हो आऊंगी, पर मैं बहुत वर्षों से नहीं गई। उसकी मां भी क्या सोचेगी ?

—अरे ऐसा ही होता है। सोच-समझ कर सौदा तय करना। अपनी चादर देखकर पांव पसारना।

—हां, हां तुम घबराओ नहीं।

उन्नीस

राजेन्द्र अभी कुछ निश्चित ही नहीं कर पाया था कि पिता का पत्र उसको मिला। हरि बाबू ने लिखा था—बेटा, तुमको यह सुनकर प्रसन्नता होगी कि भगवान की हम पर असीम कृपा है। तुम्हारे साथ-साथ भगवान ने मुन्नी की भी सुन ली। तुमको तो पता होगा कि मुझे उसकी कितनी चिन्ता थी। बेचारी वह स्वयं घुली जा रही थी। आज भगवान ने मेरे ऊपर से दुःख का भार उतार दिया। हमने इसी उपलक्ष में कथा कराई थी। दो ब्राह्मण जिमाये। मुन्नी का विवाह रम्भू से तय हो गया है। तुम्हारे विवाह के बीस दिन बाद उसका दिन भी निकला है। सौदा सस्ता ही तय हो गया है। हमको पांच सौ तिलक और दो हजार नकदी दरवाजे पर देने होंगे। एक तो कोई राजी नहीं होता था और होता भी था तो पांच हजार से कम बात नहीं करता था। मुन्नी का टीका तुम्हारी बारात लौटते ही कर देंगे। तुम्हारी क्या राय है शीघ्र लिखना।

राजेन्द्र पत्र पढ़ कर चुप रह गया । वह क्या अपनी अनुमति दे । जिन
स्थान में उसकी अनुमति की आवश्यकता थी, वहां तो उसकी अनुमति ली
नहीं गई । क्या करे वह, यह उसकी समझ में नहीं आ रहा था । एक के
ऊपर दूसरा निर्भर है । यदि वह स्वार्थ करता है तो उसकी बहन का क्या
होगा । क्या वह आजीवन अविवाहित रहे ? और वह आत्म-तुष्टि करे और
वह दु:ख के आंसू रोयेगी और वह चुप थी हकी हंसे । यह ग्रन्थि ऐसी
उलझी थी कि जिसका सुलझाना समझ के बाहर हो रहा था नीरा का क्या
होगा ? नीरा क्या करेगी ?

वह एकदम उठ खड़ा हुआ और साइकिल उठाकर नीरा के कमरे की
ओर चला गया । नीरा कमरे में अकेले 'हेलो ! रामनिंग ऑफिस ।' करते
रबर के लम्बे ट्यूब जिनके सिरे पर पीतल की घुंडी लगी थी, सामने रं
बोर्ड के छेदों में इधर-उधर लगा रही थी । राजेन्द्र ने धीरे से द्वार खोला
और कुछ देर उसकी ओर देखता रहा । वह आगरे से आने के बाद पहली
बार नीरा से मिलने गया था । कई बार उसने जाने का साहस किया, पर
उसके पग डगमगा जाते । वह वहीं से नीरा को देखता रहा । उससे न रहा
गया, उसने बोलने का प्रयास किया पर अंगुली उठ कर रह गई । क्या इस
भोली बालिका जिसने अपने जीवन में सुख का आज तक अनुभव नहीं किया
है उसको दुख-सागर में डूब जाने दे, और अपने को दूसरे के रुपये पर बिक
जाने दे । नहीं, नहीं । पर वह कर ही क्या सकता है, एक ओर बहन के
विवाह का प्रश्न है और दूसरी ओर अपना ! एक का त्याग आवश्यक है ।
ह अपना ही करेगा, नीरा को भुला देगा । समझेगा उसने प्रेम ही नहीं
किया । सब कुछ एक असत्य स्वप्न मात्र था । वह अपने को न सम्भाल
सका और उसके पांव पीछे हट गये परन्तु द्वार के खटकने की ध्वनि से नीरा
चौंक गई । उसने पीछे देखा द्वार बन्द थे । बाहर निकली देखा राज नीचे
उतर रहा था ।

'राज' नीरा के मुख से निकल गया । राजेन्द्र ने पीछे मुड़कर देखा
और कुछ देर तक उसके मुख की ओर देखता रहा । उसकी आखें डबडबाई
हुई थी । नीरा ने कहा—राज, अन्दर आ जाओ ।

राज अन्दर आ गया । दोनों एक-दूसरे को देख रहे थे । दोनों की

अवकाश ही नही देते। कभी असम्भव की ओर पांव न उठाओ।—नीरा ने कहा। इतने मे घण्टी बजी और उसने तुरन्त नियत स्थान पर कनेक्शन लगा दिया।

—नीरा, तुम क्या चाहती हो कि हमारा प्रेम जो कुछ है एक झूठी कहानी, उसको हम भूल जायें क्या उसको मिटा दें। अपनी आशा के स्वप्न हम स्वयं ही मसल दें?

—नही राज, समझो प्रेम मिटता नहीं अमर होता है। त्याग प्रेम की परीक्षा है। जिस प्रकार तपने से सोना निखर जाता है, उसी प्रकार प्रेम भी। मैं तुम्हारी हूं और तुम्हारी ही रहूंगी।

—और मैं किसी और का हो जाऊं?

—नही राज, तुम्हारे शरीर पर मेरा अधिकार नही है। जिसने पाल-पोस कर बड़ा किया है, उसका है। वह चाहे तुम्हें जिसको दे, पर तुम्हारी आत्मा अवश्य मेरी है।

—क्या हृदय और आत्मा विभिन्न हैं?

—हां राज, मनुष्य बहुत से कार्य इसलिए करता है, जिसकी आवश्यकता उसको संसार में रहने के लिए होती है। जैसे खाना-पीना; विवाह इत्यादि और बहुत से कार्य वह मानसिक कार्य से अलग भी करता है, जिन का उनसे कोई सम्बन्ध नही होता है। वे कार्य आत्मा सम्बन्धी कार्य हैं।

—तुम्हारे आदर्श किताबी हैं नीरा! मुझे पता है तुम जो कह रही हो केवल इसलिए कि तुम मुझे परिस्थितियों मे जकड़ा देख रही हो।

—नही राज, मुझे समझने का प्रयास करो।…इतने में द्वार खुला।

—अरे कौन? अमृत!—राज ने कहा।

—नही, दोनों बात करो मैं चलता हूं।

—आइये, आइये।

—आज सरीन कहा है?

—छुट्टी पर, उसके पिता की तबीयत बहुत खराब है।

—हां, तो क्या निर्णय किया आप दोनों ने?

—भई मैं नही चाहती कि कोई कार्य ऐसा किया जाए जो कि दोनों

की इच्छा के विरुद्ध हो।

—तुम तो पागल हो नीरा, इतना समझाते-समझाते मेरा दिमाग भी पागल हो गया। यह बीसवीं सदी है नीरा। अधिकारों के लिए संघर्ष का युग।

—अधिकार यदि अधिकार के रूप में हो तब न।

—क्या तुम्हारा राज पर अधिकार नहीं?

—है।

—फिर विवाह?

—फिर क्या? मेरा अधिकार विवाह के बाद भी वैसा ही रहेगा।

—हृदय का यह धोखा कितना सुन्दर है मीरा।—अमृत ने कहा।

—मेरी समझ में कुछ नहीं आता।—राजेंद्र ने कहा।

—तेरी समझ में क्या आयेगा। यदि तुम्हारी समझ काम करती होती तो मैं तुम्हारे बारे भी क्यों बोलता। नीरा, इसका भार तुम मेरे ऊपर छोड़ दो। यदि तुम यह चाहती हो कि विवाह दोनों के परिवार की इच्छा पर हो, वह भी अमल कर लेगा।

—कैसे?—दोनों के मुँह से अकस्मात् निकला। फिर दोनों एक-दूसरे का मुँह देखकर लजा गये।

भी जानते थे कि वह नीरा से प्रेम करता है। आशा और नियति की डोर से उलझा राजेंद्र कुछ खोया-खोया सा रहता था। वह बहुत दिनों से अपने पुराने कमरे में नहीं गया था, जिसमें बैठ कर उसने एक वर्ष कलम घसीटी थी। वह उसी ओर चला गया। गोस्वामी जी उसी स्थान पर बैठे थे। कुछ देर के लिए उसके सामने वह चित्र साकार हो गया, जबकि वह स्वयं वहां बैठा करता था। गोस्वामी उसे देखकर बोले—

—ओह ! राजेंद्र बाबू ! ! अब तो तुम दिखाई ही नहीं देते ?

—मैंने सुना है कि राजेंद्र बाबू शादी करने वाले हैं।—उसके स्थान पर बैठने वाले बाबू ने कहा।

—तनेजा साहब, विवाह भी एक ऐसा बंधन है, जो इससे बंधे हैं वह मुक्त होना चाहते है, और जो बंधे नहीं वह बंधना चाहते है।—गोस्वामी ने कागज पर कुछ लिख कर एक ट्रे में डाल दिया।

—गोस्वामी जी, आप ठीक कहते हैं, पर भई इसी कारण मैं इस बंधन में बंधना नहीं चाहता हूं। आप ही बोलिए जिसको 120 रु० मासिक मिलता है वह दिल्ली में रह कर क्या स्वयं खाये और क्या पत्नी को खिलाए और फिर कहीं दो-चार हो गए तो उनके पेट में क्या पत्थर डाल दे।

यद्यपि इन वाक्यों में कठोर सत्य था, राजेन्द्र को यह वाक्य रुचिकर न लगे। वह वहां अधिक देर न टिक सका। कैन्टीन की ओर चला गया। वहां तीन-चार लोगों की टोली थी, जो कि कदाचित उसके समान सब-इंस्पेक्टर थे। उनमें से एक बोला—

—आओ राजेन्द्र।

राजेन्द्र उनके पास बैठ गया। उनमें से एक ने सिगरेट पेश की। राजेन्द्र ने कहा—

—भई पीता नहीं।

—बीच में शुरू तो की थी ?

—छोड़ दी।

—अच्छा किया।

—हां, कपूर, कुछ ताजी सुनाओ !—राजेन्द्र ने कहा।

—भई, वह ही तो हम लोग अभी कर रहे थे। फूड विभाग में वह था न शमशेर सिंह, अरे वही पतला-सा लम्बा, काला-सा था, उल्टे बाल काढ़ता था, जुगेन्द्र का दोस्त था।

—अरे जो शक्ति नगर में रहता था ?

—हां, तुम्हारी तरह सीधा था और लपेट दिया चार सौ बीस ने। उसका भाई है राना सी० पी० डब्लू० डी० में काम कर रहा है, उससे मिलने वह वहां गया। वह वहां था नहीं। पास का एक बाबू उसका मित्र हो गया था। उसने कहा कि जरा यह कागज भर दो। उसने भर दिया, पर वह 25 हजार का माल हड़पने से सम्बन्धित था बच्चू तो साफ बच गये पर शमशेर फंस गया। वह तो कांग्रेस के नेता ने जमानत दे दी नहीं तो वह भी अमृत के समान हवालात में पड़ा होता।—कपूर ने कहा और सिगरेट का एक कश मारा, धुआं काफी दूर तक चला गया।

राजेन्द्र पूरी कथा सुनता रहा, परन्तु अन्तिम वाक्य ने उसको अकस्मात् आघात किया।

—क्या कहा ? अमृत हवालात में ?

—हां, यह तो तुमको बतलाना भूल ही गये थे कि अमृत ने चांदनी चौक के किसी ज्वेलर्स को दुकान से लौटते समय उस पर चाकू से प्रहार किया वह गिर पड़ा पर मरा नहीं। वह चिल्ला कर पुलिस से अमृत को पकड़वाने में सफल हुआ। जब अमृत पकड़ा गया तब उसके हाथ में एक थैली थी। उसमें लगभग तीन हजार रुपये और कुछ अति मूल्यवान नग थे।

—अमृत !—राजेन्द्र के मुख से चीख निकली।

—अरे भई, जो कोठे पर जाकर वेश्याओं पर रुपये लुटायेगा, शराब पीयेगा, क्लब, होटल और सिनेमाघर जाने की सोचेगा और मिलेंगे उसको फकत गिने-गिनाये 140 रु० मासिक तो क्या नहीं करेगा। चोरी करेगा, गहने बेचेगा, जेब काटेगा, डाके मारेगा। घर पर बीवी होगी तो उसके गहने बेचेगा।—एक पास बैठे युवक ने कहा।

—डैजल !— उसने उस व्यक्ति को तीव्र स्वर में कहा।

—अरे ! इसमें नाराज होने की क्या बात है ? राजेन्द्र, यह तुम्हारा

मित्र था ठीक है, पर उसके कार्य तो शैतानों जैसे हैं। क्या वह भी तुम्हारे जैसा गोबर गणेश कहलायेगा ?—दूसरे ने कहा।

—सक्सेना !—स्वर में गर्जन था।

—राजेन्द्र ! उसने तुमको बिगाड दिया। अरे भगवान को जाकर प्रसाद चढ़ा। कपूर देख, जब यह आया ही आया था तो कितना सीधा था। अब इसमें कितना परिवर्तन आ गया ? एक-दो बार उसके साथ वहां भी हो आया है।

—और अकेले भी।—कपूर ने कहा।

—अरे भई, यह समाचार सुन कर ए० आर० डी० एरिया राशनिंग डिपो वाले सुख की सास लेंगे। घूस लेने की भी कोई सीमा होती है—सक्सेना ने कहा।

—और कंजूस इतना था कि एक पैसा खर्च करते दम निकलता था।

—कपूर, तुम तो उसके मित्र थे।—राजेन्द्र ने कहा।

—कौन उस बदमाश का मित्र बनेगा।—कपूर ने कहा।

—तुम सब क्या जानो, वह शैतान, बदमाश नहीं, इन्सान है और इन्सान से बढकर देवता। देखने के लिए तुम्हारे पास आंखें नहीं।—राजेन्द्र ने क्रोध में भर कर कहा और वहां से उठ कर चल दिया।

—जा भई, उस देवता की पूजा कर।—कपूर ने कहा और सब हंस पड़े।

—अरे यार, तुमने उसको भगा दिया। एक तो फांसा था कि वह हम सब के बिल के पैसे देता।—वैंजल ने कहा।

—लेकिन यार, इसने छोकरी अच्छी फासी है।—सक्सेना ने कहा।

—लेकिन वह भी अजीब पागल है। वह तो इसके पीछे भागती फिरती है और यह खोया-खोया सा मजनू की तरह रहता है। न जाने कौन-सा मोहिनी मंत्र जानता है।—कपूर ने कहा।

—जा भई, तू भी पूछ आ।—वैंजल ने कहा।

राजेन्द्र वहां से सीधा नीरा के पास पहुंचा। नीरा को जब उसने समाचार बताया तब वह अवाक् हो गई उसके मुख से स्वर न निकला। वह जड़वत हो गई। दोनों अमृत से मिलने कोनवाली में चले गये। वहां

हवालात में बन्दी अमृत दोनों व्यक्तियों को देख कर कुछ मुस्कराया और लजाया। राजेन्द्र के मुख से निकला—

—अमृत!

—राजू, मैं बहुत खराब हूं, आज तुमको पता लग गया होगा। सच मुझे तुम जैसे अच्छे आदमी के साथ नहीं रहना चाहिए था। मैं तुम्हारे साथ रह कर भी कुछ न सीख सका।

—अमृत! यह क्या किया?

—कुछ नहीं राजू, चाकू पुराना था, नहीं तो उसके मुख से चीख तक न निकलती। महीने के अन्तिम दिन थे, नया खरीदने के लिए रुपया न था। अमृत ने कहा उसके मुख पर हल्की-सी मुस्कान थी।

—अमृत तू देवता है, सच लेकिन तुझे हम अभागों के लिए इतना करने की क्या आवश्यकता थी। हमारे भाग्य हमारे प्रतिकूल हैं।—राजेन्द्र ने कहा।

—अरे मेरा क्या भई, सरकार की रोटी पर पल कर इतने बड़े हुए हैं, बाहर मिले तो अच्छा है, लेकिन अन्दर भी कौन से भूखे मर जाते हैं, सरकार अन्दर भी प्रबन्ध करेगी। जीवन में कई बार जेल देखने की आशा होती थी कि देखें अन्दर क्या है? अमृत ने लोहे के सीकचे पकड़कर कहा—ओह नीरा जी भी हैं! क्षमा करना मैं तुम्हारा भवन पूरा बनते नहीं देख पाया, पर मुझे आशा है कि तुम दोनों एक अवश्य होगे। राजू, तुम नीरा के लिए संघर्ष करना।

—अमृत, तू ही तो था सहारा देने वाला! अब कौन होगा।

—नीरा तेरी हमसफर। मुस्करा कर अमृत ने कहा।

—हम आपके लिए जमानत का पूरा प्रयत्न करेंगे।—नीरा ने कहा।

—नहीं, और राजू तुम भी कभी इसका प्रयत्न न करना। मैंने अपने बयान में लिख दिया है कि मैंने उस पर आक्रमण किया है और मैं दोषी हूं। मेरे विचार में आज से दस दिन बाद यानी 18 नवम्बर को मेरा निर्णय अवश्य हो जायेगा।

18 नवम्बर सुन कर राजेन्द्र को ऐसा लगा जैसे कि किसी ने हृदय में प्रहार किया। यह उसके विवाह का दिन निश्चित था। क्या नियति का

खेल है ? उस दिवस उसका कर दूसरे के कर मे दिया जा रहा होगा और उस दिन उसका मित्र जिसने उसकी मित्रता के लिए क्या नही किया, अपने किये की सजा पाने के लिए कटघरे मे बन्द होगा। राजेन्द्र ऐसा अनुभव कर रहा था जैसे कि वह एक लोहे के बन्धन से जकड दिया गया हो जिसको तोड़ने के लिए वह कितना प्रयास कर रहा था क्या अमृत ! तुमने दोनो का साथ छोड दिया। अमृत मैं राजेन्द्र यह कह ही रहा था कि सिपाही ने आकर सूचित किया कि उन लोगो का मिलने का समय समाप्त हो गया है। राजेन्द्र के अतृप्त नयन अमृत की ओर उठे रह गये उसने कहा —

——अमृत ! और राजेन्द्र की आखे भर आई।

—अरे पगले रोता है जीवन क्या रोने के लिए है ? जिन्दगी वही है जो हस कर गुजार दे। अरे भाभी तुम भी क्या हो गया है तुम दोनों को। देखो, मै हस रहा हू, मेरी तरह तुम दोनो भी हसो।—अमृत जोर से हस रहा था। पर राजेन्द्र और मीरा वहा से लौट रहे थे। दोनो ने एक बार पीछे मुड कर उसकी ओर देखा। वह उसी प्रकार से हस रहा था।

मीरा और राजेन्द्र निकल कर दूर तक चले आए। कुछ दूर आने के बाद एक पार्क पड़ा और कुछ दूर चलने के बाद दोनो हरी घास पर बैठ गये। राजेन्द्र ने मौनता भग करते हुए कहा—

—हां राज, क्या ताज महल बना कर ही प्रेम का प्रदर्शन किया जा सकता है। अनेकों विरागी भी अपने हृदय में ताज महल लेकर इस विश्व से चले जाते हैं क्या उनका प्रेम नहीं राज, मिलन से कहीं ऊंचा है त्याग।

—क्या तुमको तब भी सुख मिलेगा?

—क्यों नहीं राज, अतीत के मिलन के चार दिन, उस समय सुख की कल्पना ही तो बनेगी।

—अच्छा नीरा, तुम मुझको सहारा दो कि मैं इस ओर दृढ़ता से पग बढ़ा सकूं।

—राज, तुम साहस से बढ़ो, मुझे प्रसन्नता है, देखते नहीं मेरे मुख पर तुम्हारे समान दुःख के चिह्न नहीं, बल्कि मुस्कान है। मैं तुम्हारे जीवन-पथ को सुगम बनाने के लिए सर्वस्वत्याग करूंगी। मुझको भी बुलाओगे न अपने विवाह में हम भी बन्ना गा लेंगे।—मुस्करा कर नीरा ने कहा। उस मुस्कान में उसका विषाद झलक रहा था, परन्तु उस नारी के मुख पर पराजय के चिह्न अथवा हीन भाव न थे।

राजेन्द्र उसकी ओर देखता रहा और उसकी आंखों की गहराई में डूबने का प्रयास करता रहा। वह बोल उठा—नहीं नीरा, मुझसे कुछ न होगा, मैं विवाह नहीं करूंगा, मैं नहीं करूंगा। तुम्हारी यह मुस्कान क्षणिक है, तुम्हारे विचार काल्पनिक हैं। तुम मुझको नहीं, अपने को धोखा दे रही हो नीरा! मैं जीवन भर तुम्हारे नयनों में दुःख के आंसू नहीं देख सकता।

तुम्हारे हृदय की जलती ज्वाला में तुम्हें भस्म होते नहीं देख सकता। राजेन्द्र ने कहा और उठ कर चल दिया। नीरा ने उठ कर कहा—

—राज, आज से तुम कभी इन आखों में आंसू देखो और इन अधरों पर दुःख का कम्पन देखो, तब मुझको आजीवन विश्वासघाती कहकर पुकारना।

राजेन्द्र कुछ न बोला और अपने पथ की ओर चला गया।

नीरा कह तो सब कुछ गई, लेकिन जब घर पहुची तब एक कमरे में लेट कर फफक-फफक कर रोने लगी। मामी ने जब आकर पूछा तो कह दिया कि सिर और कमर में जोर स दर्द हो रहा है। भोली मामी सिर पर गोले का तेल लगा रही थी। घाव कहा था और दवा कहा लग रही थी।

नीरा की आंखें बन्द थी। उसके सम्मुख न जाने कितने चित्र बन रहे थे और मिट रहे। अनेकों उपन्यासों और चित्रपट की घटना उसे स्मरण आ रही थी, जब कि नारी ने अपने प्रेम में त्याग किया और उसका प्रेम एक आदर्श और पूजनीय माना गया। क्या उसके प्रेम का भी यही महत्त्व होगा? क्या कोई यह भी कहेगा कि नीरा ने अपने प्रेम में इतना बडा त्याग किया, जो आज के युग में केवल कल्पना मात्र है।

भारतीय नारी इस विश्व में सबमें बडा त्याग कर सकती है उसका हृदय दुःख के भार को उठाने का आदी होता है। वह हृदय में विषाद की खान और अधरों पर मुस्कान रखना जानती है। वह आसू को पीना और समाज के सकेतों पर नृत्य करना जानती है इसी कारण उसकी कहानी विश्व की नारियों में सबसे करुण कहानी है।

इक्कीस

श्रीगोपाल जी ने राधिका के कहने पर कई पत्र अपने बड़े भाई हरि बाबू

को लिखे परन्तु हरि बाबू को अपनी स्थिति कमान से छूटे हुए बाण के समान लगती थी। श्रीगोपाल जी एक बार क्रोधित भी हो गये। उन्होंने अपनी पत्नी राधिका से कहा कि भैया तो सदा भाभी के कहने पर चलते हैं पर वह यह नहीं समझ सकते है कि समय में कितना परिवर्तन हो चुका है। जो कल था वह आज नहीं। हमें आज के युग मे रहने के लिए आज के अनुसार रहना पड़ेगा। वह समय गया जब कि लड़के ने लड़की देखी तक नहीं और उससे पूछा तक नहीं तथा विवाह कर दिया। आज का युग प्रगतिशील है। यदि लड़का अपनी इच्छा से विवाह करता है तो क्या कोई बुरा करता है। परन्तु भैया के समझ मे तो आता नहीं। कभी-कभी श्रीगोपाल जी भी क्रोधित होकर कह उठते कि यदि भैया को राजू का विवाह अपनी इच्छा से करना है तो करे। मैं इस सम्बन्ध मे हाथ नहीं बटाऊंगा। वह दो प्राणी के जीवन से खेल रहे हैं।

राधिका समझदार थी वह जानती थी कि हरि बाबू किस परिस्थिति में है। वह अपने पति को समझाती कि करें तो जेठ जी भी क्या करें। लड़की का बोझा भी तो कन्धे पर है, सोचते हैं लड़के के साथ-साथ लड़की से भी छुटकारा पा जायें। तुम क्यों ऐसा विचार हृदय मे लाते हो कि मैं उनके घर विवाह में नहीं जाऊंगा। अरे सम्बन्ध कहीं तोड़े जाते हैं। उन्होंने तुम को पाल-पोस कर बड़ा किया। वह तुम्हारे मा-बाप, भाई सब के समान तुमसे प्रेम करते हैं और तुम उनके प्रति ऐसा विचार हृदय मे लाओगे तब वह सुनेंगे तो क्या कहेंगे। यही न कि इतना करने का यही बदला दिया। सब तुमको नहीं, मुझे बुरा कहेंगे कि इसी ने भाई-भाई का प्रेम-बन्धन तोड़ कर बैर करा दिया। इस संसार मे सब कुछ वही नहीं हो जाता है जो मनुष्य चाहता है। यदि ऐसा होने लगे तो कौन भूख से मरना और दुःखों मे लड़ना पसन्द करे। सब विधि का विधान है। वह जो कुछ करता है, मनुष्य के भले के लिए ही करता है। इसमे ही कुछ भला होगा।

राधिका पति को सन्तोष देने का प्रयास करती। पर साथ-साथ उसके हृदय मे वेदना का सागर उमड़ पड़ता था। उनके सामने तो नीतिज्ञ के समान शिक्षा देती और राजेन्द्र को समझाने के लिए क्या न करती पर [illegible] मे बैठकर स्वयं रोती। राजेन्द्र उसके हृदय का टुकड़ा हो गया था।

जब वह राजेन्द्र का मुख उदास देखती, तब उसका हृदय भी कांप उठता, परन्तु वह सदा हँस कर उसे भी सदा हँसाने का प्रयास करती।

देखते-देखते वह दिन भी आ गया। राजेन्द्र न कुछ करते हुए भी सब कुछ कर गया। वह आगरे गया। चाचा और चाची भी गये। मीरा भी गई। वह गुलाब के फूल के समान थी, जो कि सब को हँसता हुआ खिला दिखाई देता, पर कांटों की डाली पर छटा बिंध रहा है। भ्रमर को तो उसके पराग और सौन्दर्य से केवल प्रेम है, वह उसके बिंधे हृदय की गाथा सुनने का कहां प्रयत्न करे? वह तो समझता है कि पुष्प उसके गुंजन संगीत से प्रफुल्लित हो रहा है, उसको क्या पता कि इसका अन्तरतम छिदते-छिदते जर्जर हो गया है। सब समझते हैं कि वह प्रसन्न है, उसको दुःख नहीं। विश्व तो उसके गुलाबी कपोलों को देखता है, न कि उसके वेदना-पूर्ण हृदय को। उसकी मुस्कान पर रीझने वाले उसके आन्तरिक वेदना को क्या जाने?

मीरा आगरे तो चली गई, पर विवाह के उत्सव में न गई। वह अपने हृदय की दुर्बलता से नहीं डरती थी वह डरती थी राजेन्द्र के हृदय से जो कि अत्यन्त कमजोर था। उसे भय था कि कहीं राजेन्द्र उसको देख कर कुछ उल्टी-सीधी बातें न कर दे। इस कारण वह घर ही में रहती।

शान्ति, उसकी माँ ने जब यह सुना तो वह सन्न सी अवाक् रह गई। विधवा की आंख का तारा, और वह तारा जब टूट जावे तब उसके हृदय पर क्या बिजली गिरेगी? जितनी आशा से पाल कर बड़ा करने वाली माँ, जब अपनी बेटी की आशा को मिटते देखे, उस समय उसके हृदय पर क्या बीतेगी। जिसके लिए परिश्रम करके उसने अपना जीवन काट दिया, आज उसके जीवन का ही जब कुछ छिन जाने पर क्या उसको दुःख न होगा? शान्ति इस आघात को सहन कर गई। उसके अधरों पर मुस्कान रही, वही धीरज के भाव बने रहे। उसने आँखों पर एक भी आँसू को निकलने तक न दिया। उसने अपने हृदय के टुकड़े मीरा को हृदय से लगा लिया। मीरा को बहुत अच्छा लगा और वह कितनी देर तक माँ की स्निग्ध गोद में लेटी रही।

राजेन्द्र को मीरा की अनुपस्थिति खटकने लगी। वह उसी समय

निकल कर नीरा के घर की ओर चल दिया। द्वार पर थाप देने से द्वार खुल गये। उसने देखा कि सामने नीरा उसी समान बैठी है जबकि उसने पहली बार आकर देखा था। काले बादलों के समान केश बिखरे हुए और उसके मध्य में चांद-सा मुख था। उसके हाथ मे वही तानपुरा आज भी था। शान्ति उसी समान पास बैठी मजीरे बजा रही थी। नीरा गा रही थी 'निश दिन बरसत नयन हमारे' उसके स्वर में पहले से कितनी अधिक वेदना थी, कितनी कसक थी। तानपुरे पर घूमती हुई अंगुलियां उसके हृदय-तंत्री के तारों से किल्लोल करती हुई-सी लगी, परन्तु वेदनामयी झंकार से उसका हृदय असह्य हो गया। उसका हृदय कह रहा था, राजेन्द्र इसका दोषी तू है ? वह दीवार से कन्धा सटाये, भगवान के दो प्रेमियों को उसके चरणों पर नीर बहाते देख रहा था। भगवान की मूर्ति मौन थी। भजन समाप्ति पश्चात् दोनों ने आरती की। इसके पश्चात वे बाहर आईं। उसने दोनों के मुख मुरझाये देखे। शान्ति ने कहा—

—अरे बाहर कैसे खड़े हो ?

—ठीक है।

राजेन्द्र की पलकें नीरा की ओर उठ गईं। उसी नीरा को जब कि उसने पहली बार देखा था तो उसके लजाये नयन और मुस्कराते हुए अधर थे मां की ओर से चंचल संकेत करते हुए। आज भी वही नीरा खड़ी थी सामने, पलकें झुकी हुई जैसे उन पर कितना दुख का भार लदा हो, अधरों से ऐसा पता लग रहा है कि वर्ष बीत गये, भूल कर भी उन पर हंसी नही आई है। पलक एक बार राजेन्द्र की ओर उठे और राजेन्द्र ने नयन रूपी सागर में ज्वार भाटा आते देखा। ऐसा लग रहा था कि सागर तट तोड़ कर दूर तक अपना प्रसार कर देगा। नयन से नयन मिलने पर नीरा ने मुस्कराने का प्रयत्न किया, ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मुरझाई कली ने फिर से विकसित करने का प्रयास किया हो।

राजेन्द्र से नही रहा गया, वह शान्ति के पग से लिपट गया। वह पुकार उठा—

—मां, मुझको दण्ड दो, मैं अभागा हूं। मां, मुझको जोर से मारो पीटो, पर मेरे मुंह से उफ तक न निकलेगी। मैंने तुम्हारी और नीरा की मुस्कान

छीनी है। मेरी ओर घृणा की दृष्टि से देखो। मुझ पर थूको। मां, मैं नीच हूं। स्वार्थी हूं मा।

राजेन्द्र अपने हृदय को वश में नहीं कर पाया।

—अरे राज, क्या पागल हो गया है? शान्ति ने कहा—मेरे लिए जैसी नीरा वैसा तू। इसमें तेरा क्या दोष ! जो कुछ है विधि के हाथ में है यदि उसको ही नहीं मंजूर तो फिर कैसे हो सकता था। मनुष्य को इसी में शान्ति करनी चाहिए, जो कुछ हुआ उसे अच्छा जान कर सन्तोष करो, इसी से हृदय को शान्ति मिलेगी।

—हृदय को शान्ति।—एक आह भर कर राजेन्द्र ने कहा और नीरा की ओर देखा।

—मा, देखो राज विवाह से पहले ऐसा दुखी हो रहा है जैसे कि लड़कियां विदा होते समय होती हैं।

—नीरा !

—क्या पियोगे, चाय या लस्सी।—नीरा ने कहा।

—कुछ नहीं।

—क्यों नहीं, तुम बैठो मैं अभी चाय बना कर लाती हूं।—शान्ति ने कहा और वह चली गई।

—नीरा, तुम आई क्यों नहीं?—राजेन्द्र ने नीरा से पूछा।

—यों ही।

—क्या मां ने नहीं आने दिया ?

—नहीं।

—फिर।

—मैं नहीं चाहती कि मेरे कारण कोई ऐसी उलझन पड़ जाये जिससे सब कुछ बिगड़ जाये और कल मेरे कारण तुमको सब लोग दोषी ठहरायें।

—नीरा, तुमको सदा मेरा ध्यान रहता है। मैं बार-बार सोचता हूं कि क्या विवाह करके मुझको सुख भी मिल सकेगा ?

—क्यों ?

—क्या मैं उसको प्रेम कर सकूंगा ?

—क्यों नहीं।

—मनुष्य जीवन मे एक बार प्रेम करता है, फिर वैसा प्रेम वह बार-बार नही कर सकता है।

तुम्हारा यह भ्रम है। गुण और श्रद्धा, भक्ति व रूप से तथा लगन से सब कुछ परिवर्तित हो जाता है। फिर मैं जो हूं तुमको सहायता देने के लिए।

इतने मे शान्ति चाय का प्याला ले आई। राजेन्द्र ने प्याला ले लिया तथा धीरे-धीरे पीने लगा। शान्ति ने कहा—

—क्यों राज, विवाह के बाद कही हम लोगों को भूल न जाना इसको भी अपना घर समझ कर कभी चले आना।

—मां!—आतुर होकर राजेन्द्र ने कहा।

—और क्या ठीक तो कह रही हैं मा।—मुस्करा कर मीरा ने कहा। विवाह का बन्धन ऐसा ही होता है, सुना है लोग अपने मित्रों तक को भी छोड़ देते है।

—पर राज उनमे से नही, राज याद करके भूलता नहीं।

राजेन्द्र वहां कुछ देर बैठा और फिर चला गया। शान्ति को राजेन्द्र पर क्रोध नही आ रहा था। वह राजेन्द्र की परिस्थिति से पूर्ण रूप से परिचित थी। वह जानती थी कि राजेन्द्र अपने पथ पर अडिग है। उसने कोई विश्वासघात नही किया, कोई स्वार्थ नही किया है। वह विवश है निर्धनता के कारण। शान्ति को उसके मुख पर दुःख देखकर उससे सहानुभूति हो रही थी।

बाईस

आगरा से पांच सौ मील से अधिक दूर पूर्व की ओर स्थित नगर पटना के एक]हल्ले गोरिया टोले में वकील राम नारायण सिंह रहते थे। यदि जकशन . सीधे पूर्व की ओर चल दिया जाने तो लगभग आधे मील के पश्चात

एक लम्बी-सी पतली संकरी गली आती है। उसी गली में उनका घर है। उस अन्धी गली का कदाचित वर्षों के बाद सौभाग्य जागा था। रंग-बिरंगी झंडियां लगी थी। उनके द्वार पर लाउड-स्पीकर लगा था, जिसमें अनेक प्रकार के गीत बज रहे थे जो कि बालकों के लिए मनोरंजन के साधन थे। जिस गली की वर्षों से कभी सफाई न हुई हो अर्थात जो केवल वर्षा ऋतु में ही स्नान करती हो, उस गली में आज छिड़काव किया गया था। गली देख कर ऐसा लग रहा था कि मानो किसी बुढ़िया का रंग-बिरंगे कपड़े पहना कर सजा दिया है। आज उस गली-जीवन का एक स्मृति दिवस था, आगे शहनाई बज रही थी जिसका मधुर स्वर उस गली को सुनने का अवसर वर्षों से नहीं प्राप्त हुआ था। आगे लाल पट्टी पर स्वर्ण अक्षरों में 'स्वागतम्' लिखा था।

राजेन्द्र की बारात के व्यक्ति जो आगरे से आये थे उनका प्रबन्ध श्यामू मामा ने अपने घर पर कराया था। लड़के के नाना थे करते क्यों नहीं? उनका घर उसी सड़क पर कुछ आगे चल कर कदम कुए पर था। घर से जनवासे तक का फासला आधे मील से ऊपर था। दोनों ओर से बरातियों के आवभगत का पूरा प्रबन्ध था।

रस्म पर रस्म चलती गई, राजेन्द्र चुपचाप सब कुछ देखता रहा। दरवाजे की रस्म पर हरि बाबू ने कहा—

—समधी जी ?

—जी हां तैयार है, पर सामने नहीं अलग चल कर।

—जैसी आपकी इच्छा ?

हरि बाबू और श्री बाबू दोनों भाई साथ थे और श्यामू मामा अलग कमरे में चले गये। उन्होंने एक थैली दी। हरि बाबू उसे हाथ में पकड़ने ही वाले थे कि पीछे से एक स्वर आया—

—ठहरिये

सब के सब व्यक्ति पीछे आने वाले व्यक्ति को देखने लगे। वह एक लम्बा-चौड़ा, हट्टा-कट्टा नवयुवक था। उसने कहा—

—आपको पता है कि बिहार सरकार ने नकदी देने के लिए एक कानून बना दिया है। जो इसके विरुद्ध कार्य करता है उसको सरकार दण्ड देगी

है क्योंकि नियम को भंग करने वाले को दण्डित करना सरकार का कर्तव्य है।

—इसका मतलब ?—हरि बाबू ने युवक से पूछा।

इसका मतलब यह है कि देने वाला और लेने वाला दोनों ही दंड के भागी है। आखिर आपने समझ क्या रखा है कि लड़की ले जाए साथ में सैकड़ों रुपये की वस्तु ले जाएं और ऊपर से नकदी। लड़की वाले का भी कोई अस्तित्व होता है। आपके भी कोई लड़की होगी ?—युवक ने ओज में कहा।

—मत बोल शम्भू, हर जगह नेतागिरी नही चलती। इतना बड़ा हो गया पर तुझको यह तमीज नही कि कौन सी बात कहां की जाती है।

—नही भैया, आज मैं इस घर की बरबादी अपनी आंखो से नही देख सकता। इन दीवारों मे जिनमे पल कर मैं इतना बड़ा हुआ हू उसको दूसरे का होता नही देख सकता। कभी आपने यह भी सोचा है कि नन्हे-नन्हे बालकों का क्या होगा ? उनका भी कोई अधिकार है।

—चुप रह शम्भू !—वकील साहब गरज उठे।

तीनों व्यक्तियों की जान मे जान आई। पहले तो वे उसको सरकार का पदाधिकारी समझ कर सहम गये, और जब उनको यह पता लगा कि यह खद्दरधारी उनके घर का ही एक व्यक्ति है, तब तीनों ने सीना फुला लिया। तीनों के नेता जो श्यामू मामा थे वे बोले—

—देखिये द्वार से बरात लौट सकती है। हमारा लड़का है, उसको एक नही हजार लड़कियां मिल सकती हैं, पर आपको कोई नजर तक उठा कर नही देखेगा। तीन हजार देकर आप कोई कुबेर की सम्पत्ति तो नही बांध देंगे। अपना भला-बुरा आप समझ लीजिये।—वह इस कारण अड़ रहे थे क्योंकि विवाह उनके ही लगाने पर हुआ था। यदि कोई छींटे पड़ते तो उनको ही सामना करना पड़ता।

—शम्भू ! तुम अपनी भतीजी को उम्र भर कुंवारी देख सकते हो लेकिन रुपये देते हुए नही देख सकते।

वकील साहब ने कहा।

—नहीं भैया, मैं तुमको बिकता नही देख सकता हूं। जिसे मैंने

पिता और भाई दोनो के ही समान देखा है, उसको लाला की ललकारों से हारा जाता नही देख सकता। मुझ पर भरोसा कीजिये।

—शम्भू !

—भैया आज मैं दृढ़ हूं। आप मेरी पढ़ाई के कारण वैसे ही कर्जदार हैं और मेरा दुर्भाग्य है कि मैं आज आपके योग्य नही, केवल एक आवारा व्यक्ति हूं। हां साहब, यदि आप चाहे तो शौक से लौटा सकते हैं। पर आप लौटाने से पहले सोच लीजिये कि आपने जो पत्र भैया को रुपये की लेन-देन के बारे मे लिखे थे, वह सब के सब मेरे पास हैं।

श्यामू मामा कुछ सहमे। श्री बाबू चाहते थे कि अच्छा है विवाह टूटे। इसी बहाने राजेन्द्र का विवाह नीरा से हो जाये। इस कारण उन्होंने हरि बाबू को यह अनुमति दी कि लौट चलें। राजेन्द्र बाहर खड़ा था, परन्तु उसके कानो में धीमी भनक पड़ रही थी। रुपये पर ऐसे गिरते हैं जैसे कुत्ते रोटी पर गिरते हैं, यह देख कर उसे भी ग्लानि हो रही थी। अन्त मे तीनो व्यक्तियो ने यह निर्णय किया और श्यामू मामा ने निर्णय इस प्रकार सुनाया—

—यह रस्म हो रही है ठीक है, लेकिन यदि फेरे से पहले तक रुपये नही पहुंचेंगे तो हम लोगों को लौटा समझियेगा। हम विवाह कराने आये हैं, कोई हंसी-मजाक करने नही आये हैं। तब तक आप दोनों भाई परस्पर मे निर्णय करके बता दीजिये।

रस्म चलती रही। शम्भू सहम कर चुप हो गया। परन्तु उसका हृदय अन्दर से तरगें मार रहा था। उसने भी अनेकों अनशन किये थे। अनेकों बार उसने जेल मे कोड़े खाये थे। राष्ट्र पर मर-मिटने वाला योद्धा आज अपने घर की लाज पर मर-मिटने को और उसको किसी भी प्रकार से बचाने को तैयार था।

शम्भू पहले श्री गोपाल जी के पास गया क्योंकि वह तनिक कम आयु के व्यक्ति थे। लेकिन श्री बाबू विवाह के पक्ष मे पहले ही नहीं थे। वह अवसर पाकर उसका लाभ उठाने की विचार रहे थे। इस कारण शम्भू को श्री बाबू से निराश लौटना पड़ा। शम्भू ने फिर हरि बाबू के पास प्रयत्न किया कि बिना लेन-देन के काम चल जावे, परन्तु हरि बाबू का

कोरा उत्तर था कि मैं कुछ नहीं जानता, श्यामू मामा ही जानें क्योंकि उन्होंने ही बात पक्की की है। शम्भू श्यामू मामा के पास आ जाता था। बेचारा निराश होकर लौट गया। उसके मुख पर निराशा की झलक देख कर राजेन्द्र ने उसे बुला लिया और उसे एक अलग कमरे में ले गया। राजेन्द्र ने कहा—

—मेरी समझ में नहीं आता है कि यह सब मेरे बहनोई को क्या हो गयी है?

—राजेन्द्र बाबू, क्या बतलायें। राम नारायण बाबू मेरे भाई लगते हैं। कहने को तो वह वकील है, पर पास में कुछ नहीं। वह बेचारे अपनी एकमात्र पुत्री के लिए भी कुछ न जोड़ पाए, इसका कारण मैं हूं। वे मुझे आरम्भ से ही पढ़ाई के लिए रुपये भेजते रहे और मुझे रुपया बचाने का समय नहीं मिलता है। उन्होंने मेरा विवाह किया। और विवाह भी मेरे कारण ऐसा हुआ कि लेन-देन कुछ भी नहीं। परिणाम यह हुआ कि दहेज में छिपा रहे हैं पैसा, रुपये और गहने दोनों पर।

मामले में मेरी सहायता करिये। आप नई रोशनी के युवक हैं, सब समझते हैं। हमारे घर की लाज आपके हाथ में है। लड़की का भविष्य आप पर निर्भर है।

—भरोसा रखिये, जो कुछ होगा आपके और हमारे लिए अच्छा ही होगा। राजेन्द्र ने कहा शम्भू लौट चला। उसकी निराशा उसके पगों को जकड़ रही थी और वह उनको बढ़ाने का प्रयत्न कर रहा था।

राजेन्द्र वहां से चला आया। परन्तु उसके हृदय में एक बवण्डर उठ रहा था। क्या यह मनुष्य का जीवन है। निर्धनता ने मनुष्य को जर्जर और नग्न बना दिया है। वह उसको ढकने का प्रयास करता है परन्तु उसमें भी असमर्थ रह जाता है। बाहर की सज-धज को देखकर कौन कह सकता था कि यह सब दूसरों के पैसा पर है। सब यह समझते होंगे कि वकील साहब अपनी इकलौती बेटी का विवाह कितनी धूम-धाम से कर रहे है। पर किसी को क्या मालूम था कि घर फूक कर तमाशा देखा जा रहा है। लोग बाह्य चटक-मटक को देखते है आन्तरिक को नहीं। वह चाहे कितनी श्रद्धा व प्रेम से एक बार अपनी बेटी को जो कुछ देकर विदा करे, पर लोग तो उसको देख नहीं पायेंगे, क्योंकि उनके पास ऐसी आंखें कहा हैं? यही कहेंगे कि वकील साहब कंजूस हैं, एक बेटी है फिर भी कुछ नहीं दिया।

बरात लौट जायेगी! क्या होगा? यही न कि वकील साहब की नग्नता जो आज उसके परिवार तक ही सीमित है, उसका प्रदर्शन सारे समाज में हो जायेगा। लोग अगुली उठा कर ताली बजा कर, ठट्ठे मार कर यह कह कर हसेंगे कि देखो भाई दूसरों के पैसे पर चला था लड़की का विवाह करने। उनका आदर धूल में मिलेगा, पर उनकी पुत्री का क्या होगा। यदि कल वह कहीं दूसरे के पास विवाह का प्रस्ताव करने जायेंगे, तो लोग यही कहेंगे कि जब तुमको कुछ देना ही होता तो बरात घर से क्यों लौटती। गली-गली सड़क-सड़क पर उनको ताने सुनने को मिलेंगे। शम्भू सच कहता था, वह आजीवन कुंवारी रहेगी। इसका दोषी वह ही ठहराया जायेगा। यह समाज सब कुछ देखता है। उसकी आत्मा उसको धिक्कारेगी। यदि लोग अन्धे हो रहे है तो वह भी आंख मोड़ ले। जब

बरात आगरे पहुँचेगी तो गली में रहने वालों की आँखें उठी की उ
रह जायेंगी। बहू को देखने वाले प्यासे नयनों में क्या मिलेगा। उनके मु
से यही निकलेगा कि धन के पीछे बरात लौटा लाये। उसके पिता
ऊपर ताने पड़ेंगे। सब उसके परिवार के लोगों को क्या कहेंगे? नहीं
नहीं, वह यह न होने देगा। यह सामाजिक अन्याय है।

पर क्या, नीरा? चाचा ने उससे कहा कि समय का सदुपयोग करो और लौट चलो, भगवान की यही इच्छा है। यही सौभाग्य है नीरा को पाने का। उसका सिर चकरा गया। उसकी आखो के सामने अंधेरा छा गया। आज दो में से एक को बचाने का प्रश्न उसके सामने था। एक ओर उसका प्रेम था, दूसरी ओर एक सामाजिक कर्तव्य है क्या करे। वह पत्थर का स्तम्भ पकड़ कर खड़ा हो गया। सारा विश्व उसे घूमता हुआ-सा लग रहा था। क्षण भर के लिए उसे ऐसा लगा कि उस अंधकार में नीरा की प्रतिमा दीप के समान प्रज्वलित हुई, उससे मानो वह यह कह रही हो—प्रेम से ऊचा कर्तव्य है, प्रेम ही त्याग है। 'नही, नही' उसके मुख से निकल पड़ा और उसने अपना सिर उस स्तम्भ पर रख दिया। यह वाक्य उसके मस्तिष्क में घूम रहा था 'प्रेम से ऊंचा कर्तव्य है, प्रेम ही त्याग है।' परन्तु उसके मुख से निकल रहा था 'नही, नही'।

हरि बाबू उधर से निकले। उन्होंने राजेन्द्र को देख कर कहा—

—क्या सोच रहा है रज्जू?

—कुछ नही, बाबूजी, शम्भू जी क्या कह रहे थे कुछ सोचा इसके बारे में?

प्रायः यह देखा जाता है कि जो सात्विक वृत्ति के लोग होते हैं वे तामसिक कार्य उसी समय तक करते है, जब तक कि तामसिक वृत्ति का क्षणिक आवरण उन पर चढा रहता है। उस समय भी सात्विक वृत्ति हिचकती है। परन्तु एक स्थान पर पहुंचने पर वह वृत्ति नष्ट हो जाती है
...र पुनः सात्विक वृत्ति के प्रभाव में वह व्यक्ति आ जाता है। हरि बाबू
...ी भी यही दशा थी। यद्यपि वह यह कार्य कर तो रहे थे, परन्तु अन्तरतम
... विरोध कर रहा था। फिर भी वे उसको भुलावा दे रहे थे। परन्तु
... के वार्तालाप ने उनकी सात्विक वृत्ति को जाग्रत कर दिया वह अपने

आप को कोस रहे थे कि यह कितना बड़ा पाप कर रहे हैं। कल लोग सुनने तो यही कहेंगे कि हरि बाबू जो इतना भक्त बनता था, दूसरों को ज्ञान और सत्य मार्ग के अनुकरण की शिक्षा देता था, उसने एक बाप का घर बिकवा कर, उसके नन्हे-नन्हे बच्चों को बे-घर करा दिया। एक अबोध बालिका की मांग का सिन्दूर छीन लिया, वह इंसान नहीं शैतान है। उसकी वृत्ति इंसान की और कर्म शैतान के हैं। वह समाज का विश्वासघाती जीव है। हरि बाबू को अपने पांव के नीचे से धरती खिसकती सी प्रतीत हुई। परन्तु फिर भी वह क्या करते। बेटी के सुहाग का प्रश्न था? उन्होंने इसके ही आधार पर बेटी के विवाह की भित्ति उठाई थी। अब इसकी गिरती दीवारों को कैसे सम्भाला जायेगा। उन्होंने विचारा कि जगत में अन्य लोग भी तो हैं जो कि अनेक प्रकार के अनुचित कार्य करके, अन्याय करके विकृत रूप से धनोपार्जन करते हैं। दूसरे के गले पर छुरी चलाते हैं और उनको तनिक-सी भी हिचक नहीं होती, और यह केवल तीन हजार रुपये के लिए इतने डावांडोल हो रहे हैं। यदि किसी जमींदार का किसान होता अथवा महाजन का ऋणी होता तो अब तक क्या वह इस प्रकार अपने अधिकार से मुंह मोड़ लेता? फिर उनमें किस चीज की कमी अथवा क्या बात है जो उनको ऐसा करने से रोक रही है। बेटे के कथन से वह अपने को सम्भाल कर बोले — क्यों क्या हुआ यह अधिकार है, हम लेंगे, उनके कथन से यह स्पष्ट था कि वह जो कुछ कह रहे केवल जिह्वा से, हृदय से नहीं।

—मेरी राय से तो आप न लीजिये!

—रज्जू क्या कहता है? पागल हो गया है। हम रुपये न लें तो मुन्नी का क्या होगा? उसका विवाह तेरे से दस दिन बाद है। उसको क्या दूंगा?—उनके स्वर वीणा के तार के समान कांप रहे थे।

—परन्तु एक घर गिराकर अपना घर बनाना भी तो ठीक नहीं।

—मुझे शिक्षा देता है।—उन्होंने क्रोधित स्वर से कहा।

—पागल कहीं का।—वह चले गये अधिक देर न ठहर सके।

फेरे के समय राजेन्द्र की ही नहीं, दोनों ओर के व्यक्तियों की दृष्टि इस ओर लगी थी कि बरात लौटती है या क्या होता है! शम्भू का

अनशन जारी था कि यदि बरात लौटी तो आत्महत्या कर लेगा। राम नारायण जी शम्भू के आग्रह से पार न पा सके। लड़की वालों के मुख श्वेत व रक्तहीन हो रहे थे। उदासी बढ़ रही थी। बाजे बज रहे थे, परन्तु किसी के मुख पर हंसी अथवा प्रसन्नता की झलक नहीं थी। रस्म होती जा रही थी। हरि बाबू सोच रहे थे कि कदाचित राम नारायण जी झुक जायें और राम नारायण जी यह सोच रहे थे कि कदाचित हरि बाबू की बुद्धि-प्रखरता इस समय काम दे जाये। क्योंकि शम्भू रुपये की थैली आवेग में आकर लाला बैजनाथ के यहां पटक आया था और मकान का गिरवी पत्र भी ले आया था। इस कारण रुपये देने का प्रश्न आता ही न था। राजेन्द्र अपने पिता को देखता फिर दीनता के भाव मुख पर लिये राम नारायण बाबू और शम्भू को। पिता उससे आंख मिलाते ही झुका लेते। श्री बाबू, श्याम मामा सब उत्सुकता से देख रहे थे कि क्या होने वाला है। गांठ बांधने से पूर्व राम नारायण जी ने दीनता से हरि बाबू की ओर देखा। पंडित कुछ क्षण के लिए रुक गया, कदाचित पहले से ही राम नारायण बाबू ने कह दिया होगा। हरि बाबू मौन थे। पांच घड़ी के लिए दोनों ओर सन्नाटा छा गया। कुछ लोग काना-फूसी कर रहे थे। हरि बाबू ने शान्ति भंग करते हुए कहा—

—क्यों पंडित जी, रुक क्यों गये? ऐसी गांठ बांधना कि जीवन भर न खुले।

—'हरि बाबू', आश्चर्य से राम नारायण जी के मुख से निकल गया। वह अपनी हृदय की भावना न सभाल सके और हरि बाबू ने उन्हें सीने से लगा लिया। उन्होंने धीरे से राम नारायण बाबू से कहा—

—मनुष्य की निर्धनता उसे क्या कार्य नहीं करा सकती है। पर यह कैसे हो सकता है कि एक निर्धन दूसरे को लूट कर अपना घर भरे। भगवान ने दोनों को एक-सा बनाया है।

राम नारायण जी कुछ न कह सके। उनका गला रुंध गया। अधर कुछ कहने के लिए अवश्य हिले परन्तु स्वर न निकले ध्वनि न हुई। हरि बाबू के 'पंडित' के कथन से चारों ओर सनसनी फैल गई। लड़की वालों की ओर एक बार फिर प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। शम्भू दौड़ कर हरि बाबू

के पाव मे निपट गया। परन्तु यह बात श्यामू मामा और श्री गोपाल जी को अखरी। इनके दोनों के अपने अलग-अलग कारण थे।

तेईस

मोमबत्ती के मन्द प्रकाश मे दीवार की ईंटें प्लास्टर तोड कर नये मेहमान को आंखे फाड़-फाड़ कर देख रही थी। ऊपर मकड़ियों के जाले मे भी एक उथल-पुथल मची थी कि नया व्यक्ति कौन है। छत की कड़िया अवगुंठन मे से झांकने के लिए मानो झुकी जा रही हों। क्यो न हो, आज उसकी सुहागरात थी। जीवन की प्रथम व मधुर रात्रि। कितनी सुन्दर कल्पना थी। उसने अनेक उपन्यासो मे इसका विवरण पढ़ रखा था कि कमरा कैसा सजा होता है मानो नई दुल्हन स्वयं कमरा ही हो। लम्बा-चौडा-सा पलग अनेक प्रकार के इत्रों के सुगन्ध और रंग-बिरंगी झड़िया, पर यहां क्या था। कुछ भी नही। वह मौन एक गठरी-सी बनी, एक चौड़ी-सी खाट पर बैठी। छोटा-सा कमरा, जिसमें आलोक कम और तिमिर का कालापन अधिक था। उसके पलक नीचे झुके थे परन्तु मन उत्सुकता से द्वार की ओर लगा हुआ था।

एक खट का शब्द हुआ, उसका हृदय धड़का, भय और आनन्द की मिश्रित लहर से वह सिहर उठी। उसने पलकें उठा कर अवगुंठन की ओट से देखा। वह सामने खड़ा किसी विचारधारा मे विलीन हो रहा है। उसकी सुख और आनन्द की कल्पना सजग हो गई। आज वह अपने जीवन-साथी से प्रथम बार मिल रही थी। उसे संशय था कि उसका जीवन-साथी कैसा है? उसकी उत्सुकता अनेक प्रकार के आचार-विचार देखने और प्रेम-बन्धन मे बधने के लिए बढ़ रही थी।

राजेन्द्र किसी गहरे विचार मे डूबा था। यदि आज नीरा उसके स्थान पर होती तो उसको कितनी प्रसन्नता होती। कितने आनन्द से वह

के पाव मे निपट गया। परन्तु यह बात श्यामू मामा और श्री गोपाल जी को अखरी। उनके दोनो के अपने अलग-अलग कारण थे।

तेईस

मोमबत्ती के मन्द प्रकाश मे दीवार की टूटे प्लास्टर तोड कर नये मेहमान को आखे फाड-फाड कर देख रही थी। ऊपर मकडियो के जाले मे भी एक उथल-पुथल मची थी कि नया व्यक्ति कौन है। छत की कडिया अवगुठन मे से झाकने के लिए मानो झुकी जा रही हों। क्यो न हो, आज उसकी सुहागरात थी। जीवन की प्रथम व मधुर रात्रि। कितनी सुन्दर कल्पना थी। उसने अनेक उपन्यासो मे इसका विवरण पढ रखा था कि कमरा कैसा सजा होता है मानो नई दुल्हन स्वय कमरा ही हो। लम्बा-चौड़ा-सा पलग अनेक प्रकार के इत्रो के सुगन्ध और रग-बिरगी झडिया, पर यहां क्या था। कुछ भी नही। वह मौन एक गठरी-सी बनी, एक चौड़ी-सी खाट पर बैठी। छोटा-सा कमरा, जिसमे आलोक कम और तिमिर का कालापन अधिक था। उसके पलक नीचे झुके थे परन्तु मन उत्सुकता से द्वार की ओर लगा हुआ था।

एक खट का शब्द हुआ, उसका हृदय धड़का, भय और आनन्द की मिश्रित लहर मे वह सिहर उठी। उसने पलकें उठा कर अवगुठन की ओट से देखा। वह सामने खडा किसी विचारधारा मे विलीन हो रहा है। उसकी सुख और आनन्द की कल्पना सजग हो गई। आज वह अपने जीवन-साथी से प्रथम बार मिल रही थी। उसे सशय था कि उसका जीवन-साथी कैसा है ? उसकी उत्सुकता अनेक प्रकार के आचार-विचार देखने और प्रेम-बन्धन मे

कि आज नीरा उसके
कितने आनन्द से वह

पग गिनता आगे बढ़ता और अवगुंठन उठाकर कहता, पा लिया नीरा, मैंने तुमको पा लिया। उसकी नीरा भी उससे कहती कि राज मैं तुम्हारी हो गई। फिर वह कहता अब हम समाज की आंखों मे एक हैं। पर कौन है आज? कैसी है? उसके हृदय मे कितना और कैसा प्रेम है? वह एक नारी से जिसे उसने पहले कभी देखा नही, जिसके बारे मे पहले जाना नही, वह कैसे प्रेम कर सकेगा? उसके साथ कैसे अपना जीवन काट सकेगा? क्या उसके साथ वह सुख का अनुभव पा सकेगा? अन्धकार मे आलोक ढूंढना होगा। यह सब कुछ सोच रहा था।

उसके पग डगमगा उठे। उसका हृदय नीरा, नीरा कहकर जोर से पुकार उठा। परन्तु अधर हिमगिरि की उत्तुंग शिखर के समान दृढ और मौन रहे। अन्दर ज्वालामुखी फूट पडा। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि वह गिर जायेगा परन्तु उसका ध्यान, उसके विचार इस वार्तालाप से टूट गये—

—क्या दिया इन लोगों ने खाक?' गंगा कह रही थी।

—अरे धीरे बोलो बराबर के कमरे मे बहू और रज्जू है। आज ही और आते ही आई यह सुनकर क्या कहेगी।

—कहेगी जो कह ले, तीन हजार क्यों नही दिये, विवाह करने चले थे तो पहले अपनी गांठ नहीं देखी। महाजन से उधार ले लेते उसका खाता तो नही बन्द हो गया था। यदि नही लेना था तो शादी क्यों की, क्या हमको दूसरे घर की लडकी नहीं मिलती।

—तुम्हारे भी लडकी है, तनिक हृदय से काम लो।

—अरे, हृदय से काम क्या लू। यदि मैं तुम्हारी जगह पर होती तो नाकों चने चबा देती। बरात लेकर लौट पड़ती। बच्चू को गरज पडती तो अपने आप तीन हजार पाव पर रख देते।

—जब नही दे सकते तो फिर मैं क्या करता?—हरि बाबू ने धीरे से कहा।

—अब बोलो क्या करोगे? मुन्नी का विवाह कैसे करोगे? क्या दोगे? अरे! मकान भी तो अपना नहीं है, जो गिरवी रख कर रुपया ले लोगे। तुम्हारे सीधेपन के कारण तो यह दिन आये हैं।

राजेन्द्र इन बातों को सुनकर कांप उठा। नई कली जो आज विकास के स्वप्न में मग्न है, उसके ऊपर इतना महान आघात! अपने मां-बाप की दुलारी बेटी, जो इतने लाड़-प्यार से पाली गई उसका आते-आते ही विष बुझे बाणों से स्वागत किया जाये। इसका इस घर में है कौन। यदि वह भी इसको नीरा की स्मृति में विलीन कर दे तो इसको अवलम्ब देने वाला कौन होगा। उसके भाग्य-चक्र को उलटने में उसका क्या दोष। वह अबोध है, निर्दोष है. इसके ऊपर क्यों अत्याचार किया जाये? इसे संसार की जलती लपटों में क्यों भस्म किया जाये।

फिर क्या किया जाये? राजेन्द्र ने एक पग उसकी ओर बढ़ाया। उसने सोचा मुझे इससे प्रेम करना होगा और अपने प्रेम को ऐसे कोने में रख कर जिससे कि इसे ज्ञान न हो जाये कि मैं किस ज्वाला में जल रहा हूं। मैं स्वयं जलूंगा पर इस पर आंच न आने दूंगा। वह एक-दो पग उसकी ओर बढ़ा, उसने धीमे स्वर में कहा—

—क्या नाम है तुम्हारा? उसके स्वर भारी हो रहे थे।

...उत्तर मौन था।

वह उसके समीप पहुंच गया और वह कुछ सिमट-सी गई। उसने अपने कर से उसका अवगुण्ठन हटा दिया। उसके सजल नयनों ने उसके हृदय पर गहरा आघात किया और उसने कहा—

—आज प्रथम रात्रि में ही तुम्हारा स्वागत हुआ इन आंसुओं से। आभा, मां की बात का तुम बुरा न मानना, वह ऊपर से तीखी हैं, परन्तु हृदय से नहीं।

निर्झर के आगे से जैसे किसी ने अटका हुआ पत्थर हटा दिया हो और वो बह पड़ा।

—आभा, क्या ये सुन्दर नयन रोने के लिए हैं? क्या यह चांद-सा मुख मलीन होने के लिए है?—यह कह कर राजेन्द्र उसके पास बैठ गया।

—आभा!—राजेन्द्र ने धीरे से कहा। उसने जब पलकें उठाकर देखा तो उसके नयन डबडबाये थे।

—आप...क्यों रोते हैं। उसने अपना रूमाल उसके आंसू पोंछने के लिए आगे बढ़ा दिया।

—आभा।

और आभा राजेन्द्र के बाहुपाश की बन्दिनी थी। राजेन्द्र कह र था—

—मेरे आंसुओं की ओर न देखो आभा, मैं तुमको प्रेम देना चाहता हूं और मैं पूरी कोशिश करूंगा। मेरे आंसुओं को मेरी दुर्बलता न समझना, आभा। राजेन्द्र का गला रुंधा जा रहा था। वह कह रहा था—पता नहीं मैं तुमसे प्रेम कर भी सकूंगा कि नहीं, पर मैं सब-कुछ अपना तुमको देने का प्रयास करूंगा। आज प्रथम रात्रि है, प्रत्येक पति अपनी पत्नी को कोई स्मरणीय वस्तु भेंट करता है और मैं तुमको अपने आंसू उपहार दे रहा हूं?

—यह आप क्या कहते हैं?

—हां आभा, इस योग्य कहां जो तुमको उपहार दूं। जिसने स्वप्न में लक्ष्मी नहीं देखी, वह गृहलक्ष्मी के स्वागत में क्या दे सकता है। पर तुमको प्रसन्न रखने के लिए क्या नहीं करूंगा।—राजेन्द्र मुख से कह रहा था।

उस अंधकारमय कोठरी में आभा को एक किरण दिखाई दी। वह अन्दर से प्रफुल्लित हो रही थी कि उसके पति उससे कितना प्रेम करते हैं। उनके आंसू देख उसकी आंखों में भी आंसू आ गये। कितना कोमल है उनका हृदय। उनको कोई लेखक अथवा कवि होना चाहिए था। उसका अंग-अंग खिल रहा था।

राजेन्द्र कह रहा था—आभा, तुम हृदय की आभा हो, तुम यदि दुखी होगी तो मेरा हृदय भी दुखी होगा और यदि तुम सुखी होगी तो मेरा हृ भी सुखी होगा। तुम हंसोगी तो मेरा हृदय हंसेगा और तुम रोओगी त मेरा हृदय रोयेगा।—आभा उसके बाहुपाश में ऐसा आनंद अनुभव कर रही थी, जिसकी कल्पना उसे कभी भी न थी। यह उसका प्रथम अनुभव था। और राजेन्द्र की आत्मा रो रही थी। उसकी आंख में आंसू किस कारण थे? परन्तु वह शब्दजाल में आभा को फांस रहा था। और स्वयं वेदना सागर में विलीन होता जा रहा था और दूसरे को सुख के स्वर्ग लोक में पहुंचाता जा रहा था।

———

चौवीस

ा ने स्वय ही अपने हाथों से अपने प्यार का गला घोंटा था। उसने विष
प्याला स्वय ही उठा कर पिया था। यद्यपि उसके लिए सब कुछ असह्य
फिर वह नारी जाति की थी इस कारण सब सहना और कुछ न कहना
तनी थी। वह समय निकाल कर आभा से मिली। आभा उस समय
ान्त मे बैठी थी।

नीरा ने एक दृष्टि भरकर आभा की ओर देखा, आन्तरिक आकांक्षा
प्रफुल्लित एक नव लता के समान और मुग्ध नव विकसित कली के
ान था। उसके मुख का भोलापन यह बता रहा था कि उसने विश्व में
छ नही देखा है, कुछ नही जाना, नितान्त अबोध है। नीरा उसके भोले
व को बड़ी देर तक देखती रही। आभा भी उसके मुख को पलक उठाकर
ती पर अपने अपलक नयनो से देखते हुए नीरा को देख वह पलक झुका
ी। इस प्रकार एक आखमिचौनी-सी चल रही थी। राजेन्द्र, नीरा का
रिचय आभा से करा रहा कि यह नीरा है, मेरे कार्यालय मे ही काम
ती है। तुमसे मिलने को बड़ी इच्छुक थी, इसीलिए दिल्ली से आई है।

—क्या नाम है तुम्हारा? नीरा ने पूछा।

—आभा।

—सच! कितना सुन्दर नाम है वैसी हो भी। वास्तव मे सुन्दरता
आभा हो, सौन्दर्य देखना हो तो कोई तुमको देख ले। नीरा ने कहा।
ह मौन थी।

—तुमको घर अच्छा लगा? वह अच्छे लगे? तुमको वह प्रेम करते
?

आभा मौन थी। उसका अंग-अग खिल रहा था। उसने कभी प्रेम
पाया था। वह प्रेम की मात्रा और प्रेम के रूप को क्या जाने?

—अरे तुम तो बोलती नही! अच्छा बताओ दिल्ली कब आओगी?

—यह वह ही जानें।

—तुम दिल्ली आ जाओ तो फिर बड़े अच्छे दिन कटेंगे, एक साथी

—आभा !

और आभा राजेन्द्र के बाहुपाश की बन्दिनी थी। राजेन्द्र कह रहा था—

—मेरे आंसुओं की ओर न देखो आभा, मैं तुमको प्रेम देना चाहता हूं और मैं पूरी कोशिश करूंगा। मेरे आंसुओं को मेरी दुर्बलता न समझना, आभा। राजेन्द्र का गला रुंधा जा रहा था। वह कह रहा था—पता नहीं मैं तुमसे प्रेम कर भी सकूंगा कि नहीं, पर मैं सब-कुछ अपना तुमको देने का प्रयास करूंगा। आज प्रथम रात्रि है, प्रत्येक पति अपनी पत्नी को कोई स्मरणीय वस्तु भेंट करता है और मैं तुमको अपने आंसू उपहार दे रहा हूं ?

—यह आप क्या कहते हैं ?

—हां आभा, इस योग्य कहां जो तुमको उपहार दूं। जिसने स्वप्न में लक्ष्मी नहीं देखी, वह गृहलक्ष्मी के स्वागत में क्या दे सकता है। पर मैं तुमको प्रसन्न रखने के लिए क्या नहीं करूंगा।—राजेन्द्र मुख से कह रहा था।

उस अंधकारमय कोठरी में आभा को एक किरण दिखाई दी। वह अंदर से प्रफुल्लित हो रही थी कि उसके पति उससे कितना प्रेम करते हैं। उनके आंसू देख उसकी आंखों में भी आंसू आ गये। कितना कोमल है उनका हृदय। उनको कोई लेखक अथवा कवि होना चाहिए था। उसका अंग-अंग खिल रहा था।

राजेन्द्र कह रहा था—आभा, तुम हृदय की आभा हो, तुम यदि दुखी होगी तो मेरा हृदय भी दुखी होगा और यदि तुम सुखी होगी तो मेरा हृदय भी सुखी होगा। तुम हंसोगी तो मेरा हृदय हंसेगा और तुम रोओगी तो मेरा हृदय रोएगा।—आभा उसके बाहुपाश में ऐसा आनंद अनुभव कर रही थी, जिसकी कल्पना उसे कभी-भी न थी। वह उसका प्रथम अनुभव था। और राजेन्द्र की आंखें रो रही थीं। उसकी आंख में आंसू किस कारण थे? परन्तु वह अन्धकार में आभा को [illegible] रहा था। और स्वयं वेदना सागर में विलीन होता जा रहा था और ऊपर वह सुख के स्वर्ग लोक में पहुंचता जा रहा था।

चौबीस

नीरा ने स्वयं ही अपने हाथों से अपने प्यार का गला घोंटा था। उसने विष का प्याला स्वयं ही उठा कर पिया था। यद्यपि उसके लिए सब कुछ असह्य था, फिर वह नारी जाति की थी इस कारण सब सहना और कुछ न कहना जानती थी। वह समय निकाल कर आभा से मिली। आभा उस समय एकान्त में बैठी थी।

नीरा ने एक दृष्टि भरकर आभा की ओर देखा, आन्तरिक आकांक्षा से प्रफुल्लित एक नव लता के समान और मुग्ध नव विकसित कली के समान था। उसके मुख का भोलापन यह बता रहा था कि उसने विश्व में कुछ नहीं देखा है, कुछ नहीं जाना, नितान्त अबोध है। नीरा उसके भोले मुख को बड़ी देर तक देखती रही। आभा भी उसके मुख को पलक उठाकर देखती पर अपने अपलक नयनों में देखते हुए नीरा को देख वह पलक झुका लेती। इस प्रकार एक आखमिचौनी-सी चल रही थी। राजेन्द्र, नीरा का परिचय आभा से कराया गया कि यह नीरा है, मेरे कार्यालय में ही काम करती है। तुमसे मिलने को बड़ी इच्छुक थी, इसीलिए दिल्ली से आई है।

—क्या नाम है तुम्हारा ? नीरा ने पूछा।

—आभा।

—सच ! कितना सुन्दर नाम है वैसी हो भी। वास्तव में सुन्दरता की आभा हो, सौन्दर्य देखना हो तो कोई तुमको देख ले। नीरा ने कहा। वह मौन थी।

—तुमको घर अच्छा लगा ? वह अच्छे लगे ? तुमको वह प्रेम करते है ?

आभा मौन थी। उसका अंग-अंग खिल रहा था। उसने कभी प्रेम न पाया था। वह प्रेम की मात्रा और प्रेम के रूप को क्या जाने ?

—अरे तुम तो बोलती नहीं ! अच्छा बताओ दिल्ली कब आओगी

—यह वह ही जानें।

—तुम दिल्ली आ जाओ तो फिर बड़े अच्छे दिन कटेंगे, एक साथ

मिल जायेगा।

—आप वहीं रहती हैं ?

—नहीं, यहां मेरी मां हैं और वहां मामी-मामा के पास रहती हूं।

नीरा कुछ देर बैठी रही और बात करती रही। नीरा को उसका भोलापन बहुत पसन्द आया और आभा को उसकी स्पष्टता और उसका वह प्रयत्न जो क्षण भर में उसके हृदय के समीप आने का प्रयत्न कर रहा था। उसे दो दिन आये हो गये थे। मुन्नी के अतिरिक्त वह ही एक ऐसी नारी मिली जिसने उससे इतने प्रेम से बातें की। जिस प्रकार होली पर किसी गली में से गुजरने पर राही पर रंग और कीचड़ दोनों की बौछार होती है, उसी प्रकार आभा के ऊपर भी। परन्तु कीचड़ उछालने वाले अधिक थे। गंगा हाथ नचा-नचाकर उसकी खुलेआम बुराई करतीं कि हमने तो कंगालों के घर विवाह किया। नाम बड़े और दर्शन छोटे। ऊंची दुकान फीके पकवान इत्यादि अनेक प्रकार के ताने उसको सबके सामने मिलते, परन्तु वह अपनी दृष्टि नीचे गड़ाये रहती, कुछ न बोलती। बोल भी क्या सकती थी। ऐसे अवसर पर जो व्यक्ति तनिक भी सहानुभूति तथा स्नेह दिखाता है वह उस व्यक्ति के अति निकट आ जाता है। इसी कारण नीरा ने आभा के हृदय में एक स्थान ले लिया था।

वह उसके हृदय में ऐसा घर कर लेता है कि उसका वियोग एक पल के लिए भी उसे खटकने लगता है। नीरा ने कहा।

—मैं इतना कुछ नहीं जानती। आभा ने धीरे से कहा।

—आपका कथन मुझे बड़ा अच्छा लग रहा है, आप कहती चलिये।

नीरा भाव सागर की चपल तरंगों के तुरग पर आरूढ़ थी। वह कह रही थी—

—तुम कहोगी नारी का कार्य क्या यह है कि पुरुष की भक्ति करे, उसका स्थान तो पुरुष के बराबर है। यह ठीक है। नारी का स्थान पुरुष के बराबर है पर इस अधिकार को मांगने का उसको कोई अधिकार नहीं। यह तो पुरुष की इच्छा पर है कि चाहे वह उसे बराबर का स्थान दे या नहीं। यदि उसकी सेवा, भक्ति सच्ची है तो कोई कारण नहीं कि वह उसे समान स्थान न दे। आज बहुत से घर पति-पत्नी की कलह से नरक बने हुए हैं। इसका मुख्य कारण यही है कि स्त्री समान अधिकार मांगना चाहती है। अपने कर्तव्य से गिर जाती है, पुरुष उसको कर्तव्य से गिरा देखकर समान अधिकार देते समय हिचकते हैं। नीरा कुछ देर मौन रही।

—चुप क्यों हो गईं? आभा ने कहा।

—नारी का सौन्दर्य इसी में है आभा कि वह नारी के क्षेत्र में रहे। इस संसार में बहुत से कार्य ऐसे हैं जो पुरुष के लिए हैं और उन्हें नारी का करना शोभा नहीं देता है, और साथ-साथ बहुत से कार्य ऐसे भी हैं जिनको पुरुष का करना अच्छा नहीं लगता, वे स्त्री के करने योग्य हैं। स्त्री-जाति का सौन्दर्य इसी में है कि वह अपने कर्तव्य को पूर्ण रूप से पूरा करे। यह पति के प्रेम पर विजय पाने की कुंजी है। तुम यह जानती हो कि मनुष्य अपनी पत्नी को छोड़कर कभी-कभी क्यों दूसरी स्त्रियों के पास जाता है? नीरा ने कहा।

—फिर ? आभा ने कहा।

—आभा, नारी इन्द्रजाल है। वह अपने इस जाल से और सौन्दर्य से किसको नहीं मोह सकती ? स्वर्गीय अप्सराएं जिन्होंने ऋषियों के आसन डगमगा दिये वे स्त्री जाति की ही तो थी। स्त्री के कर में पुरुष का प्रेम और अपना सौभाग्य होता है। वह अपने कर्मों से अपने घर को स्वर्ग बना सकती है और अपने कर्मों से नरक भी।

—आप सच कहती हैं।

इतने में पीछे से मुन्नू आ गया और बोला—

—भाभी, कल रात कहां थी ? भैया के कमरे में सोई थी ?

शिशु के भोले प्रश्न से आभा लजा गई और नीरा मुस्करा पड़ी। नीरा ने नन्हे मुन्नू को अपने हृदय से लगा लिया। इतने में मुन्नी भी आ गई। मुन्नी को देखकर नीरा बोली—

—आभा, यह मेरी भाभी बनने वाली है।

मुन्नी लजाकर चली गई। नीरा भी अधिक देर न बैठ सकी। उसकी दशा उस व्यक्ति के समान थी जिसके गोली लग गई हो और चलता जा रहा हो और रक्त के अधिक प्रवाह के कारण एक स्थान पर आकर वह ऐसा अनुभव करता हो कि आगे वह एक पग भी न चल पावेगा। नीरा भी ऐसा अनुभव कर रही थी कि अब अधिक देर उससे न बैठा जावेगा। वह उठकर चलने लगी, आभा ने कहा—

—फिर आइयेगा।

—मैं आज शाम की गाड़ी से दिल्ली जा रही हूं। राज भी कदाचित उसी समय जावेगा।

—हां ? नन्हे मुन्नू ने कहा।

—आपसे मिलने की सदा इच्छा रहेगी। आभा ने कहा।

—आपके भावुक विचार मेरे लिए एक दिशा के रूप में रहेंगे जिनको मैं कभी न भूल सकूंगी।

नीरा चली गई। आभा उसके विचारों से उलझ रही थी। उसे उसके विचार सुदृढ़ और अपनाने योग्य में प्रतीत हो रहे थे। यदि वह कमजोर हृदय के हैं और सेवा-भक्ति से ही हृदय पर विजय प्राप्त की जा सकती

है, तब वह किसी प्रकार से भी उनको दुःख के अन्धे नाले मे गिरने न देगी। उनका हृदय वास्तव मे कितना दुर्बल है। उस दिन उसकी आखों मे ही आसू देखकर रोने लगे। सच मे उनको बचपन से प्रेम मिला ही कहां होगा? मां उनकी जैसी है यह समझने मे उसको अधिक देर लगी ही नहीं। भावी जीवन की कल्पनाओं के स्वप्न मे हिलोरे लेते उसे आनन्द आ रहा था।

पच्चीस

विवाह के पश्चात् राजेन्द्र कुछ गम्भीर रहने लगा था। अपने काम से काम रखता था, न किसी से बोलता और न किसी से कुछ कहता। जो सदा दूसरों से हंसकर बोला करता वह अब चुपचाप से ही लोगों के पास से निकल जाता। लोग समझते कि विवाह के पश्चात् इसको गर्व हो गया है, परन्तु किसी ने उसके हृदय को समझने का प्रयत्न न किया। दिन-दिन भर वह पागलों के समान कार्ड बांटता, दुकानों पर जाता। दुकान वाले उसको लेमन, चाय आदि पिलाते वह भी नहीं लेता। यहा तक कि उसने उनसे 'मथली' लेना भी बन्द कर दिया। दुकान वाले इस परिवर्तन को आश्चर्य की दृष्टि से देखा करते थे। वह फिर से पहले के समान साधारण कपड़ो मे रहा करता। उसे अब चटक-मटक अधिक पसन्द न थी।

सध्या के समय वह अपने कार्ड साइकिल की आगे की टोकरी में डाले चला आ रहा था। स्टैंड के पास उसको कपूर और बैजल मिल गये। उसको देखकर बोले—

—अरे राजेन्द्र, शादी के बाद तुमको क्या हो गया? यार बड़ा गम्भीर रहता है? क्या बात है?—कपूर ने कहा।

—कुछ भी तो नहीं।—रूखी हसी हसते राजेन्द्र ने कहा।

—नहीं फिर भी? अच्छा, चलता है आज कोई सिनेमा आदि देख

आयें ?—बैंजल ने कहा।

—मैंने सुना है कि तुमने मंथली लेना तक बन्द कर दिया है। एक केस पकड़ा, पांच सौ दे रहा था वह भी छोड़ दिया।

—हां।

—क्यों पागल हो गये हो राजेन्द्र, यही समय तो है चार पैसे जोड़कर रख लो। नई शादी हुई है यह पैसे आगे चलकर काम आयेंगे। फिर इसका भी कोई ठीक नहीं कि नौकरी कब छूट जाये।—कपूर ने कहा।

बैंजल ने सिगरेट का पैकेट निकालते हुए कहा—पियो।

—नहीं, भाई, मैं नहीं पीता।

—क्यों, छोड़ दी ?—बैंजल ने पूछा।

—हां।

—सुनते हैं राशनिंग टूटने वाला है। यार अपना क्या होगा। जब से यह समाचार सुना है भई रोटी गले से नहीं उतरती।—कपूर ने कहा।

—किसी मिनिस्टर का दामाद बन जाना, नौकरी अच्छी मिल जायेगी।—बैंजल ने कहा।

—हमको कौन साला अपना दामाद बनायेगा। यहां भई कुंवारे पैदा हुए थे और कुंवारे ही स्वर्ग को जायेंगे। कपूर ने कहा।

—फिर क्या प्रोग्राम है तेरा राजेन्द्र ?

—कुछ नहीं घर जा रहा हूं, फिर वहां से लाइब्रेरी।

—तुम भी भई ऊंचे हो। अच्छा भई चलते हैं। कभी मिल तो लिया करो, ऐसी क्या बात है ?

वे दोनों चले गये। राजेन्द्र ने अपनी साइकिल आगे बढ़ा दी। स्वीज होटल के पास नीरा उसे जाती हुई दिखाई दी। उसने साइकिल रोक ली।

—कहो राज ! दिखाई नहीं देते ?

—ऐसे ही, आजकल काम भी अधिक है।

—अमृत का पता लगा ?

—हां, उसको एक साल की कैद हुई है। मैं मिलने गया था तो पता लगा कि उसको ऐसी जगह भेज दिया कि उससे कोई न मिल सके; क्योंकि उसने जेल के वार्डर को पीट दिया। मेरे विचार से तो वह किसी अंग्रेरी

कोठरी में बन्द कर दिया गया और उन लोगों ने बहाना बना दिया।

—फिर ?

—फिर क्या नीरा हमारे भाग्य का भुगतान वह बेचारा भुगत रहा है। मुझे बड़ा दुःख हो रहा है। जब उसके बारे में सोचता हूं तब मेरा जी बड़ा परेशान हो जाता है।

—तुम आभा को यहां लाने का कब तक विचार कर रहे हो ?

—सोचता हूं शीघ्र ही ले आऊं। सात-आठ रोज बाद मुन्नी का विवाह है उसके बाद ही आ सकेगी। चाची भी पीछे पड़ी है।

दोनों चलते जा रहे थे। नीरा की आंखों में आखें डाल वह कुछ देर तक देखता रहा फिर बोला—

—नीरा, कभी-कभी हृदय को सम्भालना बड़ा असम्भव हो जाता है। जी चाहता है कि रोता रहूं। अतीत के जब उन दिनों का स्मरण आ जाता है तब मैं यह सोचता हूं कि यह सब क्या हो गया ? कई बार यह विचार उठता है कि क्या मैं आभा से प्रेम कर सकूंगा अथवा उसके निर्दोष जीवन में कांटे बोने का पाप मेरे सिर लगेगा। नीरा, क्या तुम्हारे हृदय में कभी असह्य वेदना उठती है ?

नीरा मौन थी।

—यदि उठती भी होगी तो क्यों कहोगी ? भारतीय नारी जो हो। हृदय की वेदना हृदय तक ही सीमित रखना जानती हो। आंसू को पीकर भी मुस्काना जानती हो।

—थोड़ी-सी वेदना की चोट भी हृदय को सुखदायी प्रतीत होती है, राज।

—सच ! नीरा, कभी सोचता हूं कि तुमने कितना महान् त्याग किया। कभी-कभी उपन्यास में प्रेम की इन त्यागमयी घटनाओं को पढ़ता तो मुझे असम्भव-सी लगती थी, पर आज मैंने अपनी आंखों से देखा है। वास्तव में तुम महान् हो ! तुम देवी हो नीरा !

—क्या कहते हो राज, इन्सान को भगवान बनाते हो।

—इसी इन्सान की नन्ही-सी जान के भीतर भगवान भी है और शैतान भी है। मनुष्य के कर्म ही उसे ऊंचा उठाते हैं आदर्श नहीं, आदर्श तो

केवल पथ-प्रदर्शन का कार्य करते हैं।

मीरा मौन रही। दोनों आगे बढ़ते चले जा रहे थे। एक दिन इन्हीं सड़कों पर दो प्रेमी मिलन के स्वप्न देखते जा रहे थे और आज उसी सड़क पर विरह की वेदनापूर्ण रागिनी छेड़ते जा रहे हैं। एक-दूसरे की मूक वेदना-पूर्ण झनकार सुन रहे थे। राजेन्द्र ने मीरा से पूछा—

—मीरा, क्या तुम मुझसे अब भी प्रेम करती हो?

—राज! इस प्रश्न से वह खिलखिला पड़ी और पीड़ा उसके मुख पर उमड़ पड़ी। राह चलते राही पथ पर बढ़ते जा रहे थे और कभी मुड़कर इन दोनों की ओर देख लेते, परन्तु किसे इतना अवकाश था कि उन अन्तर में प्रवेश करता। बस व मोटर की पों-पों, साइकिल रिक्शा की घंटी मोटर रिक्शा आदि की घड़घड़ाहट, तांगों की खड़खड़ाहट और लोगों की बातचीत से एक कोलाहल मचा हुआ था। प्रत्येक व्यक्ति अपनी मंजिल की ओर बढ़ता जा रहा था। सब किसी-न-किसी में उलझे थे।

—राजेन्द्र, तुमने यह क्या पूछा।

—हां, मीरा!

—क्या कोई अपने को भुला सकता है, पर अब अन्तर है, विवाह से पूर्व मैं तुमको प्रेम करती थी वह दृष्टिकोण दूसरा था, पर अब दूसरा।

—अब क्या?

—वही जो एक पुजारी का अपने देवता से। देवता एक हो सकता है और पुजारी अनेक। मेरी सदा यही इच्छा रहती है कि मैं तुमको किसी प्रकार सुखी बनाऊं। पुजारी देवता से कुछ नहीं चाहता वह तो केवल अपनी भक्ति अर्पण करता है।

—मीरा!—राजेन्द्र पुकार उठा।

—हां, मैं तुमको इसी दृष्टिकोण से देख सकती हूं और इसी में सुख का अनुभव करती हूं।

राजेन्द्र उसके घर के पास तक पहुंच गया था। द्वार पर से वह ...ने लगा। बेबी बाहर खड़ी थी। वह बोल उठी—

—राजेन्द्र बाबू, चुपचाप न जाओ, हम तुमसे शादी की मिठाई नहीं ...।

दोनों हंस पड़े । कुछ देर के लिए दुःख के बादल फट गये ।

—नहीं, यह बात नहीं, बेबी मुझे काम है ।

—घर तो चलो, मम्मी कितनी बार कह चुकी हैं, कि राजेन्द्र ने तो शादी के बाद अब इधर आना ही छोड़ दिया ।

—अच्छा ?

—कैसी है तुम्हारी बीवी ?

—अच्छी ।—राजेन्द्र ने हंसकर कहा ।

नीरा ने उसको आंख दिखाई, पर वह स्वयं हंस पड़ी और बोली—

—बड़ी शैतान है, तमीज बिलकुल नहीं ।

—दीदी, इसमें तमीज की क्या बात, इन्होंने हमको अपनी बीवी दिखाई नहीं तो हम कहें भी नहीं ।

—हां, हां ।—राजेन्द्र ने उसे अपनी गोदी में उठा लिया । अन्दर से सविता आवाज सुनकर बाहर चली आई ।

—अरी, किससे बात कर रही है ?

—मम्मी, राजेन्द्र बाबू हैं ।

—आओ, अन्दर आओ ।

राजेन्द्र अन्दर चला गया । जिस घर में आने उसे प्रसन्नता होती थी, आज उसी घर में प्रवेश करते कितनी लज्जा, ग्लानि, संकोच महसूस हो रहा था ।

राजेन्द्र जब नीरा के घर से लौटा तो रात के आठ से अधिक बज चुके थे, जाकर शीघ्रता से खाना खाने बैठ गया । परन्तु उसका ध्यान उसी ओर लगा था । उसने पूछा—

—भाभी, पत्र आया है कहीं से ?

—आया है खाना तो खा लें मैं बाद में दूंगी ।

राजेन्द्र समझ गया कि कुछ मामला गड़बड़ है । जैसे-तैसे रोटी गले से उतरी । राधिका ने पत्र लाकर हाथ में दे दिया और कहा—

—जेठ जी का है ।

राजेन्द्र पत्र पढ़ने लगा । उसमें उन्होंने लिखा था कि बेटा, मैं बड़ा परेशान हूं । किस्मत का [illegible] मेरे ऊपर हर [illegible] रहता है, [illegible]

नही आता क्या करूं। मुन्नी की शादी के गिने-चुने दिन रह गये हैं, पर अभी तक तीन हजार का प्रबन्ध नही हो पाया है। उधर तुम्हारी मां मेरी जान खा रही है। यही दशा रही तो मैं जहर खाकर मर जाऊंगा। क्या मुह दिखलाऊंगा। मुन्नी का मुह मुझसे नही देखा जाता है, वह वैसे घुलती जा रही है जैसे पानी मे बर्फ। उसके साथ भी अन्याय हो रहा है। उसका भी दोषी मैं ही हूं, क्योंकि मै उसका बाप हूं। यदि मैं उसके भविष्य का निर्णय नही कर पाया तब जगत् मे बाप कहलाने का मुझे क्या अधिकार ? मैं स्थान-स्थान, घर-घर डोला, पर किसी ने तीन हजार रुपये उधार न दिये। गिरवी रखने को कहते, सो तुम जानते हो घर मे है क्या ? खाब भी नही। 35 वर्ष की कमाई मे भी आज इस योग्य नही हो पाया कि अपनी बेटी का विवाह कर पाऊं। रमेन्द्र से मिलने का साहस नही होता। वह तो लड़का अच्छा है, परन्तु उसकी मां नही मानेगी। उसके भी तो छोटे-छोटे बच्चे हैं। समझ मे नही आता क्या करूं। आज मैं इतना निर्धन हूं कि अपनी बेटी की मांग का सिन्दूर भी नही खरीद सकता हूं। कल जब शादी नहीं होगी, तो लोग क्या कहेंगे। कगाल कहीं का, बेटी का विवाह भी नहीं कर पाया। बेटा, दिल्ली बड़ा शहर है, तुमको दो वर्ष हो गये वहा किसी से प्रबन्ध करो। बहन का सुहाग तुम्हारे हाथ है।

राजेन्द्र पत्र पढ़कर सहम गया। पिता के अन्तरतम को रोता देख वह भी रो उठा। राधिका बोली--

—क्या है, तू तो बिलकुल बच्चा है। इतना बड़ा हो गया, लेकिन रोता है बच्चों के समान।

—चाची, हमारा घर !

—भगवान सब ठीक करेगा।

राजेन्द्र चुपचाप जाकर लेट गया। अपने बिस्तर पर पड़ा सोच रहा था कि दिल्ली बड़ा शहर है, यहां क्या तीन हजार नही मिलेंगे। यहां लखपति, करोड़पति रहते हैं, पर क्या इनकी जेब उसके लिए है ? उनके हृदय के पट क्या उसके लिए खुले हैं ? उसने आज अपने प्रेम का त्याग किया किस कारण ? इसी कारण न कि उसकी बहन का घर बस जायेगा, परन्तु नियति को यह भी मन्जूर न था। वह तारों को नृत्य करते देख

रहा था तथा अपने भाग्य के तारे उनमें ढूढ रहा था। परन्तु क्या वह इच्छित तारा था उनमे ? इन्द्रमणि के समान छितराये हुए तारों में उसे कोई भी अपना नहीं दिखाई दे रहा था। उसके भाग्य का तारा कभी उदय न होगा। क्या वह सदा तारों के जाल में उलझा रहेगा ? क्या उसका भी कोई दिन आयेगा। आकाश की निस्तब्धता उसको गम्भीर बनाये थी।

हरि बाबू के हृदय मे नाना प्रकार के विचार उठ रहे थे, कि वह किस प्रकार से तीन हजार रुपये का प्रबन्ध करें। उन्हे अपने असमर्थ होने का दुःख हो रहा था। उन्होंने इसके लिए क्या नही किया। बेटे की प्रसन्नता छीनकर उसके हृदय मे विषाद की राशि भर दी। उन्होंने इसी के लिए रामनारायण बाबू के सामने इतनी धृष्टता से कार्य लिया कि रुपये न मिलने पर बरात लौट जायेगी। यद्यपि उन रुपयों की कानाफूसी का स्मरण आते ही उनकी आत्मा उनको कोसने लगती है। करें तो वह क्या करें? एक कंगाल ने दूसरे कंगाल की जेब टटोली थी तो मिलता क्या था। उस समय न जाने कौन-सी शक्ति ने उनके मुख से निकाल दिया कि पंडितजी गाठ बांधिये ? वे कितना कठोर निर्णय करके गये थे, परन्तु रामनारायण बाबू के दीन मुख ने न जाने कैसा जादू किया कि उनके मुख से वहां निकल गया। यद्यपि उन्हे इस बात का हर्ष हुआ कि उन्होंने एक अबोध बालिका जो निर्दोष थी, उसका जीवन बचा लिया। परन्तु इससे उनकी समस्या का समाधान नहीं हुआ बल्कि और बढ़ गई।

इसके उपचार के लिए उन्होंने क्या प्रयत्न नहीं किया। दिन-दिन भर समय निकालकर घर-घर, कोठी-कोठी, दुकान-दुकान, महाजनों और सेठों के पास जाते। उन्होंने अपनी लड़की का सुहाग खरीदने के लिए भीख मांगी। उसका जीवन बचाने के लिए गिड़गिड़ाये। पर व्यापार में सहृदयता

से काम नहीं चलता है। उन लोगों के पास कोई शब्द और भावना थी, परन्तु हृदय के द्वार बन्द थे। इसके लिए वे कोई वस्तु लिखकर [illegible] चाहते थे। [illegible] पास था [illegible] आते-जाते और जाते, परन्तु कोई [illegible] नहीं आता। [illegible] ने भी [illegible] किया। [illegible] का भी [illegible] कि [illegible] है कि मैं [illegible] के आगे [illegible] आ गया। फिर भी बड़ा नगर [illegible] है, परन्तु यहां मानवता का नाम नहीं है [illegible] वस्तु [illegible] की दृष्टि से देखी जाती है। मेरे पास कोई ऐसा साधन नहीं जो धन प्राप्ति का [illegible]। काम अधिक होने के कारण मैं विवाह से दो दिन पूर्व आ सकता, क्योंकि इधर छुट्टी नहीं मिलेगी।

निराशा के घोर अन्धकार में हरि बाबू भी अन्धे हो रहे थे, अन्धाधुन्ध उनको कुछ न दिखाई दे रहा था। सत्य का दीपक जो उनके हृदय में जल रहा था बुझना चाहता था। कर्तव्य उनको किसी दूसरी ओर खींच रहा था। और मन दूसरी ओर। दो दिन रह गये थे अभी किया क्या उन्होंने। वे क्या करेंगे? बरात आ जायेगी तो क्या ताने सुनेंगे। लोग तालियां बजा-बजा कर उनकी निर्धनता का उपहास करेंगे। उस समय उनका साथ देने वाला कोई न होगा और बुरा-भला कहने वाले सब होंगे।

वह अपने आप को न रोक सके। सन्ध्या का समय हो रहा था। तिमिर और प्रकाश में संघर्ष हो रहा था। तिमिर विजयी होकर बढ़ता आ रहा था और प्रकाश धीरे-धीरे हटता जा रहा था। ठीक यही दशा हरि बाबू के अन्तर की भी थी। उन्होंने विद्यालय में प्रवेश किया। चारों ओर सुनसान, कौन था वहां? केवल एक बूढ़ा चौकीदार अपनी कोठरी में बैठा आग ताप रहा था। वह दृढ़ता से बढ़े जा रहे थे। पद-चाप की ध्वनि से भी कभी-कभी कांप उठते और चारों ओर देखने लग जाते। उन्होंने थोड़ा मैदान पार कर बरामदे में प्रवेश किया। अपने कमरे की ओर न जाकर प्रधान अध्यापक के कमरे की ओर चले गये। कमरा चाबी से खोला। खटाक की आवाज से उनका शरीर कांप उठा। उन्होंने कमरे में प्रवेश किया। कमरे में घुसते ही उनके शरीर में से दिसम्बर की जाड़े की ऋतु होने पर भी पसीना छूट रहा था। उन्होंने चाबी के गुच्छे में से एक लम्बी

चाबी निकाली। उनके हाथ मे चाबी थाप रही थी और हाथ धीरे-धीरे बढ़ रहा था। चाबी सेफ के सूराख तक पहुच गई और उन्होंने एक झटके मे सेफ खोला। सामने नोटों के बण्डल पडे थे। दो हजार कॉलेज के विद्यार्थियों का शिक्षा दान था। उन्होंने शीघ्रता से बण्डल अपने हाथ मे उठा लिये और उन्हे अपनी जेब मे रखा। उन्हे ऐसा लगा जैसे कि कोई आ रहा है, इस कारण उन्होंने शीघ्रता से सेफ बन्द किया और अपनी पीठ सटाकर खडे हो गये। इस समय उनका हृदय इतनी वेग से चल रहा था मानो पसली तोडकर बाहर निकल आयेगा। वह कुछ देर तक अन्धकार मे खड़े रहे परन्तु कोई नही था। उन्होने शीघ्रता से कमरे के बाहर अपना पांव रखा और कमरा बन्द किया। फिर उन्हे ध्यान आया कि सेफ मे तो चाबी लगाई ही नहीं है। फिर से कमरा खोला और सेफ बन्द किया। रजनी का प्रसार बढ गया था, चारो ओर अधेरा था। धीरे-धीरे उन्होने सांकल लगायी और कमरा बन्द किया और उतरे। उतरते समय घबराहट मे पाव फिसल गया। वह कुछ देर वहा से दर्द और भय के कारण नहीं उठ पाये। थोडी देर के बाद धीरे-धीरे वह फाटक से बाहर निकले। अब उन्हे ऐसा लगा जैसे कि कोई उनका पीछा कर रहा है। उन्होंने जब पीछे मुड़कर देखा तो कोई नही था। उनका स्वय का साया पड़ रहा था।

वह पग बढाते घर की ओर आये और कुडा खटखटाया। इस समय उनके हाथ वेग से चल रहे थे।

—अरे, क्या दरवाजा तोड डालोगे। गगा ने द्वार खोलते हुए कहा।

—नही-नही—घबराये स्वर मे उन्होने कहा।

गगा उनके मुख की ओर तथा उनकी घबराहट को देख रही थी। उसके हाथ की उठी लालटेन का प्रकाश उनके मुख पर पड रहा था। वह उनके मुख के पसीने को देख रही थी। हरि बाबू दरवाजा बन्द कर और पीठ उससे सटा कर बोले—

—क्या घूर कर देख रही हो, क्या मैंने चोरी की है? क्या मैं चोर हूं…नहीं…नहीं… मैंने चोरी नहीं की…अगर की भी तो क्या पाप…वह न जाने क्या बोल रहे थे।

—तुमको हो क्या गया है। कम्बल ओढ़ कर कहां गए थे, पसीना तो

हरि बाबू के पांव कांप रहे थे, पांव लड़खड़ा रहे थे, वह गिर पड़े। उनके मुख से निकला—भगवान्! डूबती नैया को सम्भाल लो।

शैलती हाथ में मोमबत्ती लिये हुए पिता के मुख से निकले शब्द सुन रही थी। जिस प्रकार से उसकी मोमबत्ती घटती जा रही थी, उसी प्रकार से इनकी बातों से उसके जीवन का आलोक भी घटता जा रहा था। पिता के गिरने की आवाज के साथ उसके हाथ की मोमबत्ती बुझ गई जितनी शक्ति भी वह जल चुकी थी। वह उनके पास पहुंची। हरि बाबू गिरे हुए थे तथा उनके दोनों हाथ ऊपर उठे थे कदाचित् मूर्ति की ओर थे। उसके मुख से निकल पड़ा 'बाबूजी' गंगा भी दौड़ कर आई बोली—क्या हो गया क्यों चिल्ला रही है?

—बाबू जी?

गंगा ने उनका शरीर छू कर देखा, वह ज्वाला के समान तप रहा था। वह ठंडा पानी ले आई और पानी के छींटे मुंह पर मारे, धीरे-धीरे उनकी आंखें खुली। उनको एक खाट पर लिटाया। गंगा उनके पास ही बैठी थी।

शैलती वहां से उठ कर ऊपर आ गई। ऊपर का कमरा उसका ही था। पिता के वाक्य उसके हृदय में अनेकों बाण के समान चुभ रहे थे।

बाबू जी ने मेरे कारण चोरी की। तभी इतने घबराए हुए थे। इसी कारण न कि मेरा विवाह हो जाए मेरा विवाह···मेरे विवाह के कारण आज भैया का सुख-प्रेम छीन लिया ··मैं ही सबकी मुसीबतों की जड़ हूं मुझे भगवान ने क्यों न रूप दिया। आज मेरे पास रूप होता तो क्या बाबूजी को इस प्रकार भटकना पड़ता। भगवान! यदि मुझे निर्धन बनाना था तो मेरा रूप क्यों छीन लिया। यदि रूपहीन बनाना था तो क्यों नहीं मुझे किसी धनवान के यहां पैदा किया···आज मेरे ही कारण सब कुछ हो रहा है···बाबूजी ने चोरी की···कहां से की···क्या होगा···यदि पकड़े गए तब क्या होगा, यहीं न कि पुलिस घर आयेगी, उनके हथकड़ियां पड़ेंगी। वह बन्दी बनाए जाएंगे केवल मेरे ही कारण।···आज मैं ही नहीं होती तो क्यों मर इस घर का दीपक बुझने को होता।···मेरे ही कारण सब कुछ हुआ है···मैं नहीं रहूंगी तब सब ठीक रहेगा···मैं मरूंगी, मैं

आत्महत्या करती। इस संसार में इतने दीपक बुझते हैं, यदि एक और बुझ जाएगा तो उससे क्या अंधेरा हो जाएगा? इतने तारे टूटते हैं, एक और टूट जाएगा तो क्या रजनी तारों रहित कहलायेगी? परन्तु उन दीपक के जलने से क्या लाभ? जिनके पास भी लाभ की आस लगी या मन हो। ऐसे दीपक का जलने से पहले ही बुझ जाना अच्छा है। यदि आज बाबूजी बन्दी बनाए जाएं तो फिर इनका भविष्य क्या होगा···लोग भूखे मर जायेंगे तड़प-तड़प कर मर जायेंगे, और कोई एक टुकड़ा रोटी का नहीं डालेगा। पानी-पानी चिल्लाकर रह जायेंगे, कोई एक बूंद पानी तक नहीं देगा···लोग क्या कहेंगे···मेरी ओर अंगुली उठाकर कहेंगे कि यही वह दुष्ट है, जिसके लिए बूढ़े बाप को चोरी करनी पड़ी···इतना धर्मात्मा और उसके कर्म कैसे, यह निस्सहाय है, कैसे सामना करेगी? इसका नहीं रहना ही अच्छा है···यह नहीं रहेगी।

जब निराशा, दुःख अथवा सुख परम सीमा पर पहुंच जाता है तब कुछ क्षण के लिए मनुष्य अपने आप को भूल जाता है। जीवन के वे क्षण अत्यन्त अविवेकपूर्ण होते हैं। वह उसमें कुछ भी कर सकता है, असमर्थ भी समर्थ हो सकता है। हृदयपक्ष इतना प्रबल हो जाता है कि बुद्धि पक्ष का नाम ही रह जाता है। इस अवसर पर वह किसी का खून अथवा आत्म-हत्या कर सकता है।

यह एक ऐसी बालिका थी जिसकी दीप-शिखा शैशव से अब तक निर्धनता के तूफान में ही डगमगाती रही। जिसके यौवन में एक दिन भी प्रसन्नता का दिनकर नहीं चमका, जिसका रूप केवल सावन के बादलों के समान काली अंधेरी रजनी के समान रहा, जिसके नयनों में बारह महीने बरसात रही, आज उसके ऊपर का भार जब असह्य हो गया तब वह अब उसे कैसे संभाल सकती थी। जीवन की नौका अब इतना भार नहीं संभाल सकती थी। फिर वह आज देख भी रही थी कि उसके कारण ही सब कुछ हो रहा है।

वह खड़ी हो गई। उसके मुख पर एक पागलपन-सा छा गया था, उसके कांपते हाथ एक कागज और दवात की ओर बढ़े उस पर उसने कुछ लिखा और उसको सामने आले में ताले के नीचे दबाकर रखा फिर शीशी

पहले से ठीक थी। गंगा ने भी रात अपने पति की सेवा में बिता दी थी। वह ही तो थे उनके जीवन के प्रदीप। राजेन्द्र ने बैठते हुए कहा—

—बाबू जी, क्या हुआ ?

गंगा ने संकेत से मना कर दिया। इनकी तबियत खराब है। हरि बाबू से गंगा ने कुछ कहा।

—लेट जाओ, लिहाफ उढ़ा देती हूं, कुछ सो लो तो जी हल्का हो जाएगा।

—हूं···अच्छा, उनके ऊपर गंगा ने लिहाफ ढक दिया।

—जीजी, मुन्नी कहां है ? राधिका ने कहा।

—ऊपर चली गई थी वहीं सो रही होगी। मैं तो जा नहीं सकी क्योंकि इनकी तबियत इतनी खराब हो गई थी कि मेरा आधा गस्सा मुंह और आधा हाथ में ही था कि इनके गिरने की आवाज सुन कर भागी आई। थाली वैसी की वैसी ही पड़ी है।

—मां, मुन्नू कहां है ?

—पड़ा सो रहा है, बराबर के कमरे में बहू के पास।

—भाभी, तुम घबराओ मत सब ठीक हो जाएगा। रम्मू रज्जू क पक्का दोस्त है। मुझे आशा है कि जिस तरह रज्जू समझदार है वैसे हां वह भी। अरे यही है कपूत ! कौन ऐसा होगा जो अपना अधिकार छोड देगा। आज यदि इसकी मत न फिर जाती तो यह दिन क्यों देखने पड़ते।

—मां, भगवान सब ठीक करेगा।

—अरे भगवान का बनाया जो बिगाड़ते है, उनकी भगवान भी मदद नहीं करते।

राजेन्द्र अत्यन्त शान्तप्रिय स्वभाव का था। चुप हो गया। बोला—

—मां, अभी चाचा और चाची का तो प्रबन्ध करो।

—अरे हमारा क्या, कहीं पड़ रहेंगे—श्री बाबू बोले।

—नहीं, मैं ऊपर जाकर मुन्नी को नीचे ले आती हूं तुम दोनों ऊपर जाकर सो जाना।

गंगा ऊपर गई। दरवा था। कमरे में अन्धकार था। दीया

शून्य पड़ा हुआ था, उसका तेल जल चुका था, उसमें से धुआं उठ रहा था। उसने आवाज दी 'मुन्नी-मुन्नी' उठ, देख चाचा-चाची, रज्जू सब आए हैं।' पर कहां था कहा। पंछी उड़ चुका था खाली पिंजरा पड़ा था। गंगा ने तनिक ऊंचे स्वर में कहा 'मुन्नी-मुन्नी' परन्तु उत्तर क्या मिलता। उसको उसकी ही प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती। गंगा उसके पास पहुंची और वहां उसे झिंझोड़कर कहा 'उठ न घोड़े बेचकर सोती है।' पर अब क्या शेष था। मां का हृदय फट गया। उसके मुख से चीख निकली 'मुन्नी' उसका हाथ गंगा उसके ठंडे शरीर पर पड़ा 'हाय मैं लुट गई''' मुन्नी मेरी बच्ची' नीचे गंगा की चीख ने सब व्यक्तियों को चौंका दिया। आभा ऊपर हाथ में लालटेन लेकर आई। कमरे में आलोक हो गया।

मुन्नी खाट पर लेटी थी। उसका सिर खाट से नीचे कुछ लटक गया था। बाया हाथ सीधा था लेकिन उसकी अंगुलियां अकड़ी थी। मुख पर कुछ झाग थे और हल्का-सा खून भी। आंखें खुली तथा फटी-फटी-सी, जिह्वा कुछ निकली हुई। नीचे जो शीशी पड़ी थी उसे आभा ने उठाकर देखा उस पर लाल शब्दों में अंग्रेजी में लिखा था 'जहर'। गंगा बेटी के ऊपर पड़ी थी। आभा ने कहा—

—मा जी, बीबी ने जहर ले लिया।

—जहर !—गंगा ने कम्पित स्वर में कहा।

—हां माजी।

गंगा कुछ क्षण तक मौन रही और मुन्नी की ओर देखती रही। उसने पीछे मुड़कर देखा तो आभा खड़ी थी। उसकी आंसू भरी आंखों में से शोले और अंगारे बरसने लगे। उसकी आखें बड़ी-बड़ी हो गईं, उसका मुख सध्या की जलती ज्वाला की तरह लाल हो गया। वह उठ खड़ी हुई।

—तूने'''हां'''तूने ही मुन्नी को जहर दिया है'''तूने ही मारा है मेरी बच्ची को'''मैं तुझको जीवित नहीं छोड़ूगी'''तू डायन है—गंगा उसकी ओर बढ़ी। आभा ने गंगा का क्रोध से भरा मुख कई बार देखा था, लेकिन आज जैसा भयानक मुख उसने कभी नहीं देखा। वह पीछे हटी 'नहीं'''नहीं' उसके मुख से जोर से चीख निकली। उसकी पीठ पीछे की दीवार से सट गई। गंगा के दोनों हाथ उसकी ओर बढ़ रहे थे, वे आभा को अपनी नाचती हुई

मृत्यु के समान लग रहे थे। गंगा ने उसके गले को इतनी जोर से पकड़ा जैसे कोई डूबता हुआ व्यक्ति किसी अवलम्ब को पकड़ता है। आभा का दम घुटने लगा। उसके मुख से जोर की चीख निकली और गंगा ने एक भयंकर हंसी हंसी जिससे कमरा गूंज उठा।—तू सोचती है मैं छोड़ दूंगी··· मैं नही छोड़ूगी मेरी बेटी की मौत इतनी सस्ती नही।

राजेन्द्र चीखें सुनकर ऊपर दौड़ा आया और उसके पीछे थी बाबू और राधिका भी।

हरि बाबू बाहर आंगन मे बैठे पुकार-पुकार कर पूछ रहे थे—क्या हो गया—अरे बोलो भी। राजेन्द्र ने कमरे में प्रवेश करके आभा को गंगा के कठोर करों से छुड़ाया। उसका गौर वर्ण नीला-सा पड़ गया वह हांफने लगी। उसने मुन्नी की ओर संकेत किया। गंगा कह रही थी।

—कौन हो तुम भाग जाओ यदि मेरी बेटी को हाथ लगाया···मेरी बेटी सो रही है, कल उसकी शादी है···नहीं, सो नहीं रही है वह मर गई··· उसने जहर खा लिया···खाया नही, इस डायन ने दिया है, मुझे छोड़ दो मैं इसे मार डालूंगी···थी बाबू गंगा को पकड़े थे और गंगा उमड़ती हुई बरसाती गंगा के समान अपना वेग दिखा रही थी।

कुछ ही देर मे जो घर एक विवाह का घर बनने वाला था वह एक मृत्यु-गृह में परिवर्तित हो गया। हंसी-खुशी के संगीत के स्थान पर चीख-पुकार के कोलाहल से घर गूंज उठा। हरि बाबू कह रहे थे।

भगवान ! यह कहां का न्याय है तेरा कि पाप कोई करे और प्रायश्चित कोई करे। मुझको क्यों नही दंड दिया। इस नन्हीं बच्ची ने क्या अपराध किया था, जो उसे अपनी गोद में सुला लिया यदि मुझ बूढ़े को बुला लेते तो मेरी आत्मा को शान्ति तो मिलती···मैंने चोरी की इसी कारण इसका दंड यह मिला कि मेरी बेटी मुझसे छीन ली···भगवान और भी तो हैं इस संसार में, वे भी तो अनेक प्रकार से चोरी करते हैं, लेकिन उनका कुछ नही बिगडता है मैंने क्या अपराध किया ?···नही नही···मैं अपराधी···मैं अपराधी हूं···।

यह कहते हरि बाबू भगवान के सामने रो रहे थे। उनकी आत्मा रो रही थी। उनका हृदय उनको धिक्कार रहा था। थी बाबू उनको पकड़े थे।

उनकी भी पलकें गीली थी। इसी बीच किसी ने द्वार खटखटाया। राजेन्द्र ने नीचे जाकर द्वार खोला। एक आदमी खड़ा था, बोला—

—देखिये बराबर सेठ जी की लड़की के फेरे पड रहे है, उन्होने कहा है कि इस शुभ अवसर पर आप यह रोना बन्द कर दें तो अच्छा है।

—सेठ जी की लड़की की शादी?

—जी।

—अच्छा।

राजेन्द्र द्वार बन्द करके ऊपर आया। राधिका गंगा को सम्भाले थी, परन्तु दोनों रो रही थी और बाहर छज्जे पर आभा रो रही थी। रज्जू ने प्रवेश किया और कहा—

—मा, चुप हो जाओ ''मा रोओ नही' 'तुम्हारे रोने की आवाज गगन-चुम्बी अट्टालिकाओं पर निवास करने वाले सेठ ताराचन्द के यहा पहुच रही है। जिसके कानों मे कभी लोगो की पुकारें व चीखें न पड़ती थी, वह भी तुम्हारे रोने की आवाज से काप रहा है ''चाची चुप हो जाओ, एक सेठ की लड़की के फेरे पड रहे है, शुभ अवसर है'''बडे आदमी हैं'''सेठ हैं'''जानती नही उनका ससार है'''उनके संसार मे रोओगी तो तुमको निकाल देंगे'''और ये इन शब्दो को कहने वाला राजेन्द्र अपने को स्वय न सम्भाल सका और बाहर छज्जे पर आकर रोने लगा।

आभा भी वही थी। उसने अपने आंचल से उसके आसू पोछे, बोली—

—यदि आप इस प्रकार रोएगे तो हमे धीरज कौन बंधायेगा?

—आभा!—राजेन्द्र ने उसकी डबडबाई आखें देखी।

—मुझको कुछ नही हुआ है मैं ठीक हू।

—आभा, तुमको मेरे ही कारण यह सब सहना पड़ता है। मा का कहा बुरा न मानना आभा, वह अपने दुख को न सम्भाल पाईं। इसी कारण वह जो कुछ भी कर गईं केवल आवेश मे।

—आप कैसी बातें करते है, मा जी का मुझ पर अधिकार है। जो चाहे करें।

आभा को इस घर मे आये लगभग बीस दिन हो रहे थे। वह दादा के स्वभाव से परिचित थी। वह सदा माने देती, जिनको वह अमृत के घूट के

समान पी जाती। आने के तीसरे दिन ही उससे कहना शुरू कर दिया कि खा-खाकर मुटा रही है, घर के काम से सम्बन्ध ही नहीं है। मैं भी तो ब्याह कर आई जो दूसरे दिन ही चूल्हा फूंकने लगी। आभा मां के कहे बिना ही उसी समय से सब काम करने लगी। मां की एकमात्र सन्तान कितनी लाड़-प्यार से पाली गई थी। एक गिलास तक कभी उसने न धोया था। कमरे में यदि कभी झाड़ू लगाती तो मां कहती कि मैं किसलिए हूं। वह कहती मेरी चांद सी बेटी जहां भी जायेगी, वहां राज करेगी। घर को स्वर्ग बनाकर रखेगी। पर यहा जो कुछ था उसके विपरीत था वह दिन भर काम करती रहती, बर्तन माजती, कपड़े धोती, झाड़ती-पोंछती, नौकरानी के समान सब कार्य करती। उस समय भी उसको ताने मिलते। व्यंग्य की तीखी कटार उसके हृदय के आर-पार हो जाती। तब वेदना असह्य हो जाती। उस समय नीरा के वाक्य, देव वाक्य के समान उसके हृदय को धीरज देते। वह चुपचाप काम करती रहती, केवल यही विचार करके फल की प्राप्ति की ओर न देखकर कर्तव्य पालन में ही मानव का मोक्ष है।

अट्ठाईस

क्या नियति का खेल है, दीपावली के त्यौहार में होली। वसन्त के समय ग्रीष्म की जलती ज्वाला, शीत के समय पल्लव रहित वृक्ष, क्या ऐसा भी होता है? मानव क्या बनाता है और नियति क्या कर देती है, मनुष्य किस ओर जाता है और वह किस ओर ले जाती है? किसी के अधरों की मुस्कान लेकर, किसी के आंखों में आंसू दे देती है और किसी के आंसू लेकर मुस्कान। जब चारों ओर शहनाई बज रही है। सड़कें अनेकों बरातों से पूर्ण, आनन्दोत्सव से झूमते मानव समूह चले जा रहे थे तब उसी के पीछे-पीछे कुछ व्यक्ति इस संसार से किसी व्यक्ति को अपने कन्धे पर रखे संसार से दूर, बहुत दूर ले जा रहे थे। जिसका कि विवाह होने वाला था,

लेकिन आज उसकी मांग, सिन्दूर के लिए लालायित होकर ही रह गई, इस विश्व मे जो जब से आया अपनी आशा का दीप अपने आखों मे लेकर आया लेकिन आज उस आशा के मिटते ही वह दीप भी बुझ चुका था। इस जगत मे क्या कुछ लोग इसलिए ही आते हैं! वे अपने हृदय की अपूरित आकांक्षा को अपने हृदय तक ही केवल देख पाते हैं उनकी इच्छायें कुछ लकड़ी के टुकड़ों के मध्य मे रखकर जला देने के लिए ही होती हैं और उनकी राख पर कुत्ते लोटते हैं। ऐसे भी भाग्य लेकर आने वाले प्राणी इस विश्व मे, विशेषकर हमारे भारत मे कितने हैं जो अपने दुःख की छाप तक को नहीं छोड़ जाते है। पृथ्वी फट नहीं जाती, आकाश उठती लपटों से बेचैन अवश्य होता है, वह द्रवित नहीं होता···कदाचित यही यहा का अटूट नियम है। कदाचित इसी प्रकार से मिटने मे ही उसकी मुक्ति है।

निर्धनता का उपहास करने वाले कितने हैं, और उसका साथ तथा उसको धीरज देने वाले कितने हैं। समाचार पत्रो के लिए यह गर्म मसाले के समान बन गया है। अनेक प्रकार के गढ़त अनुमानित टिप्पणियो सहित हिन्दी के दैनिक पत्रों के पिछले पृष्ठ पर निकला। कुछ अग्रेजी के समाचार पत्रों मे जो कि दिल्ली, इलाहाबाद और लखनऊ से निकलते थे उनके एक पृष्ठ मे एक 18 वर्ष की लड़की ने आत्महत्या कर ली क्योंकि उसका पिता उसका विवाह करने मे असमर्थ था, उसके पास उतना धन नहीं था। परन्तु कुछ भावुक मनुष्यों ने जो कि वामपक्षी विचारधारा के थे, उन्होंने लेख निकाला, उसका शीर्षक था 'इसका उत्तरदायी कौन ?' जिस प्रकार से इस संसार में दिन आता है फिर रात आती है और फिर दिन आता है, इसी प्रकार से यह घटना लोगों की आंखों के नीचे से दैनिक घटनाओं के समान निकल गई। लोगों के लिए ऐसी घटनाए न जाने कितनी होती रहती हैं।

हरि बाबू से न रहा गया। वह सत्येन्द्र जो कि उनके विद्यालय के प्रधान अध्यापक थे उनके घर जा पहुंचे। सत्येन्द्र जी उस समय बाहर बरामदे मे बैठे एक आराम कुर्सी पर अखबार पढ़ रहे थे और साथ-साथ धूप भी सेक रहे थे। सामने मेज पर दाढ़ी बनाने का सामान रखा था, लगता था कि अभी दाढ़ी बनाकर ही उठे हैं।

--कहिये बड़े बाबू क्या है?

—जी···नमस्ते ।

—बैठिये । उन्होंने एक कुर्सी की ओर संकेत किया और बोले—क्या बात है बड़े घबराये हुए हैं ?

—आप मुझको पुलिस को सौंप दीजिये । शीघ्र करिये, कहीं मेरा दिल न बदल जाये । कहीं मैं आपके हाथ से न निकल जाऊं ।

—क्यों ?—मुस्कराते हुए उन्होंने कहा ।

—मैंने चोरी की है । मैं चोर हूं···आप मेरी तरफ इस प्रकार क्या देख रहे हैं, शीघ्र कीजिये ।

—मेरे विचार से आपको लड़की का बड़ा दुःख हुआ है इसी कारण आप ऐसी बहकी-बहकी बातें कर रहे हैं । सच, मुझे स्वयं भी इस बात का बड़ा दुःख है ।

—आप मानते नहीं, यह देखिये नोटों की गड्डी मैंने रात को विद्यालय के सेफ में से निकाले थे । इसी कारण भगवान ने मुझे तुरन्त दण्ड दिया । मैं इसका प्रायश्चित करूंगा । शीघ्रता कीजिये ।

—अच्छा, आप बैठिये ।

हरि बाबू एक कुर्सी पर बैठ गये । सत्येन्द्र भी कुछ देर तक अखबार पढ़ते रहे । फिर उसके बाद उन्होंने अखबार सामने मेज पर रख दिया । आराम कुर्सी में पसरे पांवों को नीचे जमीन पर रखा और ऐनक उतार कर केस में रखी । तथा उसको अखबार पर रखा । इस कार्य को यद्यपि वह कर रहे थे, पर उनके मुख से ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वह किसी गहन चिंता में व्यस्त है । उन्होंने कहा—

—बड़े बाबू, मैं आपको पुलिस में न दूंगा, लेकिन इस मामले की रिपोर्ट पुलिस में कल हो चुकी है इस कारण विद्यालय की कार्यकारिणी में अवश्य इस मामले को भेजूंगा । आप इतने वर्षों से कार्य कर रहे हैं इस कारण मेरे कहने का भी प्रभाव पड़ेगा । आप सत्य को अधिक देर न छिपा सके, यही आपकी मुक्ति का कारण होगा ।

सत्येन्द्र जी भावुक व्यक्ति थे । उनकी सहृदयता आगरे में फैली हु[illegible] । सच था कि उनको क्रोध नाम को भी नहीं आता था । अपने [illegible]र्थियों के लिए जान दिए रहते हैं और इसी कारण विद्यार्थी उनसे

उपासना करते हैं।

हरि बाबू कुछ क्षण तक उनके मुख को देखते रहे। कदाचित् अपने अनुमानित निर्णय को न पाकर उनको आश्चर्य-सा हो रहा था। उन्होंने कहा—

—आप मुझ पर दया कर रहे है। आपको मालूम है कि मैं चोर हूँ चोर, और एक चोर को इस समाज में जीने का क्या अधिकार? मैंने पाप किया है मुझको दंड दीजिये। मुझको क्षमा कर आप भला न करेंगे।

—बड़े बाबू आप चोर नहीं क्यों आप अपने आपको चोर कहते है। मुझे पता है समय और परिस्थिति आप जैसे धर्मात्मा को पाप के इस गड्ढे में खींच ले गई। पर इसका उत्तरदायी कौन? आप नहीं यह समाज है। यह वातावरण, जिसने एक को इतना गिरा दिया है कि वह सिसकियां भर रो भी नहीं सकता है। इसके बाद कुछ देर मौन रह फिर उन्होंने कहना आरम्भ किया चोर, चोर आप नहीं आप से बढ़कर समाज के संचालक चोर है, जिन्होंने इसका शोषण कर एक श्रेणी के मानव को अन्धकार के गहन कूप में फेंक दिया है। पापी आप नहीं पापी वे है जिन्होंने यह सबसे बड़ा पाप किया है। दोषी आज के समाज के संचालक और उनके ठेकेदार है। बड़े बाबू, आज पापी और चोर अपने किए का फल नहीं पाते है, पाते है आप जैसे। समय के काल चक्र में पिसते हुए जीव। जो परिस्थिति की चक्की में पिस कर जीवन का कुछ खून चुके है जिनका जीवन भार है।

हरि बाबू अपने भावुक साहब के वार्तालाप को सुन रहे थे। उन्होंने कहा—

—पागल हो गई है। बेटी का गम उसके सीने में बैठ गया है।

—घबराइये नहीं, आपको मैं चिट्ठी लिखे देता हूं आप उन्हें ले जाइये, पागलखाने के डॉक्टर के० बी० लाल के पास। वह मेरे मित्र हैं, आपकी सहायता करेंगे।

—साहब, यदि आप इतनी दया का भार मेरे कन्धे पर लाद देंगे, तब मैं एक दुखिया उससे दब कर ही मर जाऊंगा।

—बड़े बाबू, यह मेरा कर्त्तव्य है।

हरि बाबू वहां कुछ देर बैठे इसके पश्चात् पत्र लेकर घर चले आये। घर पर आकर उन्होंने सबसे कहा। यह निश्चय किया गया कि आज ही गंगा को डॉक्टर के पास ले जाया जाए। राजेन्द्र, श्री बाबू और हरि बाबू स्वयं गंगा को तांगे में बैठा कर ले गये। हरि बाबू जाकर डॉक्टर लाल से मिले। उन्होंने सत्येन्द्र जी का पत्र पढ़ कर गंगा की परीक्षा की। इसके पश्चात् हरि बाबू को अपने कमरे में ले आए, बोले—

—इनको गहरा आघात पहुंचा है, इसी कारण ये कुछ बोलती नहीं गुमसुम हैं। क्या यह आप लोगों में से किसी को पहचानती हैं?

—नहीं, कभी-कभी केवल मुस्काती।

—किसी को मारती पीटती हैं?

—जी, मेरे लड़के की बहू को जब कभी देखती है तब यह कह कर कि इसी ने मेरी बेटी को खा लिया है उसे मारने दौड़ती हैं।

से पूर्व उनकी दशा भी इसी प्रकार थी।

—हूं। वह न जाने क्या इधर-उधर घूम कर सोच रहे थे। हरि बाबू उनका मुंह देखने के लिए बैठे-बैठे कभी इधर मुड़ते तो कभी उधर।

—देखिए, घबराने की कोई बात नहीं। केस बिल्कुल सादा है, शीघ्र ठीक हो जायेगा। एक चीज का भय है यदि यह अपनी पिछली स्मृति बिल्कुल खो दें तो मेरे विचार से अच्छा ही है। हां इनको आप एक सप्ताह के लिए यहां छोड़ दीजिए फिर उसके बाद वह घर जा सकती है।

—घर जा सकती है।

—हां, परन्तु ऐसा है, अपने लड़के की बहू को इनके पास उस समय तक नहीं आने देना जब तक यह ठीक न हो जायें। अच्छा तो यह होगा कि आप यह मकान छोड़ कर नया मकान ले लें और यदि आप ऐसा नहीं कर सकते तो आप वहीं रह सकते हैं, परन्तु इस शर्त पर कि यह ऊपर के कमरे में कभी न जायें।

—नहीं, मैं दूसरे घर का प्रयत्न करूंगा।

—ठीक है, आप इनको यहां छोड़ जाइये। हम इनको जनरल वार्ड में रख लेंगे। सप्ताह बाद आप इनको ले जा सकते हैं, परन्तु इस बीच में अच्छा यह होगा कि आप में से कोई इनसे न मिले।

—जैसी आज्ञा। कह कर हरि बाबू उठे।

उनकी दशा ऐसी हो रही थी जैसे कि किसी लता को महीने से पानी न मिला हो। परन्तु फिर भी वह सब कुछ सहन कर रहे थे। सबने डॉक्टर की राय स्वीकार की। गंगा को उस संसार में ढकेल दिया गया, जहां मनुष्य की मानवता छीन ली जाती है। जहां वह केवल कुछ लोगों के उपहास व मनोरंजन का साधन बन कर रह जाता है, जहां उसको यह पता नहीं रहता कि अन्धकार है या प्रकाश है, दिन है अथवा रात, जहां वह इतना हंसता है कि विश्व में कोई न हंसता हो अथवा वह इतना रोता है कि कोई न रोता हो। उसके लिए विश्व एक कन्दुक के समान है और विश्व के लिए वह एक कन्दुक के समान है। ऐसे संसार में गंगा को ढकेलने का श्रेय किसको? क्या उसको भी पता है कि वह अप्रत्यक्ष रूप से क्या कर रहा है? उसके प्रति दिन के कार्य किसी के लिए क्या हो रहे हैं?

उनतीस

जब से आभा दिल्ली आई, राधिका के पांव धरती पर नहीं पड़ते थे। उसकी कितनी आकांक्षा होती थी कि वह अपने आंगन में किसी को बहू कहकर पुकारे। उसके आस-पास की स्त्रियां जब अपने पुत्र की बहू को बहू कह कर पुकारतीं, तब उसकी भी यह इच्छा होती कि राजेन्द्र का शीघ्र विवाह हो जाए तब वह भी उसकी बहू को बहू कह कर पुकारे। वह सदा उसके लिए कुछ-न-कुछ कहती रहती। कई बार श्री बाबू से झगड़ती कि मकान दूसरा ले लो बहू आ गई है क्या सोचती होगी। श्री बाबू भी चाहते थे कि कहीं दूसरी जगह मकान ले लें तो अच्छा हो। परन्तु मकान का किराया सुन कर चुप हो जाते। कई बार उनका हृदय जल से निकाली गई मीन के समान तड़प कर रह जाता। उसको कभी-कभी असमर्थता पर दुख होता और कभी क्रोध भी।

आभा को घर का क्या करना। उसको तो अपने पति से मतलब था। वह सदा उसको प्रसन्न रखने का प्रयत्न करती रहती। उसको प्रथम बार अपने पति के पास रहकर उसकी सेवा-भक्ति करके प्रेम प्राप्त करने का अवसर मिला था। जब राजेन्द्र सुबह सो कर नहीं उठता वह उठकर चाय बना लाती। चाची सिर्फ पूजा करती, उनकी पूजा का सामान तैयार कर देती। वह कितना मना करती परन्तु यह न मानती। जब चाय लेकर आती तब राजेन्द्र के काले-काले बालों में अपनी लम्बी तथा पतली अंगुलियां फेर देती। इससे राजेन्द्र की आंख खुल जाती वह देखता कि आभा के मुख पर एक मुस्कान है, कितनी भोली कितनी सुन्दर वह कहता कि अरे चाय भी बना लाई, अरे! तुम तो बड़ी जल्दी सो कर उठ जाती हो [illegible] हो गये अभी सुबह भी नहीं होता। जब से आभा आई [illegible] एक प्याला चाय [illegible]। वह [illegible] था कि वह बिना मुंह धोये ही [illegible] देखती रहती। राजेन्द्र कभी-कभी चाय [illegible] उठकर देखता। फिर वहां से उठकर [illegible] जाता। इसी बीच [illegible]

देती और कभी तरकारी बना देती। चाचा जी के हजामत का पानी गर्म कर दे देती। इसी बीच मे वह राजेन्द्र के कपड़े जो पहन कर जाता बाहर निकाल देती यदि उसमें बटन या सीने आदि का काम होता वह नहाने से पूर्व सब कुछ कर देती। राजेन्द्र जब नहाकर आता, वह एक-एक करके सब कपड़े उसको देती। राजेन्द्र जब तक कपड़े पहनता वह जूतों को पॉलिश करने लगती। राजेन्द्र कहता क्या कर रही हो आभा? वह कहती बिना पॉलिश जूते अच्छे नही लगते। राजेन्द्र देखता ही रह जाता, वह चमका कर जूते रख देती। कभी-कभी जल्दी मे जब उसके कमीज का कॉलर उठा रह जाता या कोट का कॉलर मुड़ा रह जाता तो वह उसे कितने प्रेम से ठीक कर देती। राजेन्द्र तैयार होकर बैठता तब खाना लेकर आती। राजेन्द्र खाना और वह पखा करती रहती। कभी-कभी राजेन्द्र कहता क्या करती हो आभा, इतना काम करती हो कभी आराम तो कर लिया करो। वह मुस्कराकर कहती, बड़ा आनन्द आता है आपके काम मे। भला इस काम से कोई थकता भी है। वह उसके हाथ धुलाती। साइकिल साफ करके देती और जब वह जाने लगता तब वह द्वार पर खड़ी-खड़ी देखती रहती जब तक कि वह आंखो से ओझल न हो जाता।

दिन भर वह चाची के साथ अन्य दैनिक कार्य करती रहती। चाची के मना करने पर भी पांव आदि दबा देती। राधिका कहती क्या वह तुम भी सदा चक्की के पाट के समान जुटी रहती हो। सन्ध्या के पांच-छह बजे तक यद्यपि वह काम करती रहती। परन्तु उसकी दृष्टि सदा सामने के द्वार पर रहती। साइकिल की खड़-खड़ की ध्वनि से वह दौड़कर द्वार पर पहुंचती। साइकिल लेकर एक कोने मे करती। राजेन्द्र के कपड़े सावर देती, उतारे कपड़े तह लगाकर टांगती। राजेन्द्र हाथ-मुंह धोता तब तक वह चाय बनाकर ले आती। इसके पश्चात् वह लाइब्रेरी या घूमने चला जाता तो वह खाना बनाने मे सहयोग देती। नौ बजे तक वह लौटकर आता। श्री बाबू और राजेन्द्र दोनों साथ खाने बैठते। उस समय वह खाना परोसा करती। श्री बाबू नये विचार के थे, वह बहू से परदा आदि नही कराते। इस कारण आभा इस घर मे ऐसी रहती जैसे कि अपने ही घर में है।

उनतीस

जब से आभा दिल्ली आई, राधिका के पांव धरती पर नहीं पड़ते थे।
कितनी आकांक्षा होती थी कि वह अपने आंगन में किसी को बहू
पुकारे। उसके आस-पास की स्त्रियां जब अपने पुत्र की बहू को
कर पुकारती, तब उसकी भी यह इच्छा होती कि राजेन्द्र का ब्या
हो जाए तब वह भी उसकी बहू को बहू कह कर पुकारे। वह
लिए कुछ-न-कुछ कहती रहती। कई बार श्री बाबू से झगड़
दूसरा ले लो बहू आ गई है क्या सोचती होगी। श्री बाबू भी
कहीं दूसरी जगह मकान ले लें तो अच्छा हो। परन्तु सब
सुन कर चुप हो जाते। कई बार उनका हृदय जल से नि
समान तड़प कर रह जाता। उसकी कभी-कभी असम
और कभी क्रोध भी।

आभा को घर का क्या करना। उसको तो अपने
वह सदा उसको प्रसन्न रखने का प्रयत्न करती रहती
अपने पति के पास रहकर उसकी सेवा-भक्ति
अवसर मिला था। जब राजेन्द्र सुबह सो कर नहीं
बना लाती। चाची सिर्फ पूजा करती, उनकी पू
देती। वह कितना मना करतीं परन्तु वह
जाती तब राजेन्द्र के काले-काले बालों में
लियां फेर देती। इससे राजेन्द्र की आंख
के मुख पर एक मुस्कान है, कितनी भो
अरे! तुम तो बड़ी जल्दी सो कर उठ
देने तो अभी मुंह भी नहीं धोया।
आनन्द आ गया था कि
जब सब मा

की स्मृति में जब कभी वह विलीन हो जाता, तब उसे ऐसा लगता कि वह इस विश्व में दूर बहुत दूर कहीं जा पहुंचा और फिर जब उसको सुध आती तब उसको ऐसा लगता जैसे कि कोई व्यक्ति सुन्दर स्वप्न देखता हो और उसे बलपूर्वक जगा दिया गया हो। कई बार सोचता कि वह आभा से प्रेम नहीं कर सकेगा। उसके पास हृदय नहीं जो वह आभा को दे सके। परन्तु जब कभी आभा को अपने लिए सब कुछ करते देखता तब वह न जाने क्यों कह देता कि आभा मैं तुमसे प्रेम करता हूं। ऐसा क्यों कर कह उठता है। राजेन्द्र जब कभी इस उलझन में फंस जाता। तब वह घण्टों ही उलझा रहता, परन्तु उत्तर रहित हृदय, निशा के मौन नीलाम्बर के समान रह जाता।

नीरा और आभा, एक चांद और दूसरी चांदनी एक सूर्य और दूसरी किरण, एक स्वर्ण दूसरी उसकी कान्ति, एक पुष्प दूसरी उसकी सुगन्ध. एक त्याग और बलिदान की पवित्र मूर्ति दूसरी सेवा व भक्ति की प्रतिमा। किसको उत्तम कहा जाये।

एक दिन राजेन्द्र जब लौटकर आया तब कपड़े उतारते समय आभा ने उससे कहा—

—मुझे आप पढ़ा दिया करिये।

—क्यों क्या तुमको रुचि है?

—हैं। मुस्कराकर आभा ने कहा।

—पढ़कर क्या करोगी?

—नौकरी?

—नौकरी—कहकर राजेन्द्र हंसा—तुम और नौकरी करोगी। इस घर की आज तक किस औरत ने नौकरी की है। पता है कोई सुन पर सुनेगा तो क्या कहेगा?

—नीरा दीदी कह रही थी कि समय बदल चुका है। आज का समय ऐसा खराब है जब कि स्त्री और पुरुष दोनों मिलकर ही निर्धनता का दुःख में सामना करें तब ही काम चल सकता है। इसके लिए दोनों ही कमायें। वह समय गया जब कि एक कमाता था और चार खाते थे। अब वह युग है जो कमाये वह खाये।

खाना खा लेने के पश्चात् राजेन्द्र कुछ पढ़ता रहता और आभा उसके सिरहाने बैठ कभी उसका सिर दबाती और कभी उसके बालों से खेलती रहती, कभी पांव दबा देती। राजेन्द्र कहता तुम दिन भर कोल्हू के बैल के समान जुटी रहती हो, बल्कि तुम्हारे पाव मुझको दबाने चाहिए और तुम उलटा मेरे दबाती हो। आभा कहती, मुझे जिस काम मे सुख मिलता है वही करती हूं। राजेन्द्र कभी-कभी पुस्तक बन्द कर पूछ बैठता, आभा क्या तुमको मुझसे प्यार मिलता है? आभा लाज से लाल हो उठती। वह कहता, बोलो। वह कहती, क्यों नही। कितना मिलता है, राजेन्द्र पूछता। आभा कहती, बहुत। आभा फर्ज करो यदि मैं किसी दूसरी लड़की के साथ प्रेम करूं? राजेन्द्र पूछ उठता। आभा मुस्कराकर कह देती, मुझे तो अपना प्रेम मिल जाता है। पुजारी फल चढाता है, वह कुछ पाता है या नही यह तो देवता की इच्छा पर निर्भर है कि जितना चाहे उतना दे। उसे तो उसी मे सन्तोष रखना चाहिए। राजेन्द्र इस उत्तर से कह उठता, आभा मैं तुमको अपना अधिक-से-अधिक प्रेम देने का प्रयत्न करूंगा। आभा कहती, वह तो मुझे मिलता है।

राजेन्द्र इस वार्तालाप से उलझ जाता था। आभा की सेवा व भक्ति ने उसके हृदय में न जाने क्या स्थान प्राप्त कर लिया है। वह कभी-कभी उसको इतना परिश्रम करते देख विचार उठता कि यह इतना क्यों करती है, इसी कारण कि मेरा प्यार इसको मिले, परन्तु इसने कभी नहीं मांगा। राजेन्द्र, उसके इतने असीम प्रेम, भक्ति व सेवा से डगमगा जाता और कभी-कभी वह अपने बाहुपाश मे उसे जकड़कर वह उठता, आभा मैं तुम्हारा हूं। और आभा के अग-अग खिल उठते। उसके दिन भर के परिश्रम की थकावट पल मे विलीन हो जाती। राजेन्द्र इतना कह तो उठता, परन्तु इसका हृदय विचारने लगता, नीरा—नीरा का क्या अधिकार नही? कभी-कभी वह आभा के सम्मुख वह शब्द आवेश में कह जाता जांकि बाद मे सोचता कि क्यों वह इतना कह देता है। क्या आभा से वह प्रेम करता है? हां, आभा तो अवश्य उससे करती है, उसको जी-जान से चाहती है। पर क्या वह भी चाहता है। लेकिन नीरा को कभी नही भुला सकता है। उसका प्रेम जब कभी उमड़ता है तब वेदना असह्य हो उठती है। अतीत के दिनों

की स्मृति में जब कभी वह विलीन हो जाता, तब उसे ऐसा लगता कि वह इस विश्व से दूर बहुत दूर कहीं जा पहुंचा और फिर जब उसको सुध आती तब उसको ऐसा लगता जैसे कि कोई व्यक्ति सुन्दर स्वप्न देखता हो और उसे बलपूर्वक जगा दिया गया हो। कई बार सोचता कि यह आभा से प्रेम नहीं कर सकेगा। उसके पास हृदय नहीं जो वह आभा को दे सके। परन्तु जब कभी आभा को अपने लिए सब कुछ करते देखता तब वह न जाने क्यों कह देता कि आभा मैं तुमसे प्रेम करता हूं। ऐसा क्यों कर कह उठता है। राजेन्द्र जब कभी इस उलझन में फंस जाता। तब वह घण्टों ही उलझा रहता, परन्तु उत्तर रहित हृदय, निशा के मौन नीलाम्बर के समान रह जाता।

नीरा और आभा, एक चांद और दूसरी चांदनी, एक सूर्य और दूसरी किरण, एक स्वर्ण दूसरी उसकी कान्ति, एक पुष्प दूसरी उसकी सुगन्ध, एक त्याग और बलिदान की पवित्र मूर्ति दूसरी सेवा व भक्ति की प्रतिमा। किसको उत्तम कहा जाये।

एक दिन राजेन्द्र जब लौटकर आया तब कपड़े उतारते समय आभा ने उससे कहा—

—मुझे आप पढ़ा दिया करिये।

—क्यों क्या तुमको रुचि है?

—हूं। मुस्कराकर आभा ने कहा।

—पढ़कर क्या करोगी?

—नौकरी?

—नौकरी—कहकर राजेन्द्र हंसा—तुम और नौकरी करोगी। इस घर की आज तक किस औरत ने नौकरी की है। पता है कोई घर पर सुनेगा तो क्या कहेगा?

—नीरा दीदी कह रही थी कि समय बदल चुका है। आज का समय इतना खराब है जब कि स्त्री और पुरुष दोनों मिलकर ही जिन्दगी का तूफान से सामना करें तब ही काम चल सकता है। इसके लिए दोनों ही कमाएं। वह समय गया जब कि एक कमाता था और चार खाते थे। अब तो युग है जो कमाए वह खाए।

—वह तो मैं जानता था कि नीरा ही तुमको ऐसी शिक्षा देती रहती है।

—क्यों, क्या खराब राय दी है?—नीरा ने प्रवेश करते हुए कहा।

—अरे, नीरा तुम?

—हां, क्यों क्या दोनों की बातों में बाधा डाल दी।

—नहीं, आइये—आभा ने कहा।

—क्यों आभा, तुमको नीरा पसन्द है?

आभा ने गर्दन हिलाकर 'हां' की।

—क्यों? राजेन्द्र ने पूछा।

—क्योंकि इनके विचार बड़े सुन्दर हैं। यह एक पथ-प्रदर्शक के समान है।

राजेन्द्र को आभा की सुन्दरता नीरा से अवश्य ही किसी समय अधिक दिखाई देती परन्तु उसे उसके आंतरिक सौन्दर्य की कमी सदा खटका करती। उसमें कोई विचारशीलता नहीं, कोई भावुकता नहीं। जो व्यक्ति अपने हृदय के विचार ही न व्यक्त कर सके वह किस काम का? उसका फूहड़पन सदा उसे खटका करता। जब कभी कोई गहन गम्भीर दार्शनिक तत्त्व उसके मुख से निकले तब आभा में उसकी अज्ञानता की झलक पाता। ह कभी चाहता था कि भावुकता से कोई उसके अन्तरतम में शान्ति दे रन्तु वह इस क्षेत्र तक सदा असफल रहती और नीरा कहीं इससे अधिक भावुक और कभी-कभी राजेन्द्र से भी अधिक थी।

—राज, तुम आभा को पढ़ाओ। अपने समान इसको भी बनाओ। जब दोनों रथ के पहिये बराबर होंगे तब ही तो रथ सरलता से चल सकेगा। इसको शिक्षा देकर उसके जीवन का अन्धकार हरण करो। राज, ताकि यह भी तुम्हारे समान विचार रख सके।

राजेन्द्र को ऐसा लगा कि नीरा ठीक कहती है। उसने विचारा कि यह मेरा ही दोष है। आभा के जीवन में अज्ञानता का गहन इन तिमिर को बिना दीप जलाये आलोक ढूंढना कितनी

ने कहा—

तुमको पढ़ाऊंगा आभा। आठवीं तक तुमने पढ़ाई की है। इस

वर्ष तुमको मैं दसवी की परीक्षा दिलवा दूगा।

—दसवी की ? आभा ने आश्चर्य से कहा।

—क्यो क्या हुआ, यह बड़े उच्च शिक्षक हैं। मीरा ने कहा।

—बैठो, तुम्हारे लिए चाय ले आऊ ! मीरा से आभा ने कहा।

—नही आभा, चाय नही पीऊगी। आज बहुत दिनो से जी कर रहा है। चलो रेलवे प्रदर्शनी देख आयें।

—जैसी तुम्हारी इच्छा—राजेन्द्र ने कहा।

—आप दोनों हो आइये।

—और तुम ? राजेन्द्र ने कहा।

—मै जरा चाची जी के साथ काम मे हाथ बटाऊगी वह भी क्या सोचेंगी कि घूमने चली गई।

—नही चलो आभा, यह ठीक बात नही। तुम सदा हम दोनो को भेज देती हो और स्वय घर मे पिसती रहती हो। इससे स्वास्थ्य खराब हो जायेगा। मीरा ने कहा।

—हा-हा चलो, आज किंगकांग और दारा सिंह की कुश्ती भी देखेंगे। —राजेन्द्र ने कहा।

—चाची से पूछ लू ?

—अरे, चाची कब मना करती है, लो चाय तो पी लो।

राधिका थाली मे तीन कप चाय लेकर आई।

—अरे चाची—आभा ने खड़े होकर कहा।

—तो क्या हो गया, यह तुम्हारा ससुराल नही। तेरी मा और मास दोनो का घर है। जाओ घूम आओ।

—चाची तुम भी पियो। मीरा ने कहा।

—अरे मै क्या अच्छी लगूगी तुम्हारे साथ चाय पीते।—कहकर राधिका चली गई।

—हा राज, मांजी की कैसी तबीयत है।

—बस बाबू जी का पत्र आया था कि उनको लेकर नये मकान मे आ गये है। पर वह गुमसुम रहती है और काम सब करती है। बस मुन्नू और बाबूजी को जानती है।

—अच्छा, नीरा ने चाय का प्याला मुख से हटाते हुए कहा।
—लिखा है यहां उनका इलाज चल रहा है अभी सुईयां लग रही हैं।
राजेन्द्र ने कहा।
—मांजी के साथ बुरा हुआ। नीरा ने कहा।
तीनों व्यक्ति चाय की प्याली खाली कर चुके थे। राजेन्द्र को वह अवसर बड़ा ही अच्छा लगता है जब कि नीरा और आभा दोनों ही उसके साथ होतीं। उसका हृदय न जाने क्यों सुख व आनन्द के हिलोरे लेने लगता है। कभी-कभी कह उठता था कि यदि तुम दोनों मेरे साथ रहो तब मैं विश्व के बड़े-से-बड़े तूफान का अकेले सामना कर सकता हूं। उस समय दोनों के अधरों पर मुस्कान की रेखा खिंच जाती, जिसको देख वह सब कुछ भूल जाता।

तीस

हरि बाबू ने नया मकान माईथान में लिया था। यह मकान उनके विद्यालय के पास पड़ता था। बाजार तथा अस्पताल के पास होने से उनको बहुत सुविधा थी। हरि बाबू प्रायः अपना मुंह लोगों से चुराया करते थे। सीधे ऑफिस जाते और घर आकर कहीं नहीं जाते थे। उन्होंने अपना शाम का घूमना भी बन्द कर दिया था। मन्दिर और कीर्तन में भी नहीं जाते। पास में कभी कीर्तन होता तो वह घर में ही बैठे-बैठे झूमा करते। उनका हृदय वहां जाकर सुनने को करता परन्तु फिर भी न जाते। घर में ही पड़े रहते और गंगा की देखभाल करते। मुन्नू को नहलाना तथा कपड़े पहनाना इत्यादि सब करते। गंगा का जब कभी मन होता तब तो खाना बना दिया करती, नहीं तो बेचारे स्वयं ही खाना बनाया करते। खाली समय में भगवान की मूर्ति के आगे लीन रहते थे। वह सुबह उठकर गीता और संध्या के समय रामायण अवश्य पढ़ा करते थे।

बाहर निकलते तो उनको लज्जा और ग्लानि दोनो ही होती। यह सोचते कि यही लोग उनको देख कर हसें नही और उनके ऊपर ताने न कसें। यहां तक कि यह उनका स्वभाव बन गया था कि कभी कोई व्यक्ति यदि उनके सामने हंसता, तब यह समझते कि हमारे ही ऊपर हंस रहे है। यदि कोई आपस मे उनके सामने धीरे-धीरे बातें करते, तब समझते कि उनके ऊपर कटाक्ष किया जा रहा है। कभी-कभी लोग उनसे पूछते कि आप की लड़की कैसे मर गई, उस समय उनका हृदय काप उठता। कॉलिज मे उनको हर समय यही भय रहता कि कोई उनकी चोरी के बारे मे प्रश्न न करे। हा, कभी कोई ऐसी बात हो जाती तब उनको इतना दु.ख होता कि वह उस दिन खाना तक नही खाते। उस समय कोई उनसे कहने वाला भी न था कि खाना खा लो। पत्नी घर मे थी, परन्तु उसको क्या पता कि क्या हो रहा है। बेटी के यह लिख कर रखने से कि आत्महत्या उसने की है और इसका दोषी कोई नही है, इससे हरि बाबू पुलिस के फन्दे से तो बच गये परन्तु समाज का फदा बड़ा कठोर था यद्यपि सत्येन्द्र जी ने स्वय भी बहुत प्रयत्न किया कि यह बात न फैले परन्तु फिर भी वह बास के वन मे फैलती हुई ज्वाला के समान इस बात को न रोक पाए। जो सुनता वह एक बार उनसे अवश्य पूछता, कहिए क्या हुआ उनका ? कोई मामला तो नही हुआ ? प्रबन्ध समिति ने कुछ किया तो नही आपके विरुद्ध ? यह प्रश्न बाण के समान उनके हृदय में चुभ कर रह जाते। यद्यपि दिखावे मे सब सहानुभूति के हेतु पूछते, परन्तु उनमे वास्तविक सहानुभूति का नाम तक न था।

कभी-कभी वह भी अपने हृदय मे उल्टी-सीधी बाते सोचने लगते। वह सोचते कि समाज मे कलंकित होकर रहने से क्या लाभ ? इस प्रकार से ताने कब तक सहन करते रहेगे ? परन्तु उस समय उनको ध्यान आता कि यदि वह कुछ कर लें तो नन्हे अबोध बालक और अज्ञानी पत्नी का क्या होगा ? उनको कौन देखेगा ? कभी-कभी अधीर हो जाते और अपने को सान्त्वना देने के लिए उस समय मौन मूर्ति के सम्मुख बैठे रहते।

एक दिन जब वह प्रधानाध्यापक के कमरे में कागज लेकर उनसे हस्ताक्षर कराने गये उस समय उनसे सत्येन्द्र जी ने कहा—बड़े बाबू, जब से दुर्घटना हुई है मैं आपको अधिक गम्भीर और शरीर मे घुलता हुआ देख

रहा हूं।

—नही तो साहब।

—मैंने आपके केस के लिए सदस्यों मे अत्यन्त प्रयत्न किया। वे लोग इस पर तुले हुए थे कि इनको यदि पुलिस में न दिया जाये तो हटा दिया जाये। पर मैंने उनसे कहा कि यदि ऐसा किया जाएगा तब एक दुःखी पर अत्याचार करना होगा।

—क्या निर्णय हुआ साहब?

—आपको मैंने अपनी जमानत पर रखा है। वे लोग इसी बात पर माने हैं। मुझे आशा है कि जो कुछ हो गया है उसे आप भूल जायेंगे।

—आपने मेरे लिए इतना किया इसका मैं जीवन भर आभारी रहूंगा।

—बडे बाबू, आप भी क्या बात करते हैं। आपका तो इस विद्यालय से उस समय से सम्बन्ध है जब कि इसकी नींव खुदी थी। आज आपके हाथ से लगाया गया वृक्ष इस प्रकार से फूल-फल रहा है तथा इसका ना[illegible] [illegible] प्रकार से फैल रहा है तब क्या यह विद्यालय आपके लिए इतना [illegible] [illegible] कर सकता है।

हरि बाबू चले गये। जिस प्रकार से ग्रीष्म ऋतु की कड़ी धूप में जिह्वा [illegible]काले हांफता हुआ प्यासा कुत्ता एक वृक्ष की छांह मे शीतलता का अनु[illegible]व करता है, उसी प्रकार से उनको भी सत्येन्द्र जी की बातों से हुआ।

हरि बाबू के पीछे मुन्नू घर से चला जाया करता था। बाहर मोहल्ले के लड़कों के साथ दिन भर खेला करता था। उसने उनमे गन्दी-गन्दी गालियां सीख ली थी। इसके अतिरिक्त वह बाजार में तांगों और मोटरों के पीछे भागा करता था। वह छः वर्ष का हो गया था, परन्तु उसकी शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया। हरि बाबू कई बार सोच-सोच कर रह जाते थे कि इसका कोई प्रबन्ध करना चाहिए। एक दिन वह उसको पास के बच्चों के एक विद्यालय मे ले गये। वहां उस विद्यालय की प्रधानाध्यापिका ने कहा—

—शान्ति, इस बच्चे को देख लीजिये।

शान्ति हरि बाबू को लेकर पास के कमरे में आई। उसमें मुन्नू [illegible] आयु के अनेकों बच्चे बैठे थे। सब अपनी-अपनी बातों में मग्न थे, [illegible]

किसी को चिढ़ा रहा था तो कोई किसी को मार रहा था, कोई गा तो कोई रो रहा था। अजीब वातावरण था। जिसको देखकर वहां जाने वाले व्यक्ति भी अपनी उस अवस्था को एक बार झाकने का प्रयत्न करता है। उस समय उसका हृदय उस शैशव के लिए तडप उठता है।

कमरे के बाहर बरामदे मे हरि बाबू आ गये। शान्ति ने कहा—

—यह बच्चा आपका है ?

—जी।

—पहले शिक्षा पाई है ?

—नही।

—काफी बड़ा हो गया है, इसकी तो शिक्षा का प्रबन्ध करना चाहिए था।

—देखे कौन ? मां का दिमाग फिर गया है, बेटी थी वह भी इस ससार मे न रही। देखती नही, इतना सब कुछ करने पर बिना मा का बेटा-सा लगता है।

—आप बड़े बाबू तो नही ?

—हा, वही नादान हूं।

—राजेन्द्र के पिता।

—हां, वही बदनसीब।

—आप ऐसे हताश क्यों होते हैं, आप कहा रहते हैं ?

—अब तो माईथान मे आ गया हूं। वह मकान छोड़ना पड़ा।

—मैं भी वही रहती हू। इसको घर भेज दिया करिये कुछ घर मे देख लूगी।

—हा ठीक है। जैसी आपकी इच्छा। हा, आप रज्जू को कैसे जानती है ?

—नीरा मेरी बेटी है—शान्ति अपनी हृदय की कसक को न दबा सकी।

—नीरा ! हरि बाबू को आश्चर्य के साथ शोक भी हुआ। समझ गये कि यह वही नीरा है, जिसके लिए राजेन्द्र कह रहा था परन्तु वह अपनी जिद मे उसकी कुछ न सुन सके। उन्होंने कहा—

—मेरे ही कारण उस पर यह अत्याचार हुआ इसका दुःख मुझे जीवन भर रहेगा। इसी अत्याचार का भुगतान मैं भुगत रहा हूं कि बेटी मर गई और पत्नी पागल हो गई।

—आप भी कैसी बातें करते हैं ? आप तो समझदार हैं। मनुष्य की परिस्थितियां उससे क्या नहीं करा लेती हैं। आपने जो किया, एक बाप के नाते ठीक किया। जो कुछ हुआ उसमें सन्तोष रखने में ही मनुष्य की आत्मा को शान्ति मिलती है।

—आपके विचार बहुत पवित्र हैं।

शान्ति चुप हो गई। हरि बाबू कुछ देर तक चुप रहे फिर मौनता को भंग करते हुए बोले—आप रम्मू की चाची हैं क्योंकि नीरा उस दिन घर आयी थी तो उसने उसको चचेरा भाई बताया था।

—हां, रम्मू वास्तव में बड़ा अच्छा लड़का है। उस दिन घर आया तो कह रहा था—चाची मुझे बड़े बाबू की दशा देखकर दया आती है। एक लड़की के बाप को भी कैसा भार उठाना पड़ता है। तुम्हारी राय हो तो मां से बात करना।

—तो क्या रम्मू ने विवाह की ओर जोर दिया ?

—हां।

—फिर मैंने बड़ी भूल की। उससे विवाह से पहले मिलता जाकर। ो सकता था कि वह बिना दहेज के मान जाता। आज भी मैं उससे मुंह छपाता फिरता हूं।

—उसी दिन मुझसे कह रहा था कि चाची संसार में रूपवान की ओर सब दौड़ते हैं फिर रूपवान रहित का क्या होगा ! क्या उनको जीवित रहने का अधिकार नहीं ?

—वास्तव में ऐसे विचार आज के युग में मिलना कठिन है।

हरि बाबू का इन बातों से पुराना घाव खुल गया था। उन्हें अपने आप पर क्रोध आ रहा था। कि विवाह से पहले राजेन्द्र के मिलते। उसकी खुशामद करते। सिर की टोपी उसके पांव पर रख देते। गिड़गिड़ाते। भी मांगते। क्या कारण था कि वह नहीं मानता। उसका हृदय अवश्य द्रवि हो जाता और विवाह के लिए तैयार हो जाता। फिर इस हत्या का

उनके सिर न पर आता।

शान्ति ने उनके मुख पर दुःख के चिह्न तथा चिन्ता की ज्वाला का वेग देखा, उसने बात बदल कर कहा—

—मैंने सुना है कि रज्जू की बहू इस वर्ष दसवीं की परीक्षा दे रही है।

—हां पत्र तो आया था। उसने लिखा है बाबू जी मैं जितना इसको बुद्धि रहित समझता था उतनी वह है नही। उसको शिक्षा न देने का दोष हम ही लोगो पर है, नही तो उसकी प्रखरता मुझसे भी तीव्र है। एक बार जो पढ़ लेती है फिर भूलती नही। इस कारण उसके हृदय की इच्छा पूर्ण कराने के लिए मैं परीक्षा दिलवा रहा हू।

—अच्छा है, आज के समय मे दोनों का पढ़ा-लिखा होना जरूरी है।

हरि बाबू के हृदय-पटल पर जो अतीत के चित्र सजीव हो रहे थे उसके कारण उनका वहा एक पल खडा होना एक कल्प के समान लग रहा था, वह वहा से चल दिये उन्होने शान्ति से विदा मागी और उनसे कभी-कभी घर आने को कहा।

इकतीस

—अब क्या विचार है?—कपूर ने राजेन्द्र से कहा।

—अंधेरा है। अंधेरा ही अंधेरा है समझ मे नहीं आता है।

—तब ही न कहते थे कि सरकार किसी की सगी नही। जो कुछ भरना है भर लो, रुपये कुसमय काम आयेंगे। उस समय तो बच्चू आदर्श मे मर रहे थे।—वैजल ने कहा।

—मेरा विचार इम्पलायमेन्ट एक्सचेन्ज (काम दिलवाने का कार्यालय) मे अपना नाम दर्ज कराने का है।—राजेन्द्र ने कहा।

—बच्चू, सुबह से लेकर शाम तक लाईन मे खड़े रहोगे तब भी नम्बर

नहीं आयेगा । अरे मुझे तो कार्ड लेना था वहां से, एक बड़े अफसर जानने वाले थे उनके यहां कुछ जगह खाली थी उन्होंने कहा कि वहां से कार्ड लेकर दे दो । अजी उस कार्ड लेने के लिए दो रुपये की घूस दी तब मिला।
—सक्सेना ने कहा ।

—सक्सेना, ऐसा अंधेर दिल्ली में नहीं हो सकता यह भारत की राजधानी है ।

—ओह हो, आपने अभी दिल्ली देखी नहीं । यहां के बड़े-बड़े अफसर सौ-पचास की ओर देखते ही नहीं । लाख-दो लाख से कम तो उनके गले से नीचे उतरते नहीं । कपूर ने कहा ।

—मैं नहीं विश्वास करता ।

—तुमको सिन्दरी के केस 'जीप के केस' का पता नहीं कितने लाख का गबन है । पता लगता है कि तुम समाचार पत्र ही नहीं पढ़ते ।

—मेरी समझ में नहीं आता क्या करूं ।

—भई हम तीनों तो दो-दो हजार रुपया लगा रहे हैं, बम्बई में व्यापार करने का विचार है ।

—किसका ?

—शराब का । बाहर से लाकर लोगों को देने का । कपूर ने कहा ।

—वहां तो शराब पीना और बेचना मना है ?

—बड़े भोले हो, उसी में तो आमदनी अच्छी होगी । एक बोतल 50 रुपये की बिकेगी ।—बंजल ने कहा ।

—ब्लैक करोगे ?

—हां तुम चाहो तो तुमको भी शामिल कर सकते हैं, मासिक वेतन और कमीशन पर । सक्सेना ने कहा ।

—नहीं, मैं काली कमाई न करूंगा ।

—तो क्या भूखे मरोगे । अरे, आज के समय में कोई चालीस रुपये में भी नहीं पूछेगा । तेरी बीवी है कल को बच्चे होंगे तो उनको क्या जहर दे देगा ।

—हां, पर मैं काली कमाई नहीं करूंगा ।

—बड़े देखे हैं आदर्शवादी, चल भाई बंजल ।—कपूर बोला—बीसवीं सदी में हरिश्चन्द्र ने जन्म लिया है ।

तीनों चले गये परन्तु राजेन्द्र के हृदय में तूफान उठ रहा था। सामने एक गहरा अन्धकार था। रार्शानग टूटने की सूचना दे दी गई है, वह क्या करेगा। तीन महीने के अन्दर उसको दूसरी नौकरी ढूढनी है यदि इसके अन्दर नहीं मिली तो वह क्या करेगा। अकेले उसके पिता कैसे दो व्यक्तियों का भार उठा सकेंगे। वह ही समस्त लुडलो कैंसिल्स मे एक तूफान सा आया था। चपरासी, क्लर्क, इन्सपेक्टर सब के ही मुख पर यही भाव थे अब क्या होगा ? जिस छत के नीचे उन्होंने पाच-दस साल काटे, आज वही से ढकेल दिया जाय तब वह कहा आश्रय ढूढेगे। किसी का अपने बाल-बच्चो के लिए रोना था। किसी का बहिन, भाई के जीवन का प्रश्न था, किसी का बूढ़ी मा और बीमार बाप का कैसे निर्वाह होगा आगे ? कैसे वह अपनी गृहस्थ समस्या को सम्भालगे ? जहा पर बाबू लोग धुआ उड़ाते निकलते चले जाते थे, वहा आज सब के मुख पर ऐसे चिह्न थे जैसे कि कोई उनके निकट सम्बन्धी की मृत्यु हो गई है। राजेन्द्र ने सोचा कि आचार्य साहब के पास चले, वह ही कदाचित सहायता करें। वह उनके कमरे की ओर जा रहा था कि सामने गोस्वामी जी आते मिल गये, बोले—राजेन्द्र, हम तो कही के नही रहे। अब क्या होगा ! वैसे ही महीना दिन गिनते कटता था अब क्या होगा !—गोस्वामी बाबू की आखों मे पानी था।

—सच गोस्वामी बाबू, हम बाबू लोगों के पास इतनी सम्पत्ति कहा कि दो महीने भी बैठकर खा सकें। वेतन इतना मिलता नहीं कि महीने का गुजर अच्छी तरह हो जाये। साथ-साथ उस पर यह भी कहा जाता है कि ईमानदारी से रहो। कैसे एक व्यक्ति सत्य के मार्ग पर चलता हुआ 140 रुपये में से अपने परिवार को खिलाता-पिलाता, कल के लिये दो पैसे रख सकता है। उनके लिए बीमारी तक को तो पैसे रहते नहीं, यदि चार दिन बीमार पड जायें तो उधार मागना पडता है। राजेन्द्र ने कहा।

— अरे मैंने तो जब से सुना है तब से खाना तो दूर रहा पानी तक एक घूट नही पिया है। पत्नी दिल की मरीज है यदि उसने सुन लिया तो उसका क्या होगा ! और कही वह छोड़ कर ससार से चल दी तो दो छोटे बच्चों को कौन देखेगा।—गोस्वामी बाबू के बराबर बैठे बाबू ने कहा।

—जैन बाबू, तुम्हारी ही नही, हम सब की एक जैसी समस्या उलझी

है, जिसको सुलझाना कठिन है। जब हमने नौकरी का सोचा कि यह सरकारी नौकरी है सुनते थे कि जब यह विभाग टूटेगा तब सरकार दूसरी जगह नौकरी दे देगी। अब यह उत्तर मिलता है कि तीन महीने में दूसरा ठिकाना ढूढ लो। गोस्वामी बाबू ने कहा। चश्मा उतार कर उन्होंने धोती के एक कोर से अपनी आंखों का पानी पोंछ डाला।—सरकार भी क्या करे, इतने लोगों को कहां से और कैसे नौकरी दे?—राजेन्द्र ने कहा।

—तो फिर हम कहां जायें, अपने पेट में पत्थर डालें अथवा गला घोंट लें या जहर ले लें। यदि इसी प्रकार से विभाग टूटते गये, बेकारी बढ़ती गई तब इसमें कोई शक नहीं कि भारत भी एक दूसरा रूस अथवा चीन हो जायेगा।—गोस्वामी बाबू ने कहा।

—क्या कहते हो, सरकार के विरुद्ध ऐसे विचार। यह वह सरकार है जिसने हमको परतन्त्रता के बन्धन से मुक्त कराकर स्वतन्त्रता का पथ दिखलाया है।

—सरकार'''कह कर गोस्वामी बाबू मुस्कराये, कितना विषाद भरा था उसमें। देख तो रहे हो कि राष्ट्रीय सरकार ने हमारा क्या हाल कर डाला है। हृदय से जब दुःख की हाय उठती है तो क्या करें।

राजेन्द्र वहां से उठ कर आचार्य साहब के कमरे में चला गया। आचार्य साहब कुछ लिखने में व्यस्त थे। राजेन्द्र को सामने खड़ा कर बोले —आओ राजेन्द्र आओ।—उन्होंने राजेन्द्र को सामने एक कुर्सी पर सकेत करते हुए कहा, राजेन्द्र उस पर बैठ गया। वह कुछ देर तक किसी कागज पर लिखते रहे फिर उसके बाद उन्होंने गर्दन ऊपर उठाई और कागज के ऊपर शीशे का पत्थर रख दिया। फिर कुर्सी पर आराम से पांव फैलाते हुए कहा—

—कैसे आये?

—साहब, आपको तो पता होगा कि हम लोगों पर क्या बीत रही है उसका शिकार मैं भी हूं।

इसका मुझे वास्तव में दुःख है कि हमारी सरकार के पास कोई ऐसा नहीं जिससे तुम लोगों को एकदम नौकरी पर लगा लिया जाये। मैं होता और मेरे हाथ में कुछ होता तब फिर तुम जैसे ईमानदार

व्यक्ति को मैं कभी नहीं छोड़ता।

—साहब, फिर कुछ गुजारे लायक काम का तो प्रबन्ध हो सकता है।

आचार्य साहब कुछ देर सोच कर बोले—ठीक है, पर तुम वह काम करना पसन्द नहीं करोगे। तुम अखबार बांटने का काम करोगे। 50 रुपये मिल जायेंगे। कुछ समय बाद तुमको प्रेस में कुछ काम करने का स्थान मिल जायेगा।

राजेन्द्र साहब के मुख से यह बात सुन कर अवाक् हो गया। उसकी आंखों के आगे साइकिल पर दौड़ते हुए बहुत से अखबार बेचने वालों में से एक का चित्र खिंच गया। लोग अंगुलियों से बुलाते 'अखबार वाले' 'अखबार वाले' और दो आना पाकर उसकी दृष्टि ऐसी ही हो जाती है जैसे कि कुबेर की सम्पत्ति पाली हो। यह भी कोई नौकरी है। उसने सोचा था कि वह सब-इन्सपेक्टर रह चुका है लोग उसको सलाम करते हैं यदि राशन की दुकान पर पहुंच जाता है तब उसकी कितनी आव-भगत होती है। लोग कार्ड *लेकर जब यूनिट बढ़वाने आते हैं तब उस समय बड़े से बड़ा आदमी उसके* सामने झुक जाता है। चाहे तो वह उनको चार-चार, पांच-पांच रोज तक अपने चक्कर कटवा सकता है कितना आदर-सत्कार तथा सम्मान है। कहां सब-इन्सपेक्टरी और कहां 50 रु० का अखबार बेचने का काम। क्या तुलना है दोनों में। लोग उसको यह काम करते देख क्या कहेंगे? चाहे भूखा मर जायेगा, परन्तु यह काम न करेगा।

राजेन्द्र को इस प्रकार चुप और कुछ विचारते देख आचार्य साहब बोले—

—देखो समय काफी है, तीन महीने है इसके अतिरिक्त छः महीने और है यदि इस समय के भीतर तुमने कोई सरकारी नौकरी पा ली तब यह पुरानी नौकरी भी उसमें जुड़ जायेगी। मेरे विचार से तुम प्रयत्न करो अवश्य मिल जायेगी।...जी, पर आज कल सुनते हैं कि बिना जान-पहचान के कुछ काम नहीं निकलता है साहब, यहां तो सात जन्म आस-पास कोई भी परिवार का ऐसा व्यक्ति नहीं जो कि उच्च पदाधिकारी हो और मेरे लिए इस क्षेत्र में सहायक हो सके। राजेन्द्र ने दबे स्वर में कहा।

—सच है राजेन्द्र, हम स्वतन्त्र हो गये है पर अभी तक हम में

राष्ट्रीयता के भाव नहीं उपजे हम में अपनी मातृ-भूमि के लिए त्याग और उसके ऊपर मर-मिटने की भावना नहीं आई है। प्रत्येक व्यक्ति अपना स्वार्थ, अपने परिवार का स्वार्थ, अपने जाति व सम्प्रदाय का स्वार्थ देखना चाहता है। कभी कोई यह नहीं सोचने का प्रयत्न करता कि उन सबके ऊपर हमारा राष्ट्र भी है, जिसका जन्म हुए कुछ ही वर्ष हुए हैं। लोग अपने जेबें भरनी जानते हैं, राष्ट्र को बनाना नहीं। आचार्य जी गम्भीर भाव कह रहे थे।

—जी।

—आज आवश्यकता इस बात की है राजेन्द्र, कि लोग राष्ट्र के लिए कुछ करें, अपने लिए नहीं, देखते नहीं अंग्रेज अपने इंगलैंड के लिए क्या नहीं करते? पर हम अभी तक इसी में पड़े हैं। वे लोग राष्ट्र की एक-एक पाई जिस पर उनका अधिकार नहीं है, लेना पाप समझते हैं और उसको हम अपना अधिकार समझते हैं। वे लोग भूखे रहना और मरना ठीक समझेंगे, परन्तु राष्ट्र के नाम पर किसी प्रकार का भी काला दाग नहीं लगायेंगे। आचार्य साहब ने एक गिलास पानी जो सामने रखा था उसमें से चार घूंट पी और उसे वहीं रख दिया फिर बोले—

—तुम अपने घर का पता छोड़ जाओ यदि मैं सहायता कर सका तो अवश्य करूंगा और तुमको सूचित कर दूंगा।

—आपकी बहुत मेहरबानी।

राजेन्द्र अपना पता देकर वहां से बाहर आया। उसके मस्तिष्क में अनेक विचार उठ रहे थे। सामने उसे नीरा आती हुई दिखाई दी। उस उसे आवाज देकर रोका।

—कहो राज, क्या बात है?

—कुछ नहीं नीरा, क्या तय किया अब क्या विचार है?

—मैं तो माता जी के पास जाने की सोच रही हूं, वहीं उनके स्कूल नौकरी कर लूंगी। मामा की बदली जबलपुर हो गई है।

—अच्छा है, लेकिन मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा है कि मैं क्या करूं। आचार्य साहब से मिल कर आ रहा हूं।

—क्या कहा उन्होंने?

दोनों आगे बढ़ते जा रहे थे।...वह बोले कि मैं तुमको अखबार बेचे

का काम दिलवा सकता हूं।

—क्या पागल हैं वह, उन्हें कहते लाज नहीं आई। एक सब-इन्सपेक्ट

और उनसे क्या काम के लिए कह रहे हैं। किसी चपरासी से भी कहते

तो वह दो बार सोचता।

—मैं क्या करूं ?

—मेरे विचार से तीन महीने समाप्त करके आगरे चलो। वहां बा

जी का हाथ बटाना और कोई नौकरी ढूंढ लेना।

—यही मैं सोच रहा हूं।

उसके हृदय में अनेक प्रकार के विचार उठ रहे थे। चिन्ता की उत्ता

तीव्र थी कि अब क्या होगा ? कहां नौकरी मिलेगी ? जब तक नौकरी न

मिलेगी वह क्या खायेगा ? कैसे घर का काम चलाएगा ? बूढ़े बाप का क्

होगा वह क्या दो और व्यक्ति का भार उठा सकेंगे जब कि उनको वह का

जो वह भेजता है, वह भी बन्द हो जायें।

—किस अपराध में।

—सूती मिल के मजदूरों के हड़ताल के सिलसिले में।

—तो आप राजनैतिक बन्दी है ?

—हां, और तुम ?

—मैंने एक सेठ का खून किया, पर वह बच गया और मैं पकड़ा गया। मैंने अपना कसूर मान लिया इसी कारण कम बीती।

—तुमने उसको लूटने का क्यों प्रयत्न किया ?

—मेरे दोस्त की शादी के लिए पांच हजार की आवश्यकता थी और यदि रुपये न मिलते तो एक लड़की के जीवन का प्रश्न था। अब न जाने कहां होंगे बेचारे पता नही उनका विवाह भी हुआ होगा या नही।

—क्या नाम है तुम्हारा ?

—मुझे अमृत लाल दीवान कहते है।

—तुम सूरत से तो कोई चोर या डाकू नही लगते हो बल्कि किसी अच्छे परिवार के लगते हो ? 'अच्छे परिवार' कह कर अमृत हंसा।

आजाद का रंग काला, कद लम्बा और भरा हुआ शरीर, अंगारे के समान सुलगती हुई आंखें, जब बोलते तब ऐसा लगता कि शोले उड़ते हों और आयु चालीस से ऊपर, सिर पर छोटे बाल तथा जेल में रहने के कारण बढ़ी हुई दाढी उनके मुख पर एक आतंक था। उन्होंने अमृत को बड़ी देर घूरने के बाद कहा।

—तुम यही कहना चाहते हो न कि परिवार का अच्छा या बुरा होना, धन के होने या न होने पर निर्भर है। मनुष्य का चरित्र उसके गुण तथा उसके धन पर आधारित है। पूंजीपति का पाप भी पुण्य है और निर्धन का पुण्य भी पाप है, लेकिन इसका दोषी कौन है, कभी यह सोचने का प्रयत्न किया ?

—यही, हमारा समाज।

—समाज, समाज क्या है ? हम और तुम मिलकर समाज बनाते हैं और समाज में अधिक संख्या उन लोगों की है, जो कि पूंजीपति द्वारा शोषित किये जाते है। फिर क्यों नही वे अपना समाज अपने अनुसार बना लेते हैं ! क्या कारण है कि संसार के मुट्ठी भर पूंजीपतियों ने असंख्य

व्यक्तियों का शोषण किया हुआ है ! 'नहीं' अमृत को आजाद के विचार में कुछ रुचि हुई । वह पास के पत्थर पर उनके साथ बैठ गया ।

—इसका मुख्य कारण है शक्तिहीनता, शोषित वर्ग में एकता नहीं है उनकी छिन्न-भिन्नता ही आज पूंजीपतियों का सिर ऊंचा किये हुए है और जहां उनको एक करने का प्रयत्न किया जाता है, वहां समस्त पूंजीपति वर्ग एक होकर उनके नाश पर तुल जाता है । हम में शक्ति है । लेकिन फिर भी हम उसका उपयोग नहीं करते आजाद ने कहा और पत्थर से उठकर कहा कि हम लोगों का जीवन इस पत्थर के समान है, हम दूसरे के हाथों में बिके हुए है, हम से हमारे जीवन का प्रकाश छीन लिया गया है । रहने के लिए टूटी झोपडी और वमन के लिए गन्दे नाले, उसमे पलने वाला व्यक्ति क्या जीवन का सुख जानेगा ! जिसको ग्रीष्म की ग्रीष्मता, शीत की शीतलता, बरसात की वर्षा का सामना करने की समस्या रहती है जिसे आज है तो कल खाने की चिन्ता खाए जाती है, उसको कहां इतना अवकाश है कि वह यह विचारे कि क्या आदर्श होता है, क्या भाव क्या चरित्र होता है ।

—आपके विचार वास्तव में विचारणीय है । आप बड़े भावुक हैं । अमृत ने कहा—हमको अपने ऑफिस की घिस-पिस से इतना अवकाश कहां मिलता है कि इन विचारों की ओर भी झुक सकें । हम जानते हैं कि विचार अच्छे आदर्श है । फिर एक दिन भर का थका-मादा आदमी कुछ मनोरंजन चाहेगा । उस क्षणिक मनोरंजन में लिप्त हम को विचारने का अवकाश कहां मिलता है ? हां, अवश्य उनकी रंगीन दुनिया, जो उन्होंने ऊंचे महलों व होटलों में बनाई है, कभी-कभी देखने का अवकाश मिला । उनको देख कर हृदय कसक कर अवश्य रह जाता है क्या उन पर हमारा अधिकार नहीं । हम अपना क्षेत्र अत्यन्त सीमित व संकुचित पाते है और कभी उसको पार करने का प्रयत्न भी करते हैं ! अमृत ने कहा—हमारे भारत का मध्यम वर्ग जो कि शोषित वर्ग से किसी दशा में कम नहीं है पर फिर भी उनकी भावना सदा उच्चतम की ओर रहती है । वे अपनी दुनिया भी उनके समान रंगीन बनाने का प्रयत्न करते हैं । परिणाम यह होता है कि जैसे-जैसे एक वर्ग बढ़ता जाता है वे नीचे गिरते जाते है । उनकी प्रगति नीचे की ओर होती जाती है । आजाद साहब ने चारों ओर देखा कि कोई है तो नहीं, फिर

उन्होंने कहा—आज आवश्यकता इस बात की है कि मध्यम वर्ग शोषित वर्ग के कन्धे से कन्धा भिड़ा करके अपने अधिकारों के लिए संघ करे।

—आजाद ने सामने से वार्डर को आता देख कर बात ही बदल दी, बोले—

—तुमको पता है दिल्ली सरकार ने राशन तोड़ दिया है। आज तीस अप्रैल से कोई राशन नहीं रहेगा और न राशन विभाग। लोगों को आराम तो हो जायेगा। काफी रुपया ब्लैक और परमिट से कमा करके लोग अमीर हो गये थे।

—क्या कहा राशन विभाग टूट गया? अमृत ने चौंक कर कहा जैसे कि स्वप्न से जाग गया हो।

—हां, तुम को पता नहीं, कल वार्डर लोग आपस में बात कर रहे थे।

—राजू और नीरा का क्या होगा। वे कहां भटक रहे होंगे। काश, मैं भी यदि बाहर होता तो उनकी सहायता अवश्य करता।

—कितनी मियाद और है?

—सात महीने।

—मेरा एक महीना और रह गया है। यदि मैं बाहर गया तो अवश्य ही तुम्हारे बारे में उनसे कह दूंगा। तुम मुझे पता दे देना।

—नहीं, यदि आप मेरे बारे में कह देंगे तो उसकी चिन्ता और बढ़ जायेगी।—फिर कुछ देर चुप रहा और बोला—नहीं, यदि मिलें तो कह दीजियेगा कि मैं जेल में आराम से हूं। छूटते ही मिलूंगा।

वार्डर पास आ चुका था उसको देख कर मूछों पर ताव देते हुए बोला—

—नेता जी, क्या षड्यन्त्र बनाया जा रहा है?

—कुछ नहीं।

—चलो फिर छः बज रहे हैं अपने-अपने सेल में चलो। यहां इतनी दूर अकेले बैठे क्या कर रहे थे?

—कुछ नहीं!

दोनों उठ कर उसके पीछे चल दिये।

अमृत आकर अपने सेल में बैठ गया था। 14 नम्बर का सेल था। एक छोटी-सी कोठरी जो रात में अत्यन्त भयानक लगती थी। राशन टूटने के समाचार ने उसके मस्तिष्क से आजादी की बात भी निकाल दी थी। वह उसकी ओर कुछ न सोच सका। उसके मस्तिष्क में यही घूमने लगा कि नीरा और राजेन्द्र कहां होंगे? उसने जब जेल में पग रखा था तब ही उसे अपने विषय में यह अनुमान हो गया था कि उसके हाथ से सरकारी नौकरी गई। इस कारण वह अपने बारे में चिन्तित न था। उसको वैसे ही सदा यह चिन्ता लगी रहती कि राजेन्द्र और नीरा का क्या हुआ होगा क्या राजेन्द्र ने इतने साहस से कार्य किया होगा? क्या उसने अपने पिता की आज्ञा का उल्लंघन कर विवाह किया होगा? क्या राजेन्द्र ने अपने पिता की इच्छानुसार विवाह कर लिया होगा? यदि हां, तो नीरा का क्या होगा। एक नारी जिसने जीवन में प्रथम बार प्रेम किया और वह प्रेम भी उसे विषपान करना पड़ा हो तो उसके हृदय में क्यों न कसक उठती हो। नीरा उस कड़वी घूट को मुस्करा कर क्या पी जाती होगी। क्यों नहीं, भारतीय नारी तो दुःख सह कर भी मुस्कराना जानती है। हमारे समाज में कितने विवाह इच्छा के विरुद्ध होते हैं, लेकिन स्त्री को फिर भी अपने पति के अनुसार अपने को बनाना पड़ता है।

फिर उसके हृदय में विचार आता कि नहीं, नहीं राजेन्द्र इतना दुर्बल नहीं, उसने कदापि नीरा का साथ न छोड़ा होगा। नीरा का प्रेम बन्धन तोड़ना सरल नहीं। उसने कितनों को प्रेम करते देखा, परन्तु उसके समान नहीं। कभी-कभी उसका हृदय चाहता कि वह जेल की इन दीवारों को तोड़ कर बाहर निकल कर नीरा और राजेन्द्र को देखे। उसके हृदय में एक कसक उठती परन्तु वह विवश था। वह इस बन्धन से कैसे मुक्त हो सकता था, वह बन्दी था।

वार्डर आया तो अमृत ने उससे कह दिया कि भाई भूख नहीं है तथा अपना बिस्तर बिछा कर लेट गया। इतनी गर्मी थी और वह बेचारा पड़ा पड़ा था। कहां वह एक स्वच्छन्द उड़ता हुआ पंछी जिसका किसी से सम्बन्ध नहीं, जिसकी उन होटलों और सिनेमाघरों के बदले, जो सदा आनन्द की लहरों में बह न रहा, जिसने अपने जीवन का ध्येय ही मनोरंजन बना रखा

तैंतीस

राजेन्द्र ने दिल्ली में तीन महीने खाक छानी। वह रोजाना सुबह साइकिल लेकर निकल जाता और शाम को जब लौट कर आता उस समय आभा उत्सुकता से द्वार खोलते हुए पूछती कुछ हुआ। उस समय एक मुरझाये पुष्प के समान जिसकी पंखुड़ियां बिखरने ही वाली हैं अपने मुख से कहता नहीं आभा। आभा कहती तो क्या हुआ, घबराते क्यों हैं फिर मिल जायेगी वह उसे ले जाकर हाथ-मुंह धुलवाकर खाने पर बैठाती। उस समय खाना देख कर उसकी खाने की तबीयत न करती लेकिन आभा उसे ढाडस देकर खाना खिलाती और कभी-कभी स्वयं भी अपने हाथ से खिला देती। रात में जब वह लेट जाता उसका मन बहलाने तथा चिन्ता को दूर करने के लिए अनेक प्रकार की इधर-उधर की बातें करती जिससे राजेन्द्र किसी ... में इस ज्वाला से दूर रह सके। जब तक राजेन्द्र सो नहीं जाता वह

उसके पास बैठी उसके सिर के बालों से खेला करती थी। फिर वह सोने से पूर्व एक बार नीले आकाश की ओर हाथ उठा कर कहती, हे भगवान्, हम गरीबों पर दया करना। उसके उठे हाथ सदा उठे रह जाते। तारे आनन्द नृत्य करके उसके दुःख का उपहास करते। उसके नयन डबडबा जाते और एक बार चिन्ता ग्रसित होकर वह अपने पति की ओर मुड़ जाती। उसका जी चाहता कि वह उससे लिपट कर खूब रोये, परन्तु फिर भी वह अपनी कमज़ोरी उसके सामने प्रकट करना न चाहती थी। उसको सदा किसी-न-किसी प्रकार से आश्वासन देती रहती।

श्री बाबू ने राजेन्द्र से बहुत कहा कि तुम को घबराने की क्या आवश्यकता है, आखिर मैं भी किसलिए कमाता हूं। यदि आज मेरे भी कोई बच्चा होता तो क्या उसको मैं सहारा नहीं देता। राधिका भी उसको अनेक प्रकार से समझाती। परन्तु राजेन्द्र चिकने घड़े के समान हो गया था। उसके ऊपर इन सब का प्रभाव नहीं होता। वह जानता था कि चाचा इतना भार नहीं सम्भाल पायेंगे। उनका वेतन ही क्या है फिर वह इतना बड़ा हो गया है चार लोग क्या कहेंगे कि बेकार बैठा चाचा के सिर पर खा रहा है।

तीन महीने पश्चात् राजेन्द्र आभा को लेकर आगरे आने लगा तो राधिका ने आंसू भर कर दोनों को रोकने का प्रयत्न किया। राजेन्द्र के स्वयं आंखों में आंसू आ गये बोला—चाची, यदि आज यह दिन देखने को न मिलना तब मैं भी तुमको न छोड़ता। तुमने मुझे मां की ममता दी। मुझे ऐसा लग रहा है जैसे कि मैं मां को छोड़ रहा हूं। श्री बाबू की आंखों में भी आंसू आ गये बोले...बेटा, भूल न जाना। राजेन्द्र जब उनके पांव छूने के लिए झुका, तब उन्होंने उसे अपने सीने से लगा लिया। उस समय वेदना असह्य हो गई, कण्ठ रुंध गया। बड़ा प्रयत्न करके बोले—तुम दोनों चले तो जा रहे हो, परन्तु इस घर में सदा के लिए अन्धकार हो जायेगा।

राजेन्द्र न चाहते हुए भी चाचा को छोड़ रहा था। वह देख रहा था उनके ही कारण वह अपनी परवाह स्वयं नहीं करते हैं। चार फटे कपड़ों में ही गुज़ारा करते हैं। चाची के लिए वह कभी नई धोती का जोड़ा लाते, पर घर में उसके और आभा के लिए रोज़ाना नये-नये प्रकार की

गाडी और कुछ बराबर चलता रहा। ऐसे यह कब तक उनके ऊपर भार बन कर रहेगा।

आगे आने पर गंगा दोनों को देख कर बोली—

—कौन हैं यह दोनों।

—तुम्हारा लड़का और तुम्हारी बहू। हरि बाबू ने कहा।

—मैं नहीं जानती, पर... गंगा आभा की ओर देखने लगी फिर चारों ओर देखा और राजेन्द्र की ओर भी अच्छी तरह से देखा, फिर बोली—मैं नहीं पहचानी ?

आभा ने पांव छुए।

—आशीर्वाद दो हरि बाबू ने कहा।

गंगा गुमसुम खड़ी रही। चारों ओर आंखें फाड़ कर देखती रही फिर बोली—

—मुन्नू कहां है, उसको रोटी खिला दू। वह चली गई। हरि बाबू ने कहा—चला अच्छा है कि बहू को नही पहचाना, नही तो रहना कठिन हो जाता।

—बाबू जी मुन्नू कहां है ?

—शांति के यहां, बेचारी वही इसको अपने बेटे के समान पाल रही है। भगवान ने हमको एक सहारा दिया, नही तो मैं कब तक सम्भालता। वही पढ़ता रहता है। यहा भी आता है। कभी यहीं सो जाता है कभी वहां, बेचारी बड़े लाड़-प्यार से रखती है। अब तो पढ़ भी गया, नहीं तो दिन भर घूमा करता था और गली में गुल्ली-डंडा खेला करता था।

राजेन्द्र समझ गया कि शांति नीरा की मां ही हैं। बोला—

—उनकी बेटी भी यहां आ गई है। उसको जुलाई से उनके स्कूल में ही नौकरी मिल जायेगी।

—और तुम्हारा क्या हुआ ?

—बाबू जी, चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई देता है, समझ नही आता कि क्या करूं। दिल्ली में रोजगारी के दफ्तर मे नाम दर्ज करा दिया है यहां भी करा दूंगा। आज कल इतनी बेकारी हो रही कि कुछ कहा नही जाता है। राजेन्द्र ने कहा।

—[illegible] यदि सरकार अपनी यह [illegible]
[illegible] है अपने निवास में [illegible] है। बेकार युवकों का
अपनी ओर खिंचाव का [illegible] राजनीतिक दलों का सबसे अच्छा अवसर मिल
रहा है। उनका कहना ठीक है यदि सरकार अपना जीवन अधिक चाहती
है तब इस बढ़ती बेकारी का [illegible]।—हरि बाबू ने कहा।

इसी समय मीरा ने सुनन्दा [illegible] में प्रवेश किया। मीरा ने हरि बाबू के पांव छुए। यह प्रथम स्पर्श था, उनका शरीर कांप गया। एक बार पहले जब वह आभा से मिलने आई थी, उस समय वह वहां नहीं थे। प्रथम बार ही उन्होंने उसको देखा था। उन्होंने उसके रूप व गुण की प्रशंसा कई बार श्री बाबू और राजेन्द्र के पत्रों तथा मुख से सुन रखी थी। आज प्रथम बार अवसर उसे देखने का प्राप्त हुआ था। उनका लाज के मारे सिर झुक गया। भूली बातें जो उनके हृदय में वेदना की टीसें मारा करती थीं अब एक बार फिर से याद आ गईं। आत्म-ग्लानि के कारण वह कुछ न बोल सके उन्होंने इतना किसी प्रकार साहस करके कहा—

—बैठ जाओ।

कुछ देर बाद आभा छोटा-सा घूंघट निकाल कर हाथ में दो गिलास शर्बत लेकर आई। हरि बाबू ने कहा—

—इनको दो?

—नहीं मैं खा कर आई हूं। रास्ते में भूख बड़ी जोर से लग आई थी।

—नहीं पियो, सत्तू का शर्बत है, गर्मी में ठंडक देता है।—हरि बाबू

ने कहा, पर उनके स्वर में अब भी कम्पन था।

नीरा ने विशेष आग्रह नहीं किया और उनके हाथ से गिलास ले लिया। गोदी में बैठे छोटे मुन्नू ने कहा—

—हम भी पियेंगे।

नीरा ने अपने गिलास से उसको भी पिला दिया। हरि बाबू वह अधिक देर न बैठ सके। वहां से उठ कर चल दिये और बाहर आंगन में जा बैठे। उस समय गर्मी की कड़ी धूप का उन्हें ध्यान न था। न जाने वह वहां कितनी देर तक बैठे रहे। उनका ध्यान अकस्मात् टूट गया। गंगा जोर से हंस रही थी। उसकी हंसी से उनका घर गूंज रहा था।

चौंतीस

सुभाष पार्क में लोगों का एक जमघट था। बीच में एक मंच था। उस पर एक व्यक्ति बड़े जोर-जोर से हाथ उठा कर जोश से व्याख्यान दे रहा था और लोग ध्यान से सुन रहे थे। बीच-बीच में करतल ध्वनि से पार्क गूंज उठता और कभी-कभी जोश में आकर नारे लगने लगते। बोलने वाले व्यक्ति ने एक खद्दर का कुर्ता, जिसके ऊपर के दो बटन खुले, नीचे एक कम चौड़ी मोहरी का पजामा पहन रखा था। रंग काला, कद लम्बा, मुख पर एक-दो दिन की बढ़ी दाढ़ी और सिर पर रूखे बाल तथा कन्धे से एक थैला लटक रहा। मंच पर सात-आठ व्यक्ति बैठे थे। वह जोर से बोल रहा था, कभी-कभी ऐसा लगता कि लगा हुआ लाऊड-स्पीकर भी फट जायेगा।

वह कह रहा था आज कल दिन पर दिन हमारे देश में बेकारी बढ़ती जा रही है। कौन सा वर्ग बेकार नहीं, अध्यापक, मजदूर, क्लर्क इंजीनियर, डॉक्टर सब में ही बेकारी फैल रही है और यह बेकारी शोषित वर्ग के शोषण का उत्तरदायी है। इसी बेकारी के कारण बीमारी और भूख की

ज्वाला बढ़ती जा रही है। इतने वर्ष हमको स्वतन्त्र हुए हो गये अभी तक अपनी अनाज की समस्या को नहीं हल कर पाये, इतने वर्ष हो गये हम अभी तक अपनी बेकारी की समस्या को नहीं सुलझा पाये। देश में तीनों चीजें वन की ज्वाला के समान बढ़ती जा रही हैं। हमारी सरकार तो केवल तीन कार्य करना जानती है संशोधन, उद्घाटन और योजना; परन्तु इन तीनों से राष्ट्र की समस्या नहीं हल हो सकती है। हमारे राष्ट्र का पैसा जाता है बिड़ला, टाटा डालमिया और पूंजीपति की जेबों में और बेकार फिरते हैं मध्य वर्ग के और भूखे मरते हैं निम्न वर्ग के। मेरी समझ में कोई ऐसा कारण नहीं दिखाई देता है कि जब चीन पांच वर्ष में अपने आप को इतना उन्नतिशील बना सकता है, फिर उससे अधिक वर्षों में तथा उससे कम क्षेत्र व जनसंख्या रखने हुए हम अपनी समस्या क्यों नहीं सुलझा सकते हैं। आज के दिन जब हम बेकारी दिवस मनाने के लिए एकत्रित हुए हैं, मैं भारतीय सरकार को चुनौती देता हूं कि यदि वह इस समस्या का हल शीघ्र नहीं करती है, तब अगले चुनाव तक उसका रहना असम्भव हो जायेगा। भारतीय जनता में जागृति की लहर दौड़ती जा रही है। यहां की जनता धीरे-धीरे जानने लगी है कि प्रजातन्त्र की बागडोर सरकार के हाथ में नहीं प्रत्युत जनता के स्वयं के हाथों में है। सरकार को अपनी नीति स्थाई बनाने के लिए अपनी नीति बदलनी होगी, नहीं तो जनता को सरकार बदलनी होगी।

व्यक्ति अपना व्याख्यान समाप्त करके बैठ गया था, पर पांडाल उसके बाद तक गूंज रहा था।

'मजदूर साथी आजाद जिन्दाबाद।' मंच से जो कदाचित सभापति था उसने कहा कि आज आपने हमारे मेहमान दिल्ली के मजदूर नेता आजाद को हमारे आज के जलसे में सुना। आजाद कुछ ही दिनों पहले दिल्ली जेल से छूटे हैं। जहां पर इन्हें कपड़ा मजदूरों के हड़ताल के सिलसिले में जेल में बन्द थे। यहां कहना व्यर्थ न होगा कि क्रान्तिकारी मजदूर नेता का आधा से अधिक जीवन जेल में बीता है। आज आजाद चालीस से ऊपर निकल चुके हैं, परन्तु उनके स्वर में वैसी ही गर्मी है, आवाज में वैसी ही गरज है तथा हृदय में वैसा ही उल्लास है।

राजेन्द्र जो एक महीने से आगरे की मई व जून महीने की गर्मी में घूम रहा था इस जमघट को देख कर वह भी वहां खड़ा हो गया था। ध्यान से वह भी आजाद का व्याख्यान सुन रहा था। कई स्थान पर तो उसका जोश के कारण रोमांच हो जाता और उसके अंग फड़क उठते। जिस व्याख्यान को पहले वह राष्ट्रीय सरकार के विरुद्ध समझ कर श्रद्धा की दृष्टि से नहीं देख रहा था, धीरे-धीरे उसी के प्रति उसमें न जाने क्यों रुचि बढ़ती जा रही थी। कई स्थान पर उसने अपने हृदय के भाव पाये उस समय तो उसे ऐसा लगा कि जैसे किसी ने उसके मुख की बात छीन ली है। कई स्थान पर उसे कटु सत्य लगा पर वह सुनता रहा। आजाद ठीक कहते हैं उसने सरकार में इतने वर्ष नौकरी की और उसके बदले में सरकार ने दी दर-बदर की ठोकरें। उसने देखा कि वह ही नहीं, प्रत्युत उसके समान न जाने कितने हैं जो इसी सरिता में एक अनाड़ी तरीके के समान बहते आ रहे हैं।

मनुष्य की यह स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है कि जब कोई उसके हृदय के अव्यक्त भाव को व्याख्यान, उपन्यास, कहानी, कविता, चित्रपट व नाटक अथवा अन्य साधन के द्वारा व्यक्त करता है, उस समय उसको जो आनन्द आता है वह ब्रह्मानन्द सहोदर होता है। वह उसे सर्वोनुपम कहता है, चाहे वह कितना ही हेय क्यों न हो, वह उसका प्रशंसक व उपासक हो जाता है। जो उसकी असन्तुष्ट भावनाओं को भोजन अपनी कला के द्वारा कराता है वह उसका श्रद्धा पात्र हो जाता है।

राजेन्द्र भी इन्हीं कारणों से धीरे-धीरे आजाद की ओर झुकता जा रहा था। उसको, उसका लम्बा व्याख्यान अत्यन्त अच्छा लग रहा था। अन्त में जब लोगों ने कई बार नारा लगाया 'मजदूर साथी आजाद जिन्दाबाद' उस समय पहले उसे इतना साहस न हुआ परन्तु अन्तिम नारे के समय पर उसने अपनी समस्त शारीरिक व मानसिक शक्ति बटोर कर, नारे में अपना स्वर मिला दिया। उस समय उसके हृदय में न जाने कितना उल्लास हुआ।

सभा के पश्चात जब कि सब लोग अपने घर की ओर जाने लगे, वह कों में घिरे मजदूर नेता के पास पहुंच गया। उसने कहा—

—मैं आपसे मिलना चाहता हूं।

—अवश्य ही, मैं राजामंडी में सतीश के पास ठहरा हूं। मुस्करा कर आजाद ने कहा।

—आज रात में मिल सकेंगे?

—हां, आठ बजे के बाद।

राजेन्द्र आठ बजते ही सतीश के घर पहुंच गया। वह उसका घर जानता था क्योंकि उसने सतीश को कई बार अपने एक मित्र के घर के पास से निकलते हुए देखा था। जब वह पहुंचा उस समय आजाद ऊपर एक छत पर ढीली सी खाट पर बैठे अखबार पढ़ रहे थे। उन्होंने राजेन्द्र को देख कर कहा-

—आओ और अपने पास बैठने को संकेत किया। राजेन्द्र बड़ा संकोच करता हुआ बैठ गया। फिर राजेन्द्र ने धैर्य धारण करके कहा—

—आपका व्याख्यान मुझे बड़ा अच्छा लगा।

—हमारे यहां के नेता व्याख्यान अच्छा नहीं देना जानते हैं ठोस कार्य करना नहीं यही बात सदा हमको खटकती है।

—मैं सरकार के राशन विभाग दिल्ली में था। अब महीनों से बेकार हूं, समझ में नहीं आता है कि क्या करूं, कहां जाऊं।

—तुम ही नहीं, तुम्हारे समान न जाने कितने हैं जो बेकार हैं, जिनके सम्मुख अनेक प्रकार की समस्याएं हैं। जब हम इनके विरुद्ध प्रदर्शन करते हैं तब मिलता क्या है हमको केवल लाठी या जेल।

—क्या आप बता सकते हैं कि ऐसा क्यों है? आपका कथन है कि चीन पांच मास में इतनी उन्नति कर गया है, क्या यह सच है? यदि है तो कैसे?—राजेन्द्र ने अपना प्रश्न किया।

—बेटा, रूस व चीन दोनों ही देशों में एक वर्ग रहित समाज है। वहां से पूंजीपति मिटाये जा चुके हैं। प्रत्येक वस्तु राज्य की है और राज्य श्रमिक व्यक्तियों के हाथ में है। वहां पर उनकी ही तानाशाही है। इस कारण ही। आजाद ने कहा।

—वर्ग व श्रेणी विभाजन तो सदा से ही है।

नहीं आज से बहुत वर्ष पूर्व जब कि मनुष्य इस विश्व में आया ही था, जब कि सभ्यता और राज्य का प्रसार इतना अधिक नहीं था उस समय न

वर्ग थे और न श्रेणी एक जन समूह आपस में मिल कर रहता, आपस में मिल कर काम करते और बांट कर खाते थे। आज के समान मनुष्य का मनुष्य के द्वारा शोषण नहीं होता था। प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के विकास की पूर्ण स्वतन्त्रता थी।

—फिर यह वर्ग और श्रेणी का विकास कैसे हुआ।

बेटा, इस की एक लम्बी कहानी है संक्षेप में बताता हूं। मनुष्य की ज्यों-ज्यों आवश्यकता बढ़ती गई त्यों-त्यों उसने अपने कार्य का विभाजन करना आरम्भ किया शुभ विभाजन का आधार आपस का सहयोग था उसी विभाजन के द्वारा धीरे-धीरे समाज दो वर्गों मे विभाजित हो गया, एक वह जिसके हाथ शक्ति थी, और दूसरा जो कि शक्ति रहित। धीरे-धीरे राज्यों का जन्म हुआ और राज्य सत्ता उच्च वर्ग के हाथ में चली गई। एक बड़ा राज्य सदा छोटे को दबाने का प्रयत्न करने लगा। धीरे-धीरे राज्य नहीं साम्राज्य बनने लगे। प्रत्येक साम्राज्य अपना क्षेत्र बढ़ाने लगा। बीसवी सदी से पचास वर्ष पूर्व विश्व में कल व विज्ञान ने एक करवट ली और धीरे-धीरे उपनिवेशवाद का जन्म हुआ। आज तुम देखते नहीं कि इंगलैंड और फ्रांस ने कितने बड़े द्वीप समूह अपने पंजे में दबा रखे हैं। यही पूंजीवाद की चरम सीमा है।

—तो क्या निम्न वर्ग कभी उठा ही नहीं ? राजेन्द्र को इस वार्तालाप से रुचि हुई।

—क्यों नहीं. विश्व का इतिहास आज वर्गीय संघर्ष का इतिहास है। पहले उच्च वर्ग इतना शक्तिशाली था कि निम्न वर्ग को उठने का अवसर ही नहीं मिलता था परन्तु उन्नीसवी सदी में जब से यूरोप मे कल क्रान्ति हुई उस समय शोषण की चरम सीमा पहुंच गई। मिलों में थोड़े से वेतन पर खरीदे जाने वाले मजदूर पिसने लगे। उनके गृहिक धन्धे चौपट हो गये। उनको अन्धकार में ढकेल दिया। उनको जीवित रहने के लिए भी उचित वेतन नहीं मिलता था। विश्व का यह नियम है जबकि शोषण की चरम सीमा पहुंच जाती है उस समय क्रान्ति का समय निकट आ जाता है। उस समय अनेकों दार्शनिकों का जन्म हुआ। इंगलैंड, जर्मनी, फ्रांस आदि अनेक देशों में शोषित वर्गों में एक जाग्रति की लहर दौड़ गई। उन्होंने

अपने अधिकार के लिए संघर्ष किया।

—क्या वह अपने अधिकार में सफल हुए ?

क्यों नहीं, जब मार्ग में एकता होती है तब किसी भी प्रकार की सरकार क्यों न हो, झुकना पड़ता है। उनके साथ प्रत्येक देशों ने अनेक प्रकार के सुधार किये, पर अब भी उनकी मंजिल अधूरी है।

—क्यों ?

अभी उनमें और सुधार की आवश्यकता है। उनको पूंजीपति के पंजों से मुक्त होना है। इस विश्व के अधिक भाग में शोषण की चरम सीमा है। आज भी उपनिवेशवाद है और जहां उनमें बसने वाले व्यक्ति अपने अधिकार के लिए उठते हैं, वहां उन पर कठोर दमन किया जाता है। विश्व के सब पूंजीवादी एक साथ मिल जाते हैं।

—इस विषय में हमारी सरकार तो समर्थक है।

होना भी चाहिए। भारत, एशिया के सबसे बड़े राष्ट्र में से एक है। वह ही इन अधिकारों के लिए विदेशी राज्य से संघर्ष करने वाले राष्ट्र से बचा सकता है।

आजाद ने कहा और कहने के पश्चात् ऊपर अपनी दृष्टि घुमाई और फिर कहा—

—ऊपर देखते हो, इस काली रजनी के निशा में दीप को जलते हुए, उसी प्रकार से तुम लोग भी भारत के आने वाली सन्तान के दीपक हो। तुम जिस ओर चाहो उधर मार्ग दिखा कर ले जा सकते हो। अब हम लोगों के जमाने गये। आजाद ने तनिक गम्भीर होकर कहा।

—एक बात पूछूं मैं आपसे ?

—क्या ?

—आपकी बातों से पता लगता है कि आप पूंजीपति के कठोर शत्रु हैं पर ऐसा क्यों ? क्या उनमें सुधार नहीं हो सकता है ? क्या वह वास्तव में खराब है ?

बेटा, तुमने अभी दुनिया नहीं देखी है। पूंजीपति का सुधार करना ऐसा ही है, जैसे सर्प को दूध पिलाना। जिस प्रकार कुत्ते की दुम सीधी नहीं हो सकती है उसी प्रकार इनकी प्रवृति भी। धन का सांप किसको नहीं पागल

वर्ग थे और न श्रेणी एक जन समूह आपस में मिल कर रहता, आपस में मिल कर काम करते और बांट कर खाते थे। आज के समान मनुष्य का मनुष्य के द्वारा शोषण नहीं होता था। प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के विकास की पूर्ण स्वतन्त्रता थी।

—फिर यह वर्ग और श्रेणी का विकास कैसे हुआ।

बेटा, इस की एक लम्बी कहानी है संक्षेप में बताता हूं। मनुष्य की ज्यों-ज्यों आवश्यकता बढ़ती गई त्यों-त्यों उसने अपने कार्य का विभाजन करना आरम्भ किया शुभ विभाजन का आधार आपस का सहयोग था उसी विभाजन के द्वारा धीरे-धीरे समाज दो वर्गों मे विभाजित हो गया, एक वह जिसके हाथ शक्ति थी, और दूसरा जो कि शक्ति रहित। धीरे-धीरे राज्यों का जन्म हुआ और राज्य सत्ता उच्च वर्ग के हाथ में चली गई। एक बड़ा राज्य सदा छोटे को दबाने का प्रयत्न करने लगा। धीरे-धीरे राज्य नहीं साम्राज्य बनने लगे। प्रत्येक साम्राज्य अपना क्षेत्र बढ़ाने लगा। बीसवीं सदी से पचास वर्ष पूर्व विश्व में कल व विज्ञान ने एक करवट ली और धीरे-धीरे उपनिवेशवाद का जन्म हुआ। आज तुम देखते नहीं कि इंगलैंड और फ्रांस ने कितने बड़े द्वीप समूह अपने पंजे में दबा रखे हैं। यही पूंजीवाद की चरम सीमा है।

—तो क्या निम्न वर्ग कभी उठा ही नहीं? राजेन्द्र को इस वार्तालाप से रुचि हुई।

—क्यों नहीं. विश्व का इतिहास आज वर्गीय संघर्ष का इतिहास है। पहले उच्च वर्ग इतना शक्तिशाली था कि निम्न वर्ग को उठने का अवसर ही नहीं मिलता था परन्तु उन्नीसवीं सदी में जब से यूरोप में कला क्रान्ति हुई उस समय शोषण की चरम सीमा पहुंच गई। मिलों में थोड़े से वेतन खरीदे जाने वाले मजदूर पिसने लगे। उनके गृहिक धन्धे चौपट हो ...नको अन्धकार मे ढकेल दिया। उनको जीवित रहने के लिए भी वेतन नहीं मिलता था। विश्व का यह नियम है जबकि शोषण की ... जाती है उस समय क्रान्ति का समय निकट आ जाता है। ...ों का जन्म हुआ। इंगलैंड, जर्मनी, फ्रांस आदि ... वर्गों में एक जागृति की लहर दौड़ गई। इन्होंने

—क्यों ?

अभी इनमें और सुधार की आवश्यकता है। उनको पूंजीपति के पंजों से मुक्त होना है। इस विश्व में अधिक भाग में शोषण की चरम सीमा है। आज भी उपनिवेशवाद है और जहाँ उनमें जागरण वाले व्यक्ति अपने अधिकार के लिए उठते हैं, वहाँ उन पर कठोर दमन किया जाता है। विश्व के सब पूंजीवादी एक साथ मिल जाते हैं।

—इस विषय में हमारी सरकार तो समर्थक है।

होना भी चाहिए। भारत, एशिया के सबसे बड़े राष्ट्रों में से एक है। वह ही इन अधिकारों के लिए विदेशी राज्य से संघर्ष करने वाले राष्ट्र में बचा सकता है।

आजाद ने कहा और कहने के पश्चात् ऊपर अपनी दृष्टि घुमाई और फिर कहा—

—ऊपर देखते हो, इस काली रजनी के निशा में दीप को जलते हुए, उसी प्रकार से तुम लोग भी भारत के आने वाली सन्तान के दीपक हो। तुम जिस ओर चाहो उधर मार्ग दिखा कर ले जा सकते हो। अब हम लोगों के जमाने गये। आजाद ने तनिक गम्भीर होकर कहा।

—एक बात पूछूं मैं आपसे ?

—क्या ?

—आपकी बातों से पता लगता है कि आप पूंजीपति के कठोर शत्रु हैं पर ऐसा क्यों ? क्या उनमें सुधार नहीं हो सकता है ? क्या वह वास्तव में खराब है ?

बेटा, तुमने अभी दुनिया नहीं देखी है। पूंजीपति का सुधार करना ऐसा ही है, जैसे सर्प को दूध पिलाना। जिस प्रकार कुत्ते की दुम सीधी नहीं हो सकती है उसी प्रकार इनकी प्रकृति भी। धन का लोभ किसको नहीं पागल

बना सकता है। क्या तुम सोच सकते हो कि यह लोग अपना लोभ किसी कारण छोड़ सकते हैं। हमको पता है बंगाल के अकाल के समय द्वितीय महायुद्ध हो रहा था। इन सेठों ने अपना अनाज सड़ा डाला, पर भूख से मरती गरीब जनता को एक रोटी का टुकड़ा न दिया। बेटा, मैंने इन आंखों से वह दृश्य देखे हैं, जो कि किसी को न देखने पड़े। इन्सान जब जलता है, तब ही अंगारे उगलता है। मसनद पर बैठने वाले नहीं। गुदगुदे शयन में विश्राम करने वालों के हृदय में यह विचार नहीं उठ सकते हैं।

—आजाद की गम्भीरता अधिक हो गई। वह कुछ क्षण चुप रहे फिर बोले—

—बेटा, मैं तुम्हारा नाम पूछना तो भूल गया।

—राजेन्द्र।

—राजेन्द्र। कह कर ऐसा लगा जैसे कि वह कुछ सोच रहे हों, फिर बोले—नाम तो सुना है, हां, याद आया क्या तुम अमृत को जानते हो?

—अमृत? आश्चर्य से उसने आजाद के मुख को देखा।

—हां!

—वह मेरा मित्र था। जेल में है मेरे ही कारण।

—मुझे सब पता है। बड़ा अच्छा लड़का है। उसने मुझे एक वार्डर से पिटने से बचाया था तो कमबख्तों ने उसे पांच महीने तक सेल में बन्द रखा बाहर नहीं निकाला।

—कैसा है?

—चलते समय मिला था। मेरे विचारों से बड़ा प्रभावित हुआ। मैं उससे कहा है कि मेरे साथ काम करो, जो रूखा-सूखा मैं खाता हूं वह भी खा लेना।

—काश, मैं उनसे मिल पाता?

राजेन्द्र काफी देर तक मौन बैठा रहा। आजाद भी मौन रहे। उन्होंने शांति भंग करते हुए कहा—

—तुम मेरे विचार से सहमत हो?

—जी।

—इसके विषय में और जानना चाहते हो।

—जी।

—कुछ किताबें देता हूं इन्हें पढ़कर ले आना। याद रखना मैं पूछूगा। देखूगा कि क्या समझ मे आता है।

इतने मे मनीश ऊपर आया। एक मध्यम कद का युवक, आखो पर काली फ्रेम का चश्मा, रंग गेहुआ और सिर के काफी बाल गिर चुके थे।

—देखो मनीश, इनको कुछ किताबें दो, यह तुमको पढ़कर लौटा देंगे। देखो भाई राजेन्द्र, मेरा तो तुम जानते ही हो कि आज यहा तो कल वहा, लेकिन मनीश यहा रहेंगे। इनसे तुम अवश्य पुस्तके लेते रहना।

राजेन्द्र वहा से विदा हुआ। उसके हृदय मे एक नया उत्साह था। उसके पग तीव्रता से बढ रहे थे। उसने आज नया पग नई राह पर रखा था। उसकी आंखो के आगे एक नई दुनिया के चिह्न थे। एक समाज की कल्पना, नया समाज जिसमे कोई वर्ग नहीं, कोई शोषण नही, पूर्ण समानता थी। सबके व्यक्तित्व के विकास का समान अवसर···नया समाज · आज उसकी आंखो के सामने नृत्य कर रहा था···नया समाज।

पैंतीस

आजाद के जेल से छूटने के बाद अमृत का वहां एक पल भी कटना दुर्लभ हो गया। पहले वह समय निकालकर उसके पास जा बैठता था। उसके साथ बातचीत करने मे उसे बड़ा आनन्द आता। वह उसके पास बड़ी देर तक बैठा रहता। इस कारण से जेल के कर्मचारी भी इन दोनो पर सन्देह करने लगे थे। पर अमृत भी आंख छिपाकर अवश्य मिल लिया करता। थोड़े से ही समय मे उसके लिए, उसके हृदय मे वही प्रेम उत्पन्न हो गया, जो एक पुत्र का पिता के लिए था।

जब आजाद जाने लगे, उस समय अमृत की आंखो मे आंसू आ गए। उसने उनसे कहा था कि आज मुझे ऐसा लग रहा है जैसे कि मैं अपने पारे

—क्या कहते हो जवाहर सिंह? अपन की समझ में तो पागल ही लगता है। नहीं तो यार इतने दिनों से है, कम-से-कम कुछ बोलता तो।

—वाह भई, तुम दूसरों में तो दोष निकालते हो कभी बोलने की भी कोशिश की, दूसरे को दोष ही देते हो। तीसरे साथी कल्लन ने कहा।

—मानते हैं उस्ताद! आखिर बीस की काटे जो हो! करीम बोला।

—हां भई, तुम्हारा क्या नाम है?

—अमृत!

—नाम तो फिल्मी हीरो को तरह है। जवाहर सिंह ने कहा।

—तो, क्या कसूर किया था? करीम ने कहा।

—सेठ को लूटने का प्रयत्न।

—कितने साल की मिली?

—एक साल।

—बस! क्या बात है यार, सरकार ने तुम्हारे साथ रियायत की? करीम ने कहा।

—सरकार के दामाद होंगे। जवाहर सिंह ने कहा।

—नहीं तो तुमने अपना कसूर मान लिया होगा?

—हां।

—इसलिए। अरे हमको देखो, एक की जगह पांच की सजे तो क्या? क्या मजाल है कबूल जायें।—करीम ने कहा।

—छूटने वाले होगे? कल्लन ने पूछा।

—हां, दो महीने और हैं।

—फिर क्या करोगे? जवाहर सिंह ने कहा।

—नौकरी।

—नौकरी? तीनों ने हंसकर कहा पर तीनो के भयंकर मुख पर हंसी भी बड़ी भयंकर लग रही थी।

—क्यों? अमृत ने तनिक डरते हुए कहा।

—तुम नौकरी करोगे। तुम समझते हो कि बाहर तुमको नौकरी मिल जायेगी। याद रखो जिसने एक बार भी कसूर किया और इस तीर्थस्थान पर आकर गया, उसके लिए बाहर की दुनिया में कोई जगह नहीं। कल्लन

हुए पिता के स्नेह को खो रहा हूं। आज तक मैंने अपने पिता को नहीं देखा। मैं क्या जानूं कि पिता का स्नेह क्या होता है? पर आपने वह मुझको देकर, मेरे हृदय में वही प्रेम उत्पन्न कर दिया, जो कि पुत्र के हृदय में अपने पिता के लिए होता है। मैं कितना अभागा हूं कि एक मित्र का प्रेम मिला वह भी छिन गया और पिता का, वह भी छिन रहा है। आजाद की भी आंखें डबडबा गईं। उन्होंने कहा था कि बेटा, तुम भी जानते हो कि मेरा जीवन कैसा है आज बाहर तो कल जेल में, आज इस स्थान पर तो कल दूसरे, आज लाठी सिर पर है, तो कल हाथ में हथकड़ी है। मुझे आश्चर्य यह होता है कि तुमने मुझ जैसे व्यक्ति को अपना कैसे बना लिया। मेरे पास है क्या? अमृत ने कहा कि आपके पास क्या नहीं? मुझे आपके धन से प्रेम नहीं। मुझे आपके हृदय से प्रेम है। आपके विचारों से स्नेह है। आपके पास प्यार है। अमृत के मुख से निकल पड़ा—आगे क्या होगा? और आजाद ने 'हिम्मत रखो' कहकर सीने से लगा लिया था। उन्होंने कहा कि तुम जेल से छूटने के बाद मेरे पास आ जाना। जो मैं रूखा-सूखा खाता हूं वह तुम भी खा लेना, जिस प्रकार से मैं कभी मिल की पटरी, कभी फुटपाथ पर तो कभी रेलवे स्टेशन की बेंचों पर सो जाता हूं, तुम भी सो रहना।

उनको गये हुए न जाने कितने दिन हो गये, परन्तु अमृत के हृदय में सदा उनकी स्मृति रहती। जब वह खाता नहीं तब कितने प्रेम से वह खिलाते थे। कहते थे कि बेटा, जब तक तन है सब कुछ है यदि इसे घुला दोगे तो जग में क्या करोगे। जब वह निराश हो जाता और कहता कि मेरा जी चाहता है कि मैं आत्म-हत्या कर लूं। अब मेरे लिए है क्या? मैं संसार की दृष्टि में खूनी हूं। मैं अपराधी हूं। उस समय वह सान्त्वना देकर कहते कि बेटा, तुम समाज से दूर मत भागो, समाज को बदल डालो। तुम हिम्मत वाले हो, यदि तुम ही हिम्मत खो दोगे तो आने वाली सन्तान क्या करेगी? अमृत को अतीत के दिनों की स्मृति में कितना आनन्द आता। वह घटों उसमें खोया रहता।

संध्या का समय था। अमृत अपने सेल के आगे बैठा न जाने क्या ... था। उसको तीन कैदियों ने घेर लिया। एक बोला—

अरे मियां करीम! यह कैदी है या पागलखाने का पागल?

—क्या कहते हो जवाहर सिंह? अमृत की समझ में तो पागल हो गया है। अभी तो यार इतने दिनों से है, कम-से-कम कुछ बोलता तो।

—वाह भई, तुम दूसरों में तो दोष निकालते हो कभी बोलने की भी कोशिश की, दूसरे को दोष ही देते हो। तीसरे साथी कल्लन ने कहा।

—मानते हैं उस्ताद! आखिर बोल की काटे जो हो! करीम बोला।

—हां भई, तुम्हारा क्या नाम है?

—अमृत।

—नाम तो सिक्खों लोगों की तरह है। जवाहर सिंह ने कहा।

—तो, क्या कसूर किया था? करीम ने कहा।

—सेठ को लूटने का प्रयत्न।

—कितने साल की मिली?

—एक साल।

—बस! क्या बात है यार, सरकार ने तुम्हारे साथ रियायत की? करीम ने कहा।

—सरकार के दामाद होंगे। जवाहर सिंह ने कहा।

—नहीं तो तुमने अपना कसूर मान लिया होगा?

—हां।

—इसलिए। अरे हमको देखो, एक की जगह पांच की सपे तो क्या? क्या मजाल है कबूल जायें।—करीम ने कहा।

—छूटने वाले होगे? कल्लन ने पूछा।

—हां, दो महीने और हैं।

—फिर क्या करोगे? जवाहर सिंह ने कहा।

—नौकरी।

—नौकरी? तीनों ने हंसकर कहा पर तीनों के भयंकर मुख पर हंसी भी बड़ी भयकर लग रही थी।

—क्यों? अमृत ने तनिक डरते हुए कहा।

—तुम नौकरी करोगे। तुम समझते हो कि बाहर तुमको नौकरी मिल जायेगी। याद रखो जिसने एक बार भी कसूर किया और इस तीर्थस्थान पर आकर गया, उसके लिए बाहर की दुनिया में कोई जगह नहीं। कल्लन

ने कहा।

—क्यों ?

—क्योंकि, तुम दुनिया की नजरों में खूनी हो। वहां पर खूनियों के लिए जगह नहीं ? जिसको तुम समाज बोलते हो, वहां पर जेल से निकले कैदी को नफरत की नजर से देखा जाता है। तुमसे लोग ऐसे दूर भागेंगे जैसे दिक के मरीज से। करीम ने कहा।

—देखते नहीं मुझको ? मेरे चाचा ने बाप का खून किया और मुझे अपराधी बना दिया। पाच की भुगत कर बाहर निकला। उस समय मेरे दिल में भी तुम्हारी तरह इरादे थे। मैं दर-बदर भटका, पर किसी ने एक मुट्ठी अन्न न दिया। सब उंगली उठा-उठाकर कहते कि यही है जवाहर जिसने अपने बाप का खून किया। मैं भूखों मरने लगा। इसके अलावा कोई दूसरा चारा नहीं था कि मैं सदा के लिए एक अपराधी बन जाऊं। तीन डाके मारे और चौथे में पकड़ा गया। छह साल की भुगती है। जवाहर ने कहा।

—फिर तुम चाहते क्या हो ?—अमृत ने कहा। उसके माथे पर ही नहीं बल्कि समस्त शरीर पर पसीना आ रहा था।

—फिर क्या ? यही कि करीम कुछ दिनों बाद छूट रहा है। इसने मेरी शागिर्दी में ताले तोड़ने से डाके मारने तक सीखे हैं। एक-दो बार यह स्वयं भी अकेले सफल हुआ है। तुम चाहो तो इसके साथ काम कर सकते हो। कल्लन ने कहा। इसके बाद उसने अपनी बड़ी-बड़ी मूंछों पर ताव दिया। वे उस समय सीधी खड़ी थी। अमृत ने उसकी बड़ी लाल आंखों की ओर देखा। उसका भयानक मुख था। उसने कहा—

—नहीं, नहीं, मैं चोरी नहीं करूंगा।

—चोरी नहीं करेगा ? तो क्या भूखा मरेगा। तेरा बाप क्या धन गाड़कर रख गया है ? ऐसा ही था तो क्यों एक गरीब के घर जन्म लिया ? एक धनवान के घर जन्म लिया होता। कल्लन ने कहा। उसकी भयंकरता सीमा पर थी। आवाज में गरज थी। अमृत ने उसके मुख को देखा, भयंकर था। उसने सिनेमा में कई बार डाकुओं की भयकरता देखी आज वह अपने सामने साक्षात् देख रहा था। उसे ऐसा लग रहा

था जैसे कि उसके मुख से चीख निकल जायेगी। कल्लन कह रहा था—

—बेटा! एक बार इसका मजा तो लो। यह खपच्ची-सा शरीर न मेरे जैसा हो जावे तो कहना।

तीनों ने देखा कि वार्डर कन्धे पर बन्दूक रखे सामने की ओर से आ रहा है। वे उसके सामने से अलग हो गये।

—तुमको तो साहब की कोठी पर क्यारी बनाने जाना था, यहां क्या कर रहे हो?

—जा रहे हैं। करीम ने रोष से कहा और तीनों उधर चल दिये।

—ये साले तुमसे क्या कह रहे थे? इनके फंदे में न फंसना। खुद तो काले काम करते ही है तुमको भी फांस देंगे।

अमृत को यह पहला मनुष्य जेल में इतने दिन रहने के पश्चात मिला था जिसके कड़ेपन में भी उसने मिठास का अनुभव किया। वह चला गया। अमृत की आंखों के आगे तीनों की भयंकर मूर्ति नाच रही थी। उसकी दशा ऐसी थी जैसे कोई व्यक्ति किसी भयंकर स्वप्न से जागकर उठा हो। उसके कानों में उनके शब्द गूंज रहे थे।

छत्तीस

राजेन्द्र का आज़ाद से सम्पर्क और साहचर्य दिन-प्रतिदिन बढ़ता गया। वह किताबें ज्यों-ज्यों पढ़ता त्यों-त्यों उसकी भूख और बढ़ती गई। वह दिन-दिन भर तथा रात के बारह बजे तक पुस्तकें ही पढ़ा करता। दिन में तीन-चार घण्टे घूमता। उसने अब अपनी ओर देखना छोड़ दिया। चार-चार रोज़ तक दाढ़ी न बनाता और अपनी सुध ही न लेता। कभी-कभी भाभी पूछती, क्या हो रहा है तुमको? वह कह देता कि भाभी, क्या गुज़ार रहूं चार के पैसे पर। इतने महीने हो गये नौकरी का कोई पता मगर नहीं। [illegible] किताबों से और घूम-घूमकर

ही कुछ समय कट जाये। हरि बाबू ने उसको एक स्थान पर नौकरी बतलाई। जब वह वहां गया तब उन्होंने कहा 80 रुपये कागज पर और असल में 60 रुपये देंगे। वह लौट आया। उसने कह दिया कि जितने पर आप हस्ताक्षर करायेंगे उतने ही दीजिये। उन्होंने कहा पहले भी ऐसा होता आया है। तब उसने रोष में आकर कह दिया—आजकल मानव का मानव द्वारा शोषण का युग है। क्यों नहीं, आप इससे कम पर भी मनुष्य को खरीद सकते हैं। उसके यह विचार सुनकर वे उसे तिरस्कार की दृष्टि से देखते, और वह वहां से अपना-सा मुंह लेकर घर लौट आता। इस पर हरि बाबू जब पूछते, उस समय वह सब सुना देता। हरि बाबू कहते बेटा, समय ही ऐसा आ गया है। तब राजेन्द्र कह उठता—बाबूजी समय को बदलना होगा। मनुष्य ही समय को बनाने वाला और मिटाने वाला होता है। उसका जीवन भौतिक जीवन है, उस पर आर्थिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है। इस कारण यदि आज हमारे समाज का सुधार करना है तो उसकी आर्थिक अवस्था का सुधार करने की आवश्यकता है। तब हरि बाबू कह उठते कि बेटा, सब अपने भाग्य की खाते हैं। हमारे पूर्व जन्म के कर्म ऐसे ही होंगे जो आज इतनी कठिनाई का सामना कर रहे हैं। इस पर राजेन्द्र कह उठता यह मनुष्य का भ्रम है। मनुष्य का भाग्य उसके हाथ में है, वह जैसे चाहे बना सकता है। यह हमारा भ्रम है कि हमारे ऊपर पूर्व जन्म के कर्मों का प्रभाव पड़ता है। मनुष्य इसी जन्म में करता और भरता है।

राजेन्द्र का हृदय अति दुखी हो गया था। इन्हीं कारणों से उसकी रुचि कम हो गई थी। वह कम हंसता, कम बोलता और किसी समय खाना न खाता था। उसका बलिष्ठ शरीर घुलता जा रहा था। आभा कभी नयनों में नीर भरकर कह उठती—तनिक अपने शरीर की ओर तो ध्यान दो। तन है तो धन है। राजेन्द्र का मन रो उठता। वह कह उठता—आभा मैं जानता हूं कि मैंने तुम्हारे फूल जैसे जीवन को कांटों में लाकर ...ल दिया, तुम्हारे सुख की कल्पना केवल एक स्वप्न मात्र ही रह गई। ... कहती—आप भी कैसे हैं, मैं कह रही हूं आपके बारे में, आप उल्टा ... ऊपर ही थोपे जा रहे हैं। भला मुझे सुख की क्या कमी, सरिता के

—बाबूजी, भूख लगी है।

—सुबह खाकर नहीं गया था ?

—सुबह खाकर गया था।

—रोज तो खाता नहीं था। आज क्या नई तरह की भूख लगी है। ठहर जा, एक-दो घंटे में अभी खाना बन जाता है, खा लेना।

—बाबूजी, पैसे दे दो, बाहर गर्म-गर्म कचौड़ी बन रही है।

—नहीं, कचौड़ी खाने से तबीयत खराब हो जाती है।

—बाबूजी, पहले तो आप कभी नहीं मना करते थे, जब पैसे मांगता था दे देते थे। अब मांगता हूं तो हमेशा बहाना बना देते है।

—बेटा, सदा एक से दिन नहीं रहते है।

—नहीं बाबूजी, पैसे दे दो।—कहकर मुन्नू गले से लिपट गया। हरि बाबू का गला भर आया, उन्होंने कहा—

—बेटा, परसों तनख्वाह मिलेगी तब दे दूंगा। अभी तो एक पैसा भी नहीं है। उन्होंने अपनी जेब में हाथ डालकर कहा।

मुन्नू बाहर चला तो गया, पर उसे भूख लगी थी। बाहर उसके मोहल्ले के दो-तीन बच्चे पैसे लेकर कचौड़ी वाले की दुकान पर गये थे। मुन्नू भी उस ओर चला गया। वह दूर खड़ा देख रहा था कि उसके साथी गर्म-गर्म कचौड़ी चटनी के साथ खा रहे थे। वह सोच रहा था यदि बाबूजी उसको पैसे दे देते तब वह भी खाता। उसके सब साथी उसका मजाक बना रहे थे। कोई कह रहा था कि क्यों बे, वहां खड़ा नजर क्यों लगा रहा है। दूसरा कह रहा था, यदि खाना है तो अपने बाप से पैसे मांग ला। तीसरा कह रहा था, बाप बेचारे के पास पैसे ही नहीं होंगे। इस प्रकार के ताने वह सुन रहा था। वह कभी उनके हाथों के मुंह से चाटते हुए दोनों को देख था तो रहा कभी उनके मुख की ओर। दुकान वाले को दया आ गई बोला, क्यों बे, वहां क्यों खड़ा है, इधर आ। मुन्नू उसके पास चला गया। उसने पूछा, किसका लड़का है? उसने कहा, बड़े बाबू का। दुकानदार ने कहा, बेचारे बड़े सज्जन हैं। उसके बेटे की नौकरी छूट गई है, इसी कारण उनका हाथ रुक गया। ले कचौड़ी खा ले। मुन्नू पहले हिचका, फिर उसने हाथ बढ़ाकर ले ली। उस समय उसके मुख पर जो दीनता के चिह्न थे, उसको देखकर पाषाण हृदय भी एक बार रो उठे। मुन्नू कचौड़ी पाकर इतना प्रसन्न हुआ जैसे कि उसने कोई गाढ़ी हुई सम्पत्ति पा ली हो। वह दौड़ता-दौड़ता घर पहुंचा और बोला—

—देखा बाबूजी! तुमने पैसे नहीं दिये, मुझे कचौड़ी मिल गई।

हरि बाबू उस समय पूजा करने जा रहे थे। उसकी ओर देखकर बोले—

—किसने दी?

—दुकान वाले ने।

हरि बाबू का मुंह तमतमा गया। उन्होंने एक जोर से थप्पड़ मुंह पर मारा। मुन्नू का सिर घूम गया। कचौड़ी दूर जा गिरी। हरि बाबू ने ड़ा।—भीख मांगता है?

मुन्नू के कुछ समझ में न आ पाया वह जोर से उठा। हरि बाबू ने

उसे अपने कलेजे से लगा लिया। उनका अन्तर उनको काट रहा था। इसमें अबोध बालक का क्या दोष है? गृह की परिस्थितियों ने उसे ऐसा करने को मजबूर किया। उनके सामने कृष्ण और राधा की प्रतिमा थी। वह कह रहे थे।

—हे भगवान! सम्भालो तुम्हारा ब्रज डूबा जा रहा है। इन्द्र का कोप बढ़ता जा रहा है यदि तुमने गोवर्धन नहीं धारण किया तो प्रभु न यह ब्रज रहेगा और न ब्रजवासी। प्रभु तुम्हारे ब्रजवासी आज उसी गोरस लीला के प्यासे हो रहे हैं। कहा है प्रभु तुम्हारी बंसी। एक बार फिर से फूंक मारो। प्रभु! अबकी ताण्डव नृत्य की रागिनी फूंक दो। वह देखो प्रभु! कालिन्दी अपने तट का प्रसार करती जा रही है। प्रभु इसमें तुम्हारे ग्वाल-बालों की गेंद पुनः बह चली है, शेष नाग पर चढ़ कर एक बार फिर से निकाल लाओ। तुम तो कह गये थे प्रभु कि समय पर फिर से आऊंगा। देखो, तुम्हारी द्रौपदी की चीर दुःशासन खींच रहा है और तुम मौन हो। राधा बाट जोहते-जोहते मरण अवस्था पर पहुंच गई है, और तुम अब तक पाषाण के समान कठोर बने बैठे हो! प्रभु, देखो कौरवों का पल्ला भारी होता जा रहा है और पांडव वन-वन भटक रहे हैं उनकी क्या सहायता न करोगे?

हरि बाबू और न जाने क्या-क्या बकते रहे। मुन्नू की समझ में कुछ न आया, परन्तु इस दृश्य को देखने वाली थी नीरा और आभा, जो पीछे खड़ी सुन रही थी। दोनों के नयन भरे थे। वहां आने पर नीरा ने कहा—

—देखो, मैं तुमको जब देती हूं तुम मना कर देती हो।

—नहीं नीरा दीदी, मैं डरती हूं कि हम इतना भार तुम्हारे एहसान का सम्भाल भी पायेंगे या नहीं। तीन-चार महीने से तुम सदा 20-25 रुपये से मदद कर रही हो। दो-तीन बार उन्होंने भी मुझसे कहा कि बेचारी नीरा पर हमारा भार पड़ रहा है, यह ठीक नहीं।

—राज से मैं निपट लूंगी।

—क्या निपट लोगी?—राजेन्द्र ने प्रवेश करके कहा।

—नहीं, जब मैं तुम्हारी सहायता करती हूं तो तुम बड़बड़ाते क्यों हो?

आभा वहां से रसोई की ओर चली गई थी। नीरा और राजेन्द्र दोनों एक कमरे में थे।

—नीरा, तुम मेरे लिए इतना कर रही हो और मैं तुम्हारे लिए क्या कर पाया। कुछ भी नहीं। क्या तुम मेरे मुख पर इसी बात का तमाचा मारना चाहती हो?

—राज, मेरे अच्छे राज, मुझे समझने का प्रयत्न करो। मैं इतनी नीच नहीं। यदि हम तुम्हारे बुरे दिन काम आयें, तब हो सकता है कि तुम भी हमारे बुरे दिन में काम आओ।

—तुमको वह दिन कभी न देखने पड़ें।

—मैंने सुना है कि तुमने आरती आदि सब करनी छोड़ दी है। बस किताबें पढ़ते हो या घूमते हो।

—नीरा, अब जीवन में रुचि नहीं रही। बोलो तुम्हीं बोलो, मैंने जीवन में क्या पाया, सब कुछ खोया ही है। फिर ऊपर से दुख का भार। तुमको खोने का दुख, बहिन के खोने का दुख, माँ के पागल होने का दुख बाबू जी की चिन्तित अवस्था का दुख। एक इन्सान उस पर इतने दुख भला भार कैसे सम्भाल पाये।

—तुमको पता नहीं राज, इन्सान जब खोता है तब ही पाता है। रहा दुख, सो तुमने कभी अपना दुख बाँटने का प्रयत्न ही नहीं किया। कभी मुझे और आभा को प्रवेश कराने का प्रयत्न नहीं किया।

—नहीं, नहीं नीरा, तुम दोनों मेरी मंज़िल का दीपक हो। मैं नहीं चाहता कि किसी प्रकार इसमें बन्धन हो। मुझे भय है कि मेरे जीवन के

को, कितने हर रात्रि मे बुझाते हैं। पर आकाश से धरती की ओर गिरने वाले दीप को देख कर भी यदि मानव कुछ न सीख पाये तो क्या कहा जायेगा ?

—नीरा, मैं तुमसे सदा ही हार मानता रहा हू। तुम चाहती हो कि मैं तुमसे सहायता लेता रहूं, आभा से नौकरी कराता चलू और स्वयं बेकार सड़को पर घूमता फिरू।

—नही राज, मैं नही चाहती कि तुम बेकार रहो। पर अब समय गया कि एक कमाये और चार खाये। सबको मिल कर कमाना होगा, तब ही मनुष्य अपनी दैनिक समस्या से छूट सकता है।

—अच्छा देखा जायगा, पहले मेरी नौकरी लग जाये तब।

—नौकरी तुम्हारी लग जाये, यदि तुम इन चक्करो से मुक्त हो जाओ।

—क्या मैं जिस मार्ग का अनुकरण कर रहा हूं वह ठीक नही ? क्या मेरे आदर्श दोषी है ? क्या मैं अपने आदर्श को छोड दू।

—नही राज, आदर्श छोड़ दो। पहले घर को देखो। अपनी आभा को देखो, बाबू जी और मुन्नू को देखो, मा को देखो। उनकी आखों में आखें डाल कर देखो, वे क्या माग रही है ?

—लेकिन इनसे ऊपर हमारे राष्ट्र की कितनी मां, कितने बाप और कितनी स्त्रिया हैं, उनकी आखों मे भी तो आखें डाल कर देखना है।

—पर जो मनुष्य अपने कर्तव्य को पूर्ण नही कर पाया, वह सदा अधूरा है। वह अपने आदर्श के मार्ग में कभी नहीं आगे बढ़ सकता है।

—मैं आजाद साहब से मिलकर इस विषय पर बात करूंगा कि मुझे परिवार देखना चाहिए अथवा राष्ट्र।—राजेन्द्र ने कहा।

—यदि वह समझदार होंगे तो तुमको प्रथम के लिए कहेगे।

—देखा जायेगा।

राज कुछ देर मौन रहा। आभा चौके में से आ गई। मुन्नू कदाचित कोई चीज खा रहा था। आभा ने आकर कहा—

—क्या है, आप दोनों कहने को मित्र बनते हैं, जब मिलेंगे बस झगड़ा। कभी एक-सी राय भी मिलती है ?

—शांति मां की तबीयत कैसी है ?—राजेन्द्र ने कहा।

—ठीक है, बुखार रहता है। तुमसे होता है कि कभी आओ ? बाबू जी ही हैं, वेचारे, देख-रेख करते रहते हैं। तुमको तो अपने से समय ही नहीं मिलता है।—नीरा ने मुस्करा कर कहा।

—नीरा, मेरी समझ में नहीं आता है कि जो कुछ कर रहा हूं वह ठीक कर रहा हूं। मेरे आगे सब कुछ अन्धकार है।

नीरा चली गई। राजेन्द्र को ऐसा लग रहा था कि उसके एक शरीर को दो व्यक्ति खींच रहे हों, एक एक ओर, दूसरा दूसरी ओर। उसको स्वयं समझ में नहीं आ रहा था कि वह किस ओर खिचा जा रहा था। वह दोनों ओर ही जाना चाहता था। क्या यह सम्भव था ? क्या आदर्श और कर्तव्य का समझौता हो सकता है ?

सैंतीस

राजेन्द्र पहले के ही समान था। उसको घर से अधिक लेना-देना नहीं था। वह दिन-दिन भर बाहर रहा करता और लोगों के साथ घूमा करता। शाम को आता, इच्छा होती तो खा लेता और नहीं तो वैसे ही सो जाता। एक दिन प्रतिदिन से कुछ जल्दी आ रहा था, कदाचित रात के नौ बज रहे होंगे। उसने लम्बी पतली संकरी गली में देखा एक व्यक्ति अंधेरे में डबल रोटी बेचते चला आ रहा है। उसने कहा—

—ऐ डबल रोटी वाले।

व्यक्ति रुक गया।

—एक डबल रोटी, एक आने वाली ?

पास गया तब उनके मुख से निकला—बाबूजी······

न्द्र का शरीर कांप उठा। उसके आंखों में आंसू छलक

—बेटा, निर्धनता में मनुष्य को संघर्ष करना पड़ता है।

हरि बाबू ने जब देखा कि उनका खर्चा चलना असम्भव हो गया है, तब उन्होंने सड़क पर 'डबल रोटी' बेचना शुरू कर दिया। पहले जिस दिन आरम्भ किया उन्हें अच्छी तरह स्मरण है कि उनको कितनी ग्लानि हो रही थी। लज्जा के कारण उनका सिर झुका जा रहा था। उनके मुख से जोर से आवाज तक नहीं निकलती। धीरे से होंठ हिलते और उनमें से निकलता 'डबल रोटी' ले लो। जब हाथ में एक पीपा, जिसमें डबल रोटी लेकर निकलते, तब ही अनेक प्रकार की बौछारें भी उन पर होतीं। कोई कहता 'क्यों बड़े बाबू, क्या बुढ़ापे में रुपये जोड़ रहे हो।' कोई कहता 'मालूम होता है कि लड़का निकम्मा है' अर्थात् अनेक प्रकार के ताने सुनने पड़ते। पर एक वह थे जो मुख से दूसरा शब्द न निकालते केवल इसके कि 'डबल रोटी ले लो।' लोगों ने उनकी दशा को देख कर कुछ नहीं तो यही कहना आरम्भ कर दिया था कि बड़े बाबू के दिमाग का पुर्जा खराब हो गया है। उनको स्मरण है जब वह पहले दिन आये थे, उस दिन उनको छः आने का लाभ हुआ। उस छः आने में उन्हें कितनी प्रसन्नता हुई, जैसे कि किसी बालक को जिसको पास होने की आशा न हो और उसे अकस्मात् पता लगे कि वह पास हो गया है। कुछ दिनों बाद वह एक रुपया रात्रि तक कमाने लगे।

राजेन्द्र वहां से चला आया, पर रात भर उसको नींद न आई। उसका अन्तर उसको धिक्कार रहा था। वह तो दिन-दिन भर सड़कों-सड़कों और गली-गली घूमे और बाप उसका डबल रोटी बेचे? उसके सामने उसके पिता की मूर्ति आ गई। कहां पहले वह कितने स्वस्थ थे, मोटे लम्बे एक ही लगते थे और अब क्या रह गये केवल अस्थि-पिंजर, आंखें अन्दर धंसी जा रही हैं। आज से पांच वर्ष पहले और अब में कितना अन्तर आ गया। यह बुढ़ापा है उनका। हर पिता एक इच्छा और आशा करता है कि उसका पुत्र उसको आराम दे। वह विश्राम करे और पुत्र उसको देखे। वह अपना जीवन तब सफल समझता है जबकि देखता है कि उसका पुत्र उसको वृद्धावस्था में सुख दे रहा है। एक वह है। उसके ही कारण आज वह परिश्रम की चक्की में पिस रहे हैं, नहीं तो उनको क्या। उनके

दो-तीन व्यक्ति के रूखा-सूखा खाने के लिए काफी है।

राजेन्द्र की भावना को ठेस लगी। उसने करवट बदली। कदाचित नीरा कहती थी मनुष्य आदर्शों को अपनाते हुए भी कर्तव्य-पथ से विचलित नहीं हो सकता है। जो मनुष्य प्रथम श्रेणी में अपने पग नहीं रख सका, वह आगे और ऊपर कैसे रेंगेगा। जब वह अपना कर्तव्य अपने पिता, मां, भाई और पत्नी की ओर नहीं निभा पाया, तब मार्ग पर क्या चल सकेगा? उसने बड़ा पाप किया है। उसने दूसरी करवट बदली। फिर क्या करे वह। आजाद क्या कहेंगे कि मार्ग के कच्चे हो, इसलिए अधूरे मार्ग से हट गये। पर......पर क्या......उनको, उसकी परिस्थिति व अवस्था का क्या ज्ञान है? राजेन्द्र की दशा एक ऐसे व्यक्ति के समान थी जो कि एक नये नगर के चौराहे पर खड़ा है, और पथ पूछने घबराता हो, संकोच करता हो और साथ में उसे यह भी नहीं मालूम कि किस पथ पर जाना चाहिए। राजेन्द्र ने जब फिर करवट बदली, तब आभा ने पूछा—

—क्यों क्या नींद नहीं आ रही?

—नहीं तो......काफी गर्मी है?

—पंखा झल दूं?

—नहीं.........।

राजेन्द्र नीले नभ पर छितराये हुए मणियों को देख रहा था। काले और सफेद बादलों की ओट से चन्दा आंखमिचौनी खेल रहा था। क्षण भर के लिए जगत रजतमय हो जाता और फिर कालिमा छा जाती।

—सुनती हो।

—क्या है?

—मैं दिल्ली जा रहा हूं, तीन बजे गाड़ी जाती है।

—क्यों...... एकदम कैसे?

—जाना है। बड़ा काम है।

आभा घबरा गई कि इतने [illegible] हो है फिर [illegible] हो कर। उसने कहा—

—नहीं और तो नहीं, कुछ उल्टा-सीधा हुआ तो [illegible] रहूंगी।

लोग ऐसा काम करते और पढ़ते हैं। घर भी चलाते हैं।

—साहब, मैं भी इसी प्रकार पढ़ूंगा।

—ठीक है, अच्छा है दिन भर खाली रहोगे। सुबह दस बजे तक का काम है। फिर इसके बाद यदि तुम चाहो तो मेरे बच्चों को पढ़ा सकते हो। मैं तुमको 20 रु० रुपया महीना दे दूंगा।

—साहब मुझे मंजूर है।

—फिर आज से दोनों काम आरम्भ कर दो?

—'जी' कह कर राजेन्द्र वहां से चला आया। वहां से पत्र लेकर सीधा वह समाचार पत्र के कार्यालय में चला गया। वहां पत्र दिखाते ही उसे काम मिल गया। वहां वितरक विभाग के अध्यक्ष ने कहा—

—राजेन्द्र, तुमको कश्मीरी गेट वाला एरिया मिलेगा।

—साहब, वहां नहीं किसी दूसरे में डाल दीजिये।

—क्यों?—उसने अपनी सुपारी-सी बड़ी-बड़ी आंखें निकाल कर कहा।

—साहब, मैं वहां पर सब-इंसपेक्टर रह चुका हूं?

यह सुन कर सब हंस पड़े। उसकी ऊंची चढ़ी पेन्ट, बाहर निकली कमीज और सिर पर बिखरे बाल को देख कर लोगों को यह शब्द एक उपहास मात्र लगे वे सब जोर से हंस पड़े। उसने कहा—

—अच्छा, कनॉट-प्लेस?

—जी।

राजेन्द्र उस दिन से घर पर जाने लगा। वह उन सड़कों पर, जिन पर वह किसी समय एक सब-इंसपेक्टर के पद के गर्व से सीना निकाल कर अपने मित्रगणों के साथ घूमा करता था। अब वह साइकिल के पीछे अखबार लादे इधर से उधर जाता था। कभी इस फ्लेट पर चढ़ता वहां 'अखबार वाला' कह कर डाल देता कभी उस दुकान पर जाकर 'अखबार साहब' कह कर अखबार डाल देता। जब वह पहले दिन मेट्रो में अखबार डालने गया था, उसके सामने वह दृश्य घूम गया, जब कि वह वहां एक ग्राहक की हैसियत से गया था और होटल के बैरे झुक-झुक कर सलाम करते थे। उसकी आंखें सामने की उस कुर्सी पर टिक गईं, जिस पर बैठ

कर उसने चाय पी थी। उस समय क्या उसने अनुमान किया था कि वह इस होटल मे एक अखबार वाला भी बन कर आवेगा।

राजेन्द्र को पहले तो संकोच हुआ फिर धीरे-धीरे वह बड़ी निपुणता से काम करने लगा था। दस बजे से पहले वह अखबार बांट आता था। फिर इसके बाद वह घर आ जाता, खा-पीकर बैठ कर पढ़ता। सन्ध्या समय आचार्य जी के बच्चों को पढ़ा कर जब लौटता, तब वह कुछ देर अवश्य पुस्तकालय मे बैठता। रात को लौट कर फिर 11 बजे तक पढ़ता रहता। उसकी दिनचर्या बिल्कुल बदल गई थी। वह कभी लम्बी टांगें पसार कर अवकाश न लेता। चाची कभी-कभी उससे कहती कि कुछ आराम भी कर ले, दिन भर कोल्हू के बैल के समान जुता रहता है। पर वह सदा सुनी-अनसुनी कर देता।

एक दिन वह अखबार सुबह पांच बजे ले रहा था, उसका एक साथी बोला—

—क्यों रे रज्जू, कितना बनता है?

—क्या राधे।

—अबे ऊपरी का।—राधे ने अपनी बीड़ी जलाते हुए कहा।

—समझा नही! इसमें भी क्या ऊपरी? क्या बनता है?

—यार, हम तो समझे थे कि तुम सोले पड़े होगे, पर क्या पता था कि जिन्दगी भर पापड बेलते आए हो?—राधे ने हंसकर कहा।

—राधे, क्या पहेलियां बुझा रहा है?

—अबे, जब मैं इस एरिया में था तो तीस-चालीस ऊपरी पीट लेता था, अपने मुंह से धुंआ निकालते उसने कहा।

—कैसे?

—अरे बधे ग्राहक हैं। उनको जाते समय अखबार देते जाओ और लौटते लेते आओ, उनको दूसरे को दे दो। एक म [illegible] मिलता था।

—नही राधे, मैं नही क

—तब क्या तेरा

—मालूम

—नहीं राधे।

—फिर ?

—पढ़ाता हूं बच्चों को, हराम का पैसा मुझे लगता नहीं।

—लगता नहीं, वही बात की भक्तों वाली, अबे आज कल लोग हजारों निगल कर हजम कर जाते हैं और ऊपर से बगुला भगत बन जाते हैं और तू है जो बीस-पच्चीस में ही घबराता है।—बीड़ी का एक लम्बा कश लेकर उसने बीड़ी फेंक दी।

—नहीं राधे, मुझसे नहीं तू अपना बंडल उठा।

—तेरी मर्जी, पर मैं तेरे भले की कह रहा हूं। तेरे समान सीधे का आज की दुनिया में कोई स्थान नहीं है। यहां वही जी सकता है जो चार सौ बीस करे ; [illegible] कौन। इधर का उधर और उधर का इधर करे ; [illegible] कर अपना उल्लू सीधा करे।—ऐसे ही [illegible] राजेन्द्र के मस्तिष्क में राधे के यह स्वर

—अच्छा।
—कितने कमा लेते हो?
—एक रुपया, बारह आने कभी इससे ज्यादा।
—सुबह बेचते हो?
—नहीं शाम ही शाम।
—दिन भर क्या करते हो?
—मां पढ़ाती है।
—कहां रहते हो?
—राम नगर।
—तुम्हारे पिता क्या करते है?
—पंजाब से आते समय खो गये।
राजेन्द्र बालक को दिया गया भुलावा समझ गया।
—मां किसके पास रहती है?
—बड़ा भाई।
—क्या करता है?
—फिटर का काम सीख लिया है।
—कितना बड़ा है?
—तुम्हारे बराबर।
राजेन्द्र उसको देखता रहा। वह उसके भाई मुन्नू के समान लग रहा था। वह सड़क पर से कई बार निकला कई छोटे बच्चे अखबार बेचते मिलते थे पर उसका ध्यान उनकी ओर कभी आकृष्ट न हुआ। पर न जाने इसके करुणा भाव जो उसके मुख पर थे, उसने उसके हृदय पर क्या जादू कर दिया।
—बीड़ी पियेगा।
—नहीं, मां डाटती है।
—ठीक है, मैंने तेरा दिल लेने के लिए पूछा था।
—कुछ खायेगा भूख लगी है?
—नहीं।
—अरे खा ले तू भी याद रखेगा कि किस रईस से पाला पड़ा था।

—मां से तो नही कहोगे ?

—चल बे पागल।—मुस्कराकर राजेन्द्र ने कहा।

यह उसके मुख पर प्रथम बार मुस्कराहट कई महीनों बाद आई थी। उसका हृदय यह कह रहा था कि इस अबोध बालक को हृदय से लगाकर जी भर कर रोये। राजेन्द्र उसको लेकर पास के सामने के 'ढावे' में ले गया। वहां दो थाली खाना और मिठाई मंगवाई। उसने कहा—

—क्यों कर रहे हो, इतना।

—अरे इतने दिन बाद तो जी चाहा है कि दिल भर कर खाऊं और तू मना कर रहा है।—राजेन्द्र ने कुछ देर मौन रहने के बाद कहा—

—कितने दिन से काम कर रहे हो ?

—साल हो गया।

—अगर तुम्हारे साथ कोई दूसरा रख दिया जाये तो तुम उसको भी सिखा दोगे।

—क्यों ?

—मैं पूछता हूं।

—अगर तुम कहोगे तो, नहीं और को नहीं। मेरा घाटा भी तो होगा ?

—घाटा मैं भरूंगा।

—अच्छा देखा जायेगा।

—क्या नाम है तुम्हारा ?

—अमृत।

राजेन्द्र को नाम सुनकर अपने अमृत का ध्यान आ गया। वह खाना न खा सका। क्षण भर के लिए उसकी स्मृति सजीव होकर उसके आगे घूम गई।

—क्यों, हाथ क्यों रोक दिया, क्या पेट भर गया ?

—हां।

—तब इतना क्यों मंगवा लिया। मेरी मां देखती इस तरह से छोड़ते तब खूब चुनकुट्टी करती।

—तू मेरा दोस्त बनेगा ?

—क्या कहते हो, तुम इतने बड़े और मैं इतना छोटा !

—तो क्या हो गया ?

—क्यों ?

—मेरा भी एक अमृत मित्र था। आज पता नहीं वह कहां पर है। मैं तुमको देख कर उसकी याद सदा ताजी कर लिया करूंगा।

—क्या तुम्हारा बहुत पक्का दोस्त था ?

—हां जान से भी अधिक, बहुत ढूंढ़ने का प्रयत्न किया पर नहीं मिला।

—तब मैं कर लूंगा, लेकिन सच कहते हो न ?

—हां।

राजेन्द्र ने उसे गले से लगा लिया। उसको ऐसा लग रहा था जैसे अमृत लघु रूप धारण करके उसके हृदय से लग रहा है। उसकी आंखों में आंसू आ गये। 'अमृत' उसके मुख से निकला।

—अरे इतने बड़े होकर रोते हो।

राजेन्द्र उसे वहां छोड़ कर घर की ओर चल दिया। उस छोटे अनु-हार वाले की सजीव मूर्ति उसके सामने थी। उसके पैडिल के समान उसके विचार भी घूम रहे थे। साइकिल आगे बढ़ती जा रही थी और वह सोया-सा आगे बढ़ता जा रहा था।

अड़तीस

निशा का तिमिर संकुचित होकर कन्दराओं और गुफाओं में जा छिपा। अंधकारमय विश्व फिर से आलोकित हो उठा। रजनी अपने इन्द्रनील मदिर कर से गई थी। नीले नभ में चित्रकार ने अरुण तूलिका घुमा दी। उसका चित्र अधूरा ही था। विहगों ने मृदु गान कर उसका स्वागत किया। वे स्वप्न नीड़ से पंख फड़फड़ाकर उड़ बैठे। पवन मधुर स्वर से भौंरों की तान अलाप रहा था। कुसुम डालियों पर तान के साथ नृत्य कर रहे थे,

—मां से तो नहीं कहोगे ?

—चल बे पागल।—मुस्कराकर राजेन्द्र ने कहा।
यह उसके मुख पर प्रथम बार मुस्कराहट कई महीन
उसका हृदय यह कह रहा था कि इस अबोध बालक को
जी भर कर रोये। राजेन्द्र उसको लेकर पास के साम
गया। वहां दो थाली खाना और मिठाई मंगवाई। उसने

—क्यों कर रहे हो, इतना।

—अरे इतने दिन बाद तो जी चाहा है कि दिल भर
तू मना कर रहा है।—राजेन्द्र ने कुछ देर मौन रहने के बा

—कितने दिन से काम कर रहे हो ?

—साल हो गया।

—अगर तुम्हारे साथ कोई दूसरा रख दिया जाये तो
सिखा दोगे।

—क्यों ?

—मैं पूछता हूं।

—अगर तुम कहोगे तो, नहीं और को नहीं। मे
होगा ?

—घाटा मैं भरूंगा।

—अच्छा देखा जायेगा।

—क्या नाम है तुम्हारा ?

—अमृत।

राजेन्द्र को नाम सुनकर अपने अमृत का ध्यान
खा सका। क्षण भर के लिए उसको
गई।

—क्यों, हाथ क्यों रोक

—हां।

—तब इतना

तब खूब

—तू

भ्रमर ने अपना पंचम स्वर घोल दिया। किसी ने उषा के प्रथम प्रहर में ही सब कुछ लुटा दिया। कोई कह उठा यौवन लूटकर किधर चला अलि, रुक तो जा।

पर नीरा को क्या लेना इन सबसे। उसके लिए प्रतिदिन उषा आती दिन चढ़ता, दिनकर ढलता, संध्या की ज्वाला जलती और फिर काली रजनी छा जाती। न जाने कितने समय से यह चक्र चल रहा था। पर उसने कभी उसकी ओर ध्यान न दिया। पर आज न जाने उसका हृदय एकांत मे बैठकर क्यों गाने का कर रहा था। वह मन्द स्वर मे वेदनापूर्ण पन्त का यह गीत गा रही थी :

वाध दिये क्यों प्राण प्राणों से,
तुमने डर अनजान प्राणो से।

हृदय से निकले हुए इस क्रदनमय स्वर में पापाण को भी पिघलने की शक्ति होती है। पर वहां कहा वह पापाण, जिसको पिघलाने का वह प्रयास करती। वह अकेली और बिल्कुल अकेली उस कमरे मे थी, जिसमें उषा का प्रकाश भी न झांक सकता था।

गाते-गाते जोर की खांसी की आवाज सुन कर वह रुक गई। उसने तानपुरा खाट पर रखा पर उसके तारों मे अब भी कम्पन था। वह वहां से उठ कर शांति के कमरे की ओर चल दी। शांति बिस्तरे पर लेटी थी। लोहार की धोंकनी के समान उसका वक्षस्थल धड़क रहा था। धीरे-धीरे खांसी का वेग कम हुआ। शान्ति ने प्रयत्न करके कहा—

—क्यों रज्जू आया?

—नही मां।—आकुलता से नीरा ने कहा।

—पत्र आया?

—नही।

—गा तू रही थी?

—हां।

—अच्छा गीत था, फिर से गा।

नीरा अधूरे गीत को गाने लगी। उसकी पीठ मां की ओर थी। गाते-गाते उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे। इतने में द्वार पर थाप पड़ी। नीरा

—नहीं, नहीं ठीक है।—राजेन्द्र उसके पास की चारपाई में बैठने लगा।

—यहां नहीं, दूर बैठो।

नीरा ने स्टूल रख दिया पर राजेन्द्र उस पर न बैठा।

—मां से क्या बच्चा दूर बैठ सकता है?

—पर मां भी नहीं चाहती है कि जिस चिता में वह जले, उसमें उसका बेटा भी जल जाये।

—शांति मां, कैसी अशुभ बातें निकालती हो।

नीरा जा चुकी थी।

—राज बेटा, अब मैं अधिक दिन नहीं बचूंगी। देखते नहीं मुझे बुखार रहते दो महीने हो गये। खांसी आती है, कल खून भी आया था। बेटा मैं मरने से नहीं डरती, पर नीरा एक अबोध बच्ची है इसको इस जगह में छोड़ते हुए डर लगता है।

—शांति मां, तुम्हें कुछ नहीं हुआ ठीक हो जाओगी तुम्हारा वहम है।

राजेन्द्र ने जब पहले पहल शांति को देखा था, उस समय कोई उसको देखकर यह नहीं कह सकता था कि यह नीरा की मां है। उसकी बड़ी बहन-सी लगती थी। आखिर नीरा को इतना सौन्दर्य मिला भी तो कहां से? आज वह शांति की देह देख रहा था। एक साठ साल की बूढ़ी के समान लग रही थी गालों की हड्डी उठी हुई, आंखें अन्दर को धंसी हुई, होंठ फटे तथा सूखे हुए। वह नारी का शरीर नहीं था बल्कि कंकाल था। अब क्या शेष था उसमें? केवल सांसों का आना-जाना शेष था। उसको देखकर कौन कह सकता था कि यह स्त्री भी कभी रूपराशि रही होगी। राज अपलक नयनों से शांति को देखता रहा।

राजेन्द्र बाहर आया। बाहर आकर देखा तो नीरा चूल्हा फूंक रही ... राजेन्द्र ने कहा—नीरा बंद करो, चूल्हे में पानी डालो और मेरे साथ ... अस्पताल। मां को आज दिखाना है।

... अच्छा।

... । जल्दी से धोती बदल तैयार हुई। तब तक राजेन्द्र तांगा ले

आया। शान्ति के बहुत मना करने पर भी वह न माना और उसे लेकर
अस्पताल पहुंचा। वहां डॉक्टर ने परीक्षा करके कहा—इनको नूरी गेट
के पास वाले विभाग में ले जाइये वहां इनकी परीक्षा होगी।

राजेन्द्र समझ गया और शान्ति भी समझ गई बोली—यहां एक
जीती-जागती लाश के लिए फिरते हो। जब तक सांस है पड़े रहने दो,
फिर मरी पर रोना।

राजेन्द्र इन बातों में नहीं आने वाला था। वह नूरी गेट के पास तपे-
दिक विभाग में ले गया। वहां डॉक्टर ने ठीक तरह से परीक्षा की। इसके
बाद उन्हें कहा—

—इनके खून और थूक की जांच करनी होगी।

—जैसी आपकी इच्छा, इनको भर्ती करना होगा?

—नहीं, अभी नहीं, वैसे अभी जगह भी नहीं है। समय-समय पर
आना होगा।

राजेन्द्र डॉक्टर को अलग ले जाकर बोला—

—क्यों डॉक्टर साहब, क्या इनको तपेदिक है?

—हां, शक होता है। इनको मालूम होता है कोई सोचने की बीमारी
है अथवा इनके मस्तिष्क पर कोई गहरा आघात पहुंचा है। इनको जीने की
इच्छा न होना यह बात प्रकट कर रही है। इसी चिन्ता की ज्वाला ने
इनको इस प्रकार से ग्रसने का जाल रचा है।

—नीरा क्यों, तुमको कुछ पता है?

—नहीं, क्यों डॉक्टर साहब, मां बच तो जाएगी?

—क्यों नहीं। इतने लोग बचते हैं कि नहीं। फिर परीक्षा तो हो
जानी चाहिए।

राजेन्द्र शान्ति को लेकर घर आया। नीरा फफक कर रो उठी।
राजेन्द्र ने कहा—

—देखो नीरा, यदि तुमने अपना साहस छोड़ा तो हम दोनों देखते
रह जायेंगे और ने [illegible] र में डूबती जायेगी। नीरा, तुम घबराओ नहीं
फिर अभी [illegible] नहीं लगा है देखो क्या होता है।

राजेन्द्र [illegible] के चबूतरे पर रखा कि जूते के खुले फीते

बाग़ में। अन्दर की इस बातचीत ने उसको अधिक देर तक रोक लिया। अन्दर दो औरतें इस प्रकार से बातचीत कर रही थीं मालूम पड़ता था दोनों में काफ़ी दूरी थी इसी कारण उनके ऊंचे स्वर की आवाज़ राजेन्द्र के कानों में पड़ रही थी। एक ने कहा—

—अरे किसका ज़िक्र कर रही हो?

—वही शांति का, जो स्कूल में पढ़ाती है।

—क्या हुआ?

—होना क्या, बेटी तो फंसी थी हरि बाबू के लड़के से और खुद भी फंसी है हरि बाबू से। खूब दोनों का आना-जाना है। हरि बाबू का क्या, उसकी औरत तो पागल ही है, गया नहीं तो शांति सही। आखिर बेटे ने इतने कारनामे सीखे हैं किससे? बाप से।

—क्या कह रही हो? वह बड़े भक्त आदमी हैं। पीपल मंडी में मेरे देवर और देवरानी रहते हैं, वे तो उनकी बड़ी तारीफ करते रहते हैं।

—अरे भगत! बगुला भगत!

—हाय-दैया, कलयुग है कलयुग क्या तू सच कह रही है?

—और क्या झूठ। यहां तो मोहल्ले भर में इसकी खूब चर्चा हो रही है।

राजेन्द्र को यह बात सुनकर ऐसा क्रोध आया कि वह दोनों का जाकर मुंह नोच ले, पर वह खून पीकर रह गया। वहां से वह घर आया। रास्ते भर उसका मस्तिष्क इस विचार से घूम रहा था। क्रोध के कारण उसके पग भी ठीक न पड़ रहे थे। वह जानता था यद्यपि इस बात में कोई सत्य नहीं फिर भी क्या करे। वह कहने वालों का मुंह नहीं रोक सकता है।

आभा ने उसको देखकर कहा—

—क्यों क्या कहा डॉक्टर ने?

—शांति मां को 'गेलोपिंग टी० बी०' (Gellopping T. B.) है।

—यह क्या होती है?

—वेग से दिल बढ़ता जा रहा है। डॉक्टर कहता है कि वह दो महीने बच जायें तो बहुत है।

—फिर? नीरा ने प्रवेश करके कहा। उसने उनकी अन्तिम बात

ली थी ।

—नीरा !

—मुझ से कुछ न छिपाओ राज, क्या माँ नहीं बच सकती है ? क्या जिसका हाथ मैं पकड़ूंगी, वही मुझे छोड़ जायेगा ? मैंने क्या पाप किया है भगवान !—नीरा फफक कर रो उठी ।

—नीरा, जब तक तुम्हारा राज जिन्दा है, तब तक वह मानि माँ की मौत से लड़ेगा । मैं उनके लिए सब कुछ करूंगा ।

—इसके लिए धन की आवश्यकता होगी ?

—धन परिश्रम से मिलेगा । मैं कमाऊंगा, तुम कमाओगी, आभा कमायेगी और मुन्नू कमायेगा, क्या इतने लोगों की आय भी पूरी नहीं होगी ?

—फिर ? आभा ने कहा ।

—फिर क्या, यहां तो तुम जानती ही हो पहुंच से काम चलता है । दिल्ली में एक इर्विन अस्पताल के डॉक्टर हैं । उनके यहां मैं अखबार देने जाता हूं । वह मेरे ऊपर बड़े मेहरबान हैं । मुझे आशा है कि मेरी वह अवश्य सहायता करेंगे ।

—अखबार देने ? नीरा ने कहा ।

—हां नीरा, मैंने तुमको इसलिए नहीं बताया कि यदि मैं तुमको बता दूंगा तब तुम लोग मेरे से घृणा करने लगोगी । मैं अखबार बांटने का काम करता हूं । इसी संकोच से मैंने तुमको पत्र नहीं लिखा था । राजेन्द्र ने दबे स्वर में कहा ।

—राजेन्द्र, जो तुम कर रहे हो मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है और साथ में गर्व भी है कि तुम और युवकों के समान बेकार नहीं । इसमें लज्जा की क्या बात है ? लज्जा सरकार को आनी चाहिए, जिसके कारण बेकारी इसकी चरम सीमा तक पहुंच गई है ।—नीरा ने कहा ।

[illegible] सामने बैठी थी और यह सबकुछ सुन रही थी [illegible]—

[illegible] गया ?

आई और उसने द्वार बन्द किया।

—बाबू जी, मैं मुन्नू, नीरा और शान्ति मां को लेकर दिल्ली जा रहा हूं।

—बहू को भी लेते जाओ।

—सोच तो मैं भी यही रहा हूं।

—यहां अकेले ठीक है। शान्ति को ले जाओ वह जी जायेगी। राजेन्द्र समझ गया कि उसके पिता से भी वह उड़ी बात छिपी नहीं।

—बाबू जी, मेरा दिल नहीं मानता है कि आपको अकेले छोड़कर जाऊं।

—अरे, तुम्हें इससे बढ़कर और कर्तव्य का पालन करना है।—हरि बाबू ने राजेन्द्र की पीठ थपकते हुए कहा।

—बाबू जी, मैंने रमेन्द्र से कह दिया है, वह समझदार लड़का है, घर आकर देख जाया करेगा। फिर यदि किसी बात की आवश्यकता हो या कोई बात हो तो आपको मेरी कसम जो आप मुझको न लिखें। आगरे से दिल्ली है ही कितनी दूर, तीन-चार घण्टे मे पहुंच सकता हूं।

—बेटा, तुम जाओ मैं इतना दुर्बल नहीं। हां, देखो, तुमको रुपये भेजने की जरूरत नहीं। शान्ति मां का इलाज अच्छी तरह कराना हम दोनों के लिए यहां 90 रुपये काफी हैं।

—बाबू जी, मैं अन्धकार में पांव बढ़ा रहा हूं।

—भगवान तुमको मदद देंगे।

राजेन्द्र कुछ न बोला। चलते समय जब उसने गंगी के पांव छुये तो उसे क्या पता कि क्या हो रहा है। उसने कुछ न कहा। उसकी आंखों से आंसू छलक आये, फिर भी उन्होंने उन्हें गिरने नहीं दिया और राजेन्द्र को अपने हृदय से लगा लिया। उनका जी नहीं चाह रहा था कि उसको छोड़ दें। धीरे-धीरे उनके कर बन्धन ढीले पड़ने लगे। मुन्नू का मुंह उन्होंने कितनी बार चूमा। जब तक उन लोगों का तांगा आंख से ओझल न हो

चालीस

द्वार पर थाप पड़ी, अन्दर से आवाज आई 'कौन' पुकारने वाले ने कहा, 'मैं'। द्वार खुला खोलने वाले ने कहा—

—कौन, अमृत ?

—हां।

दोनों मित्र एक-दूसरे को हृदय से लगाकर मिले।

—अमृत, आज मेरा जी चाहता है कि तुमको इसी प्रकार और ही पकड़े रहूं जिससे कभी न छूटे।

राजेन्द्र ने कहा—'आओ, अन्दर आओ।'

अमृत ने अन्दर प्रवेश किया। राजेन्द्र ने कहा—आभा, अरे नीरा देखो अमृत आया।

—नीरा भी यहीं है ?

—हां।

—मेरे [illegible] साथ रहती है।

—मुझे तु[illegible]मसे यही आशा थी। यह कौन है ?—आभा की ओर संकेत करके अमृत [illegible]क[illegible]हा।

—आभ[illegible]री पत्नी।

—तुम्हा[illegible]विवाह नीरा से नहीं हुआ ? अमृत ने धीरे स्वर में कहा।

—हां, पर [illegible]ही भोली है, दूसरी होती तो ईर्ष्या से जलकर भुन जाती। इसी कारण आज मेरे हृदय में इसने एक पत्नी का स्थान पा लिया है और मैं इसको पति का प्रेम देने मे सफल हुआ।

आभा इतनी देर में पास आ चुकी थी, हाथ में दो प्याले चाय के थे। अमृत ने उसको देखकर कहा—

—नमस्ते भाभी ?

—आभा, मेरा यह जिगरी दोस्त अमृत है, जिसका मैं सदा तुमसे वर्णन किया करता था।

आभा ने हाथ जोड़कर नमस्ते की।

—नमस्ते अमृत !—नीरा ने कहा।

—नमस्ते।

—कब छूटे ?

—तीन दिन हुए।

अमृत ने नीरा को देखा। पहले उसने उसे खिले पुष्प के समान देखा था, जिसके सुरभित एक नहीं अनेकों भवरे टूटे पड़ते थे, आज वही एक कुम्हलाये पुष्प के समान थी। कहां है उसके अधरों की मुस्कान, कहां गई कपोलों की लालिमा, कहां गये उसके चंचल नयन ? अमृत का हृदय भर आया। वह बहुत कुछ कहना चाहता था, पर कुछ न कह सका।

—बहुत बदल गई ?

—समय और परिस्थिति किसको नहीं बदल देती।

—पर मनुष्य चाहे तो समय और परिस्थिति को बदल सकता है।

—जैसे तुम, वहां सूट-टाई पहनते थे और यहां खद्दर का पाजामा और कुर्ता।—नीरा ने कहा और वह फिर मुस्कराई।

—अच्छा है अमृत, तुम आ गये, हम सब अब साथ-साथ रहेंगे, साथ-साथ अपने दुःख और कठिनाई से संघर्ष करेंगे।—राजेन्द्र ने कहा।

—पर मैं विवश हूं राजू, मैं आज शाम को आजाद साहब के साथ हैदराबाद जा रहा हूं। मैंने उनका ही दामन पकड़ा है।

—अमृत ! राजेन्द्र ने कहा।

साहब, जिनको मैं पिता के समान मानता हूं और वह मुझको पुत्र के समान मानते हैं। मैं तुमसे सदा मिलता रहूंगा।

राजेन्द्र को वह दिन स्मरण आ गया जबकि वह अमृत के समान उस मार्ग पर आ रहा था और नीरा उसको रोक रही थी। उसने कहा—

—मैं भी तुम्हारे साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर चलता, पर तुम तो जानते हो कि मैं किस बंधन में बंधा हूं।

—अच्छा तो चल रहे हैं। एक घंटे बाद हमको यहां से चले जाना है। एक-दो महीने बाद लौटूंगा फिर तुमसे मिलूंगा। मुझे चाचा कब बनवा रहे हो भाभी ?—अमृत ने मुस्करा कर कहा।

आभा लजा गई। उसका मुख लज्जा से लाल हो गया।

—शीघ्र ही—नीरा ने कहा।

—अच्छा, अब की मैं आऊं तब तक न।

—हां-हां—नीरा ने कहा।

अमृत वहां अधिक देर न टिक सका वह चलने लगा। राधिका और श्री बाबू रोकने लगे। अमृत ने कहा—

—चाची, मैं फिर आऊंगा। मैंने तुमको तुम्हारी अमानत सही-सलामत सौंप दी है।

अमृत बाहर निकला। राजेन्द्र, नीरा, आभा, राधिका, श्री बाबू सब बाहर खड़े उसको देख रहे थे। सबकी आंखों में आंसू थे। वह ऊंचे-नीचे मार्ग पर बढ़ा चला जा रहा था। वह काली रजनी के तिमिर में खो गया। उसके पग बढ़ते जा रहे थे, कितनी दृढ़ता थी उनमें। अन्धकारपूर्ण मार्ग में उसका पथ-प्रदर्शक कर रहे थे अंगणित नभ के तारे।